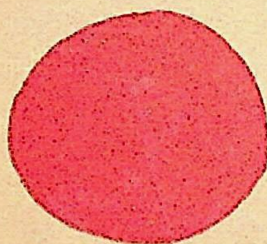
डा. महावीर सरन जैन



परिनिष्ठित हिन्दी का रूपग्रामिक अध्ययन

परिनिष्ठित हिन्दी का रूपग्रामिक अध्ययन

●

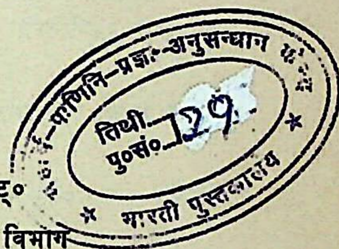
(जबलपुर विश्वविद्यालय की प्रथम डी० लिट्० उपाधि के लिए
स्वीकृत "परिनिष्ठित हिन्दी का वर्णनात्मक विश्लेषण"
शीर्षक शोध-प्रबंध का द्वितीय खण्ड)



परिनिष्ठित हिन्दी का रूपग्रामिक अध्ययन

•

डॉ० महावीर सरन जैन
एम० ए०, डी० फिल्०, डी० लिट्०
स्नातकोत्तर हिन्दी एवं भाषाविज्ञान विभाग
जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर



लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-१

लोकभारती प्रकाशन
१५-ए, महात्मा गांधी मार्ग
इलाहाबाद-१ द्वारा प्रकाशित

प्रथम संस्करण
१९७८

सम्मेलन-मुद्रणालय
प्रयाग द्वारा मुद्रित

मूल्य : २५.००

प्राक्कथन

सन् १९६७ ई० में जबलपुर विश्वविद्यालय की प्रथम डी० लिट्० उपाधि के लिए स्वीकृत "परिनिष्ठित हिन्दी का वर्णनात्मक विश्लेषण" शीर्षक शोध प्रबंध का यह द्वितीय खण्ड है। इस खण्ड में हिन्दी के परिनिष्ठित स्वरूप का वर्णनात्मक पद्धति से रूपग्रामिक अध्ययन किया गया है।

उपर्युक्त शोध प्रबंध को मैंने विश्वविद्यालय में परीक्षणार्थ जुलाई १९६६ ई० में प्रस्तुत किया था।

शोध प्रबंध के परीक्षक डॉ० बाबूराम सक्सेना, डॉ० एस० एम० कत्रे एवं डॉ० उदयनारायण तिवारी थे।

शोध प्रबंध के ऐतिहासिक महत्त्व एवं परीक्षण-प्रतिवेदनों को कदाचित् दृष्टि में रखकर विश्वविद्यालय ने इसके प्रकाशनार्थ अनुदान दिया है। इसके लिए मैं विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

प्रेस कापी तथा अनुक्रमणिका तैयार करने में मेरे जिन विद्यार्थियों ने मेरी सहायता की है उनमें डॉ० रामलखन गुप्त तथा श्री रामायण प्रसाद गर्ग एम० ए० मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

"दो शब्द" के अन्तर्गत वस्तुतः विश्वविद्यालय में परीक्षणार्थ प्रस्तुत शोध प्रबंध की प्रारम्भिक भूमिका है।

मूल शोध प्रबंध में 'मार्फ' के लिए 'पद', 'मार्फीम' के लिए 'पदग्राम' तथा 'एलोमार्फ' के लिए 'सहसपदग्राम' शब्दों का प्रयोग किया गया था। प्रस्तुत पुस्तक में इनके लिए क्रमशः 'रूप', 'रूपग्राम' तथा 'सहरूपग्राम' शब्दों का प्रयोग किया गया है किन्तु कहीं-कहीं प्रूफ की असावधानी के कारण 'पद', 'पदग्राम' तथा 'सहपदग्राम' शब्द भी मुद्रित हो गये हैं। पाठकों से प्रार्थना है कि इनको सुधार कर पढ़ने की कृपा करें।

—महावीर सरन जैन

दो शब्द

प्रयाग विश्वविद्यालय से डी० फिल्० उपाधि के लिए हिन्दी के पश्चिमी क्षेत्र की दो प्रमुख बोलियों—ब्रजभाषा एवं खड़ीबोली—के संक्रान्ति-क्षेत्र—'बुलन्दशहर एवं खुर्जा तहसीलों'—की बोलियों का भाषाशास्त्रीय अध्ययन करते समय ही मैंने परिनिष्ठित हिन्दी का विश्लेषण करने का संकल्प कर लिया था तथा सामग्री संकलन का कार्य आरम्भ कर दिया था। मुझे भाषाशास्त्र के विविध ग्रीष्मकालीन स्कूलों एवं शरद्कालीन अधिवेशनों में भाग लेने एवं वहाँ देश-विदेश के विद्वान् भाषाशास्त्रियों के सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सबने इस बात की पुष्टि की कि परिनिष्ठित हिन्दी का आधुनिक भाषाशास्त्रीय सिद्धान्तों पर अवलम्बित विश्लेषण होना चाहिए तथा परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप में मुझे तत्सम्बन्धित दिशा में कार्य करने के लिए प्रेरित किया। मैं इससे अवगत था कि भाषा के सम्पूर्ण स्तरों का विश्लेषण-कार्य अत्यंत दुस्तर एवं गहन है। कुछ अनुसंधित्सुओं ने इधर भाषा के किसी एक पक्ष को लेकर पी-एच० डी० एवं डी० लिट्० उपाधि के लिए कार्य किए हैं और उन सबका अपनी-अपनी दृष्टि से महत्त्व है। मैं भी भाषा के किसी एक पक्ष पर कार्य करना चाहता था, किन्तु गुरुजनों एवं मित्रों का परामर्श एवं आग्रह रहा कि मैं परिनिष्ठित हिन्दी का ध्वनि-ग्रामिक, ध्वनिग्राम-क्रम-गठनात्मक, व्युत्पन्न प्रकृति, विभक्ति-विचार, वाक्यांश, एवं वाक्य-विन्यासीय, सभी पक्षों एवं स्तरों का विश्लेषण करूँ, जिससे सम्पूर्ण भाषा का गठन स्पष्ट हो सके। 'मध्यम मार्ग' को अपना कर, मैंने 'परिनिष्ठित हिन्दी का वर्णनात्मक विश्लेषण' विषय की विशालता को ध्वनिग्रामिक एवं रूपग्रामिक अध्ययन की सीमा में आबद्ध किया है।

हिन्दी में विधेय रचना के समुचित विश्लेषण के बिना वाक्यांश (Phrase) का अध्ययन सम्भव नहीं है। 'काल' एवं 'अर्थ' की अभिव्यक्ति क्रिया-वाक्यांशों से ही होती है। इसी को दृष्टिपथ में रखकर मैंने रूपग्रामिक विश्लेषण के पश्चात् वाक्यांश-अध्ययन किया है। रूपग्रामिक संरचना से उपवाक्य एवं वाक्य तक पहुँचने के लिए यह अध्ययन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। वाक्यांश-अध्ययन करने से यद्यपि मेरे अध्ययन की सीमा का अतिक्रमण हो गया है, तथापि इससे रूपग्रामिक संरचनाओं का स्वरूप बिल्कुल स्पष्ट हो गया है तथा उपवाक्य एवं वाक्य-विचार की नींव तैयार हो गयी है।

मैंने अपने विवेचन एवं निष्कर्षों को सूत्रवत् शैली में अभिव्यक्त किया है।

इस प्रवन्ध के १. भाग को डा० धीरेन्द्र जी वर्मा एवं डॉ० ए० एन० उपाध्येय, १.१.१ भाग को डा० जगदेवसिंह चौधरी तथा १., २. एवं ३. भाग को डॉ० हीरालाल जी जैन ने पढ़कर अपने सुझाव दिए। इनके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ।

सामग्री का विश्लेषण करने के दौरान, मैं अपने जिन मित्रों के मतों एवं विचारों से लाभान्वित होता रहा हूँ, उनमें डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया (अलीगढ़), श्री लक्ष्मीनारायण मित्तल (लन्दन), डॉ० रमेशचन्द्र महरोत्रा (सागर) आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। वाक्यांश अध्ययन वाले भाग की सामग्री का विश्लेषण करते समय डॉ० रामस्वरूप शर्मा (आगरा) ने मेरी सहायता की है। डॉ० एम० वी० श्रीधर (पूना) ने काइमोग्राफीय चित्रों की छाया चित्र प्रतियाँ बनवा-कर अनुगृहीत किया है।

डॉ० माताप्रसाद गुप्त, निदेशक, क० मु० हिन्दी तथा भाषा-विज्ञान विद्या-पीठ एवं डॉ० पद्मचन्द्र अग्रवाल, रजिस्ट्रार, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने अपने-अपने संस्थानों के पुस्तकालयों का अवलोकन करने की अनुमति प्रदान की।

श्री संतोषकुमार अग्रवाल (आगरा) ने अपना ही कार्य समझकर इसका टंकन किया है। वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं।

श्रद्धेय गुरुवर डॉ० उदयनारायण तिवारी के अमूल्य परामर्शों के लिए मुखर कृतज्ञता ज्ञापित कर मैं अपना भार हल्का करना नहीं चाहता। साहित्य के साथ-साथ भाषाशास्त्र के पथ पर बढ़ना उन्हीं के आह्वान का प्रतिफल है।

—महावीर सरन जैन

प्रस्तुत खण्ड की भूमिका

भाषा के परिनिष्ठित स्वरूप का वर्णनात्मक विश्लेषण

भाषा-तत्त्व चिन्तकों का एक वर्ग किसी भाषा के परिनिष्ठित स्वरूप के वर्णनात्मक विश्लेषण के प्रति प्रश्नवाचक चिह्न लगाता है। उस वर्ग का यह मत है कि परिनिष्ठित भाषा केवल मानसिक परिकल्पना मात्र होती है; उसका हमको केवल बोध एवं प्रत्यक्षण होता है; उसका वर्णनात्मक विश्लेषण नहीं किया जा सकता। इस सम्बन्ध में विचारणीय यह है कि बोध का सम्बन्ध तो भाषा के प्रत्येक रूप से होता है तथा किसी भाषा का परिनिष्ठित रूप केवल अमूर्त मानसिक बिम्ब योजना न होकर बोलचाल की सामान्य जीवन्त भाषा का एक विशेष रूप भी होता है। पाणिनि ने संस्कृत के परिनिष्ठित रूप का ही विश्लेषण किया था। आज के भाषाविज्ञान की तो सबसे बड़ी उपलब्धि ही भाषा विश्लेषण की वर्णनात्मक एवं संरचनात्मक पद्धतियों का विकास है। प्रस्तुत शोध भी इन्हीं पद्धतियों पर अवलम्बित है।

भाषा का परिनिष्ठित स्वरूप

किसी भाषा-प्रदेश के विभिन्न क्षेत्र एवं सामाजिक स्तर की विविधता के कारण उसमें क्षेत्रगत एवं वर्गगत बोलियाँ व्यवहृत होती हैं। इन बोली रूपों के अतिरिक्त प्रत्येक भाषा का एक परिनिष्ठित स्वरूप भी होता है। यह उस भाषा-क्षेत्र के शिक्षित वर्ग द्वारा औपचारिक अवसरों पर प्रयुक्त होता है और इसी रूप को उस भाषा-प्रदेश के बहुमत भाषी 'मानक' समझते हैं; भले ही वे उसे बोल न पायें। उस भाषा प्रदेश में कलात्मक एवं शैक्षणिक अभिव्यक्ति का आधार भाषा का यही रूप होता है। इन्हीं कारणों से यह रूप अपनी क्षेत्रीय सीमाओं को पार कर समस्त क्षेत्रों में किसी-न-किसी अंश में व्यवहृत होता है।

परिनिष्ठित हिन्दी

परिनिष्ठित हिन्दी से तात्पर्य हिन्दी भाषा के उस रूप से है जिसको हिन्दी भाषी 'मानक' समझते हैं। अहिन्दी भाषी हिन्दी सीखते समय भाषा के इसी स्वरूप को सीखना चाहते हैं, औपचारिक अवसरों पर हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति हिन्दी के इसी भाषा रूप के द्वारा सम्भाषण करते हैं; भाषणों, संगोष्ठियों एवं परिचर्चाओं आदि में हिन्दी का यही रूप प्रयुक्त होता है।

परिनिष्ठित हिन्दी एवं खड़ीबोली

परिनिष्ठित भाषा का मूल आधार कोई बोली ही होती है। इस दृष्टि से परिनिष्ठित हिन्दी का मूल आधार हिन्दी के पश्चिमी प्रदेश की खड़ीबोली है। खड़ीबोली परिनिष्ठित हिन्दी की मूलाधार बोली है तो सही किन्तु यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि खड़ीबोली ही परिनिष्ठित हिन्दी नहीं है। खड़ीबोली हिन्दी भाषा का वह क्षेत्रीय रूप है जो रामपुर, मुरादाबाद, मेरठ, बिजनौर, मुजफ्फर-नगर, सहारनपुर जिलों में तथा देहरादून जिले के मैदानी भाग में व्यवहृत है। इस क्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति खड़ीबोली का व्यवहार करते हैं किन्तु अन्य क्षेत्रों की भाँति इस क्षेत्र के हिन्दी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति परस्पर सम्भाषण अथवा औपचारिक अवसरों पर जिस मानक भाषा का प्रयोग करते हैं वह परि-निष्ठित हिन्दी है। सभी क्षेत्रों के व्यक्ति हिन्दी शिक्षा प्राप्त करते समय हिन्दी के इसी परिनिष्ठित स्वरूप को सीखते हैं तथा शब्दकोषीय एवं व्याकरणिक दृष्टि से उनकी हिन्दी में बहुत अधिक भिन्नताएँ भी दृष्टिगत नहीं होती हैं तथापि सामान्यतः अन्य भाषी क्षेत्रों एवं हिन्दी के उपभाषा एवं बोली क्षेत्रों के हिन्दी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति के उच्चारण पर उसकी अपनी मातृभाषा अथवा बोली की ध्वनि व्यवस्था का प्रभाव परिलक्षित होता है। चूँकि परिनिष्ठित हिन्दी की मूलाधार बोली खड़ीबोली रही है इसी कारण उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी के पश्चिमी प्रदेश तथा खड़ीबोली क्षेत्र के परिनिष्ठित हिन्दी का व्यवहार करने-वाले व्यक्तियों का उच्चारण आदर्श या मानक मानकर शोध प्रबंध के "परि-निष्ठित हिन्दी का ध्वनिग्रामिक अध्ययन" शीर्षक प्रथम खण्ड में ध्वनिग्रामिक विवेचन किया गया है।

विवेचन का आधार

प्रस्तुत अध्ययन उच्चरित एवं कथ्य सामग्री के रूपग्रामिक विश्लेषण से सम्बन्ध रखता है; इसका लिखित रूपों से कोई सम्बन्ध नहीं है। लेखक का यह सौभाग्य है कि उसका जन्म एवं आरम्भिक शिक्षा ब्रजभाषा एवं खड़ीबोली के संक्रान्ति क्षेत्र—बुलन्दशहर में हुई है। स्वयं सूचक के रूप में अपने उच्चारों का ध्वन्यात्मक लिप्यंकन कर उनकी पश्चिमी हिन्दी क्षेत्र के मेरठ, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर एवं आगरा के उच्च हिन्दी शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के उच्चारों से तुलना की गयी है तथा समान साँचे के आधार पर शब्दों के उच्चारण का स्थिरी-करण करके उनका इस खण्ड में रूपग्रामिक अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

विषय-सूची

परिनिष्ठित हिन्दी का रूपग्रामिक अध्ययन

३. परिनिष्ठित हिन्दी का रूपग्रामिक अध्ययन

३.० भूमिका

हिन्दी में रूपग्रामिक विश्लेषण की कुछ समस्याएँ

प्रत्येक भाषा का एक सामाजिक दायित्व होता है—वक्ता से श्रोता तक किसी विचार या मनोभाव को प्रेषित कराना। इसके लिए वाक्य तथा उच्चार होते हैं। प्रत्येक उच्चार ध्वनियों का समूह होता है। किसी भाषा के सन्दर्भ में, उसमें व्यवहृत ध्वनियों के वितरण एवं संगति के आधार पर ध्वनिग्रामों का निर्धारण किया जाता है। ध्वनिग्राम व्यवच्छेदक अर्थात् अर्थभेदक होते हुए भी स्वयं अर्थशून्य होते हैं, किन्तु इन्हीं के विशेष क्रम से संयोजित होने वाले रूप, शब्द एवं वाक्य भाषा के अर्थवान तत्त्व होते हैं। रूप भाषा का लघुतम अर्थयुक्त तत्त्व है।

किसी भाषा के वैयाकरणिक गठन का अध्ययन करने के लिए हम उसका रूपग्रामिक एवं वाक्य विन्यासीय अध्ययन करते हैं। रूपग्राम शास्त्र में उच्चारों को रूपों में विभाजित करके वितरण के आधार पर रूपग्रामों में वर्गबद्ध करते हैं तथा इसके अन्तर्गत भाषा के व्युत्पादक एवं विभक्ति प्रत्ययों का अध्ययन करते हैं।

हिन्दी का रूपग्रामिक विश्लेषण करते समय सर्वप्रथम समस्या यह उठती है कि किसी उच्चार में कौन-सा अंश व्युत्पादक प्रत्यय है एवं कौन-सा अंश विभक्ति है। इस समस्या का कारण यह है कि कुछ उच्चारों का रूपग्रामिक विश्लेषण भिन्न प्रकार से सम्भव है और प्रत्येक विकल्प के पक्ष में तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं। उदाहरणार्थ हमारे सामने निम्नलिखित उच्चारों की तालिका है:—

हाथ्	काठ्	रंग	काम्
हथौड़ा	कठौता	रंगीला	कमेरा
हथौड़ी	कठौती	रंगीली	कमेरी

इत्यादि।

प्रश्न यह है कि इन उच्चारों में विभक्ति प्रत्यय है या नहीं। और यदि है तो व्युत्पादक प्रत्यय एवं विभक्ति प्रत्यय की सीमाएँ कौन-सी हैं।

(१) विश्लेषण की पहली विधि :

{हाथ्–}	{–औंड़–}	{–आ}	{–ई}
{काठ्–}	{–औत्–}	{–आ}	{–ई}
{रंग– }	{–ईल्–}	{–आ}	{–ई}
{काम्–}	{–एर्–}	{–आ}	{–ई}

इस विवेचन के अनुसार मूल रूपग्राम में व्युत्पादक प्रत्यय के योग से व्युत्पन्न रूप साधित होते हैं। उनमें पुल्लिग विभक्ति प्रत्यय {–आ} के योग से पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग विभक्ति प्रत्यय {–ई} के योग से स्त्रीलिंग रूप बनते हैं।

रूपात्मक दृष्टि से इस प्रकार के विश्लेषण में कोई त्रुटि नहीं है किन्तु इस प्रकार की विधि में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि विभक्ति प्रत्ययों को अलग कर देने से जो रूप बचता है, वह भाषा में उच्चरित नहीं होता है। / हथौड़–, कठौत्–, रंगील्–, कमेर् / जैसे रूपों का कभी प्रयोग नहीं होता है। {काठ्–} में {–औत्} लगकर यदि {कठौत्–} मानें तो व्युत्पादक धरातल पर व्युत्पन्नता की व्याख्या करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

(२) दूसरी विधि :

{हाथ्– }	{–औंड़ा}	{–ई}
{काठ्–}	{–औता}	{–ई}
{रंग – }	{–ईला }	{–ई}
{काम्–}	{–ऐरा }	{–ई}

इस विवेचन के अनुसार मूलरूप में व्युत्पादक प्रत्यय के योग से पुल्लिग रूप की रचना होती है। उसमें स्त्रीलिंग द्योतक प्रत्यय के योग से स्त्रीलिंग रूप की रचना होती है। उदाहरणार्थ, {हाथ–} मूल रूपग्राम में {–औंड़ा} व्युत्पादक प्रत्यय के योग से {हथौंड़ा} पुल्लिग रूप व्युत्पन्न होता है। {हथौंड़ा–} में {–ई} स्त्रीलिंग प्रत्यय के योग से {हथौंड़ी} की रचना होती है।

एक प्रश्न ओर उपस्थित होता है कि {–ई} परप्रत्यय को व्युत्पादक पर-प्रत्यय मानें या विभक्ति प्रत्यय। कुछ विचारक {–ई} को विभक्ति प्रत्यय मानते हैं। इस मान्यता की सबसे बड़ी त्रुटि यह है कि पुल्लिग रूपों को व्युत्पादक प्रत्यय के योग से निष्पन्न मानने पर स्त्रीलिंग रूपों को विभक्ति प्रत्यय के योग से निष्पन्न मानना असंगत है। इसका कारण यह है कि यदि हम 'हथौड़ा' को एक रूपग्रामिक शब्द द्वारा स्थानापन्न कर सकते हैं तो 'हथौड़ी' को भी कर सकते हैं। 'यह हथौड़ा है'; 'यह दिन है' तो 'यह हथौड़ी है' एवं 'यह रात है'।

इस कारण इस सम्बन्ध में संगत यही है कि {–ई} को भी व्युत्पादक परप्रत्यय के रूप में स्वीकार किया जावे।

इसी प्रकार की समस्या उन रूपों के विश्लेषण की भी है जो किसी मुक्त रूप मूल रूपग्राम से व्युत्पन्न नहीं होते हैं। यथा :—/लड़्का, लड़्की/

समस्या यह है कि /लड़का/ को एक रूपग्रामिक शब्द माना जावे या नहीं। इसके दो विकल्प हैं :—

(१) /लड़्का/ एवं /लड़्की/ में /लड़्क्–/ को मूल रूप मानें तथा उसमें अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति {–आ} के योग से /लड़्का/ तथा अविकारी कारक एकवचन स्त्रीलिंग विभक्ति {–ई} के योग से /लड़की/ रूपों को निष्पन्न मानें।

(२) /लड़्का/ को ही मूल रूप मानें और उसमें {–ई} के योग से /लड़की/ रूप को निष्पन्न मानें।

उपर्युक्त दो विकल्पों में से कौन-सा विकल्प अधिक वैज्ञानिक, संगत एवं सुविधाजनक है, इसकी विवेचना आवश्यक है। इसलिए सर्वप्रथम हम दोनों के सापेक्षिक महत्त्व पर विचार करेंगे।

(१) मूल रूप /लड़्क्–/ :

हिन्दी के परम्परागत व्याकरणों में मूल रूप /लड़्का/ को स्वीकार किया गया है। /लड़्का/ को मूल रूप मानकर कारक एवं वचन के रूपान्तर को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है :—

	एकवचन	बहुवचन
अविकारी कारक	ϕ	–ए
विकारी कारक	–ए	–ओं

गठनात्मक पद्धति से अध्ययन करने पर यह विश्लेषण उचित प्रतीत नहीं होता। सन् १९६० में मैंने हिन्दी संज्ञाओं का रूपग्रामिक विश्लेषण करते हुए /लड़्क्–/ को मूलरूप माना था, /लड़्का/ को नहीं।[१] इस सम्बन्ध में निम्नलिखित तर्क प्रस्तुत किए गए थे :—

(१) पुल्लिग आकारान्त प्रातिपदिक नहीं है। यदि लड़्का पुल्लिग आकारान्त प्रातिपदिक है तो छोरा भी पुल्लिग आकारान्त प्राति-

१. महावीर सरन जैन : 'हिन्दी संज्ञा आकारान्त शब्द : पदग्रामिक विश्लेषण एवं वर्गबन्धन', नागरी प्रचारिणी पत्रिका, मालवीय शती विशेषांक, वर्ष ६६, अंक २-३-४, सम्वत् २०१८।

पदिक हैं, किन्तु दोनों संज्ञा प्रातिपदिकों के दो भिन्न उपवर्गों के सदस्य हैं।

(२) वस्तुतः प्रातिपदिक 'आकारान्त' न होकर व्यंजनान्त है। व्यंजनान्त प्रातिपदिक में 'आ' विभक्ति संयुक्त होती है।

(३) यदि 'लड़्का' प्रातिपदिक है, एवं 'ए' तथा 'ओं' विभक्तियाँ उसमें जुड़ती हैं, तो इस दृष्टि से संज्ञा विभक्तिमय पदरूप (शब्द) 'लड़्काए' एवं 'लड़्काओं' बनेंगे, 'लड़्के' अथवा 'लड़्कों' नहीं।[1]

उसी लेख में /लड़्का, लड़्के, लड़्कों; लड़्की, लड़्कियों/ इत्यादि रूपों का रूपग्रामिक विश्लेषण करते हुए निम्नलिखित तालिका प्रस्तुत की गई थी :—

	पुंल्लिंग		स्त्रीलिंग	
कारक	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
अविकारी	–आ	–ए	–ई	–इयाँ
विकारी	–ए	–ओं	–ई	–इयों
सम्बोधन	–आ	–ओ	–ई	–इयो

स्त्रीलिंग रूप में /ई/ को व्युत्पादक प्रत्यय मानने का विकल्प भी प्रस्तुत किया गया था :—

"इस वर्ग के दूसरे निदान में केवल 'ई' को ही व्युत्पादक प्रत्यय के रूप में स्वीकृत किया जा सकता है। यथा :—

---

१. महावीर सरन जैन—'हिन्दी के आकारान्त संज्ञा शब्द : पदग्रामिक विश्लेषण एवं वर्गबन्धन' : नागरी प्रचारिणी पत्रिका, मालवीय शती विशेषांक, पृष्ठ ४७०, वर्ष ६६, अंक २-३-४, संवत् २०१८। पुनर्प्रकाशित—भाषाशास्त्र की रूपरेखा—डा० उदयनारायण तिवारी, पृष्ठ २८४, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

लड़्क् – प्रातिपदिक – + – ई – व्युत्पादक प्रत्यय = लड़्की = प्रातिपदिक व्युत्पन्न।"[1]

इसके बाद परिनिष्ठित हिन्दी के 'व्याकरण' अथवा 'संज्ञा' पर जितने कार्य हुए हैं, उनमें से अधिकांश में इसी पद्धति को अपनाया गया है।

/लड़्का, लड़्के, लड़्कों, लड़्की, लड़्कियों/ इत्यादि रूपों का जब कोई विश्लेषणकर्ता रूपग्रामिक विश्लेषण करने के लिए उद्यत होता है तो समस्त उच्चारों में प्राप्त समान रूप /लड़्क्–/ को ही पाता है। इसके आगे अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति {–आ} के योग से /लड़्का/, अविकारी कारक बहुवचन पुल्लिग विभक्ति {–ए} के योग से /लड़्के/, विकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति /–ए$_2$/ के योग से /लड़्के/, विकारी कारक बहुवचन पुल्लिग विभक्ति {–ओं} के योग से /लड़्कों/ इत्यादि की व्याख्या भी स्पष्ट रीति से कर पाता है। इसकी पुष्टि के लिए अन्य तर्क भी दिए जा सकते हैं :—

जब /लड़्कों/ में विकारी कारक बहुवचन पुल्लिग विभक्ति {–ओं} तथा /लड़्के/ में विकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति {–ए} अथवा अविकारी कारक बहुवचन पुल्लिग विभक्ति {–ए} को स्वीकार करते हैं, तो /लड़्का/ में अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति {–आ} को स्वीकार करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त /लड़्का, घोड़ा/ में अर्थगत समानता इस दृष्टि से है कि दोनों उच्चार अविकारी कारक, एकवचन, पुल्लिग संवर्ग के हैं। अतएव दोनों के समान अर्थक अंश का विश्लेषण करने के लिए दोनों में प्राप्त समान ध्वनिग्रामिक आकार अन्त्य {–आ} का विश्लेषण करना होगा। इस दृष्टि से भी /लड़्का/ एवं /घोड़ा/ में एक रूपग्राम से अधिक रूपग्राम हैं।[2]

---

१. महावीर सरन जैन—'हिन्दी के आकारान्त संज्ञा शब्द : पदग्रामिक विश्लेषण एवं वर्गबन्धन'– नागरी प्रचारिणी पत्रिका, मालवीय शती विशेषांक, पृष्ठ ४७२। पुनर्प्रकाशित—भाषाशास्त्र की रूपरेखा, पृष्ठ २८५।

२. मिलाइए :

"To find the meaning of Morpheme 'A' and Morpheme 'B', we may be forced to deal with the sequences A+X and B+X, and we often wonder that the Morpheme X contributes to the total meanings of these sequences—the meanings from which we expect to abstract the separate meanings of A and B.
– C. F. Voegelin—"Distinctive Features and Meaning Equivalence", Language XXIV (1948).

यहाँ यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि /लड़क्–/ एवं /घोड़/ का अपना कोईअर्थ नहीं है, अर्थात् ये स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त होने की क्षमता नहीं रखते हैं। इसका उत्तर यह दिया जा सकता है कि रूपग्रामिक विश्लेषण की अर्थ-निरपेक्ष विधि के अनुसार रूपग्रामों का निर्धारण उनकी वितरणगत विशेषताओं के आधार पर होता है। विश्लेषणकर्ता सामग्री का निरीक्षण करता चलता है तथा उसे यह सहज ही ज्ञात हो जाता है कि किन समान अनुक्रमों अथवा ध्वनिग्रामों के गुच्छों की पुनरावृत्ति होती रहती है। वह समय-समय पर वितरण के आवर्तक व्यवधानों को अंकित करता चलता है। शून्य तत्त्वों सहित आवर्तक अंश ही भाषा के रूपग्राम होते हैं।[1]

वस्तुत: रूपग्रामों का कोई साधारण भाषी विश्लेषण नहीं कर पाता है। 'रूपग्राम शब्द अथवा वाक्य प्रकार की इकाइयों में से एक इकाई नहीं हैं, जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति अपने सहज बोध से पहचान लेता है।'[2]

(२) मूल रूप /लड़्का/:

पूर्व विवेचनानुसार /लड़्का, लड़्के, लड़्कों/ आदि का विश्लेषण करने पर मूल रूप /लड़्क्–/ माना गया है। /लड़्क्–/ को मूल रूप मानते हुए; /लड़्का/ के {–आ} को 'अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति' तथा /लड़्की/ के {–ई} को 'अविकारी कारक एकवचन स्त्रीलिंग विभक्ति' माना गया है। इस दृष्टि से {–आ} एवं {–ई} दोनों अविकारी कारक एकवचन को द्योतित कर रही हैं, दोनों का अन्तर 'लिंग' का अन्तर है।

यथार्थतः लिंग, वचन तथा कारक वैयाकरणिक संवर्गों में से {–आ} को केवल पुल्लिग तथा {–ई} को केवल स्त्रीलिंग विभक्ति के रूप में वर्णित नहीं कर सकते हैं। इसका कारण यह है कि /लड़्का/ एवं /लड़्कों/ में {–आ} एवं {–ओं} का अन्तर 'लिंग' की दृष्टि से न होकर, वचन एवं कारक की दृष्टि से है। /लड़्का/ एवं /लड़्की/ का विश्लेषण करने पर {–आ} एवं {–ई} का अन्तर 'लिंग' के कारण तथा /लड़्का/ एवं /लड़्कों का विश्लेपण करने पर {–आ} एवं {–ओं} का अन्तर 'वचन एवं कारक' की दृष्टि से है। ऐसी स्थिति में {–आ} को या तो केवल लिंग द्योतक या फिर वचन एवं कारक द्योतक विभक्ति मानी जा सकती है। या तो वचन एवं कारक के लिए या लिंग के लिए शून्य

---

1. Trager and Smith— "An Outline of English Structure", p. 53.
2. C. L. Ebeling—"Linguistic Units", (1960), p. 107.

परप्रत्ययों की कल्पना करनी होगी। इस प्रकार /लड़क्–/ को मूल रूप स्वीकार करने पर अनेक शून्य परप्रत्ययों की कल्पना करनी होती है। वर्णन में अनेक जटिलताएँ आ जाती हैं।

अविकारी कारक एकवचन संज्ञारूपों को विभक्तिमय मानने पर विभक्ति रूपग्रामों के सहरूपग्रामों के वितरण की जटिल समस्या हमारे सामने उपस्थित होती है। इसका कारण यह है कि /लड़्का/ को मूलरूप न मानकर, यदि /लड़्क्–/ को मूल रूप स्वीकार करते हैं तो इस पद्धति से अधिकांश संज्ञा प्रातिपदिक व्यंजनान्त हो जाते हैं। डा० उप्रैतिः द्वारा प्रस्तुत हिन्दी संज्ञा का विश्लेषण इसका उदाहरण है जिसमें /लड़्का, कोड़ा, दस्ताना, भतीजा, बगीचा, घस्यारा, गाना, चरवाहा, रुपया/इत्यादि में {–आ} को विभक्ति मानकर संज्ञा मूल प्रातिपदिक क्रमशः /लड़्क्–, कोड़्–, दस्तान्–, भतीज्–, बगीच्–, घस्यार्– गान्–, चरवाह्–, रुपय्–/[1], /दादा, काका, मुखिया, सुदामा, राजा/ इत्यादि में {–आ} को विभक्ति मानकर मूल प्रातिपदिक/ दाद्–, काक्–, मुखिय्–, सुदाम्–, राज्–/[2], /धोबी, विद्यार्थी, तपस्वी, सन्की, भिखारी, मंगड़ी/ इत्यादि रूपों में {–ई} विभक्ति स्वीकार करके मूल प्रातिपदिक क्रमशः/ धोब्–, विद्यार्थ्–, तपस्व्–, सन्क्, भिखार्–, मंगड़्–/[3], /खालू, डाकू, साधू, साढ़ू, भालू, गेहूँ/ इत्यादि जैसे रूपों में {–ऊ} को विभक्ति मानकर मूल प्रातिपदिक क्रमशः /खाल्–, डाक्–, साध्–, साढ़्–, भाल्–, गेँह्/[4] जैसे व्यंजनान्त रूपों को माना गया है। विश्लेषण की इस पद्धति को अपनाने से स्त्रीलिंग मूल प्रातिपदिक भी अधिकतर व्यंजनान्त हो जाते हैं।[5]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्वयं स्पष्ट हो जाता है कि अविकारी कारक एकवचन में प्रयुक्त होने वाले संज्ञा रूपों को विभक्तिमय मानकर, उनमें से अविकारी कारक एकवचन द्योतक विभक्ति रूपों के विश्लेषण करने पर आकारान्त, ईकारान्त, ऊकारान्त इत्यादि अन्त्य शब्द रूप मूल प्रातिपदिक के रूप में व्यंजनान्त रह जाते हैं। इस स्थिति में एक तो अविकारी कारक एकवचन पुंल्लिंग विभक्ति रूपग्राम के रूप में अनेक सहरूपग्रामों को स्वीकार करना पड़ता है, दूसरे इन

---

१. हिन्दी में प्रत्यय विचार, पृष्ठ २१५।
२. वही, पृष्ठ २१७।
३ वही, पृष्ठ २१८।
४. वही, पृष्ठ २१८-२१९।
५. वही, पृष्ठ २२१-२२३।

सहरूपग्रामों का वितरण प्रस्तुत करना एक समस्या हो जाती हैं। केवल पुल्लिग संज्ञा शब्दों के ही अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग विभक्ति के निम्नलिखित सहरूपग्राम हो जाते हैं :—

{/ $-\phi^1$, $-\phi^2$, –आ[1], –आ[2], –आ[3], –ओ, –ई, –ऊ/}

इन सहरूपग्रामों का वितरण ध्वन्यात्मक प्रतिबंधित अथवा रूपग्रामिक प्रतिबंधित रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, केवल शब्दकोषीय धरातल पर ही इन्हें प्रतिबंधित किया जा सकता है, अर्थात् प्रत्येक सहरूपग्राम के वितरण के लिए शब्दों की एक लम्बी-चौड़ी सूची प्रस्तुत करनी आवश्यक हो जाती है। इसी कारण, कुछ भाषाशास्त्री 'लड़्का' को ही मूलरूप मानने की दिशा में सहमत हैं। यथा :— डाक्टर रमेशचन्द्र महरोत्रा ने एक पत्र में अपनी सहमति व्यक्त की है :—

"ठीक है जी। एकदम सुविधा हो जाती है अविकारी एकवचन संज्ञा में से विभक्ति प्रत्यय न निकालकर। वरना हिन्दी के अच्छे खासे रूपों की रेड़ लग जाती है कट-छँट कर, और मातृभाषी के मन पर करारी चोट भी पड़ती है। यह तो जिद है 'स्ट्रक्चुरल लिंग्विस्टिस' की कि उदा० 'लड़्का' को 'बेस फार्म' नहीं मानने देते....।"[1] /लड़्क्–/ को मूल रूप मानने की विधि से विश्लेषण में कोई सुविधा नहीं होती, उल्टे अनावश्यक एवं अवांछनीय विस्तार का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के विश्लेषण से न तो भाषा-शिक्षण में किसी प्रकार की सहायता मिल सकती है और न भाषा-गठन को समझने में सुविधा ही हो सकती है।

भाषा-विश्लेषण का उद्देश्य व्यवहृत भाषा सामग्री को संक्षिप्त, सारगर्भित एवं नियमबद्ध रूपों में प्रस्तुत करना होता है, जिसको पढ़कर अध्येता भाषा के स्वरूप एवं उसके गठन से सहज परिचित हो सकें, भाषाशिक्षण में उससे उसे सहायता प्राप्त हो सके।[2]

---

१. ५ अक्टूबर १९६५ को सागर से प्रेषित श्री रमेशचन्द्र महरोत्रा के पत्र से उद्धृत।

२. मिलाइए—ब्लूमफील्ड के विचार :

"Those who occupy themselves with structural Linguistics are concerned to reduce the welter of data derived from discourse, the stream of speech, to neat, economical and self consistent statements."

—Bloomfield—"Language", p. 105.

वस्तुत: अविकारी एकवचन संज्ञा रूपों में से विभक्ति प्रत्यय निकालने पर शेष रूपों में न तो कोई स्वतंत्र अस्तित्व-द्योतकअ र्थ गर्भित होता है और न वाक्य में स्वतंत्रतापूर्वक प्रयुक्त होने की क्षमता ही होती है, अर्थात् उस स्थिति में मूल प्रातिपदिक आवद्ध अंश ही होता हैं, मुक्त रूप नहीं होता हैं।

संज्ञा कोटि के व्यावहारिक महत्त्व को दृष्टिपथ में रखते हुए यह आवश्यक हैं कि उसका मूल प्रातिपदिक मुक्त रूप हो, जिसको शब्दकोषीय अर्थ दिया जा सके। /लड़्का/ में /–आ/ को तो हमने अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग वैयाकरणिक अर्थ प्रदान कर दिया, किन्तु प्रश्न यह है कि शेष रूप /लड़्क्–/ को क्या अर्थ दें?

अविकारी कारक एकवचन संज्ञा रूपों को विभक्तिमय मानने पर एक रूपग्राम युक्त शब्दों, यथा :—'राम्, घर्' में भी शून्य परप्रत्यय की कल्पना करनी पड़ती हैं। यदि हम इन शब्दों में शून्य परप्रत्यय की कल्पना नहीं करते हैं, तो हमें /लड़्का/ को भी विभक्ति रहित मानना पड़ेगा। इसका कारण यह हैं कि रचना में /लड़्का/ को /घर्/ द्वारा स्थानापन्न किया जा सकता है। यथा :—

/यह् लड़्का अच्छा हैं/

/यह् घर् अच्छा हैं/

इस प्रकार /घर्/ एवं /लड़्का/ एक ही रूपतालिका का निर्माण करते हैं। इस प्रकार यदि /लड़्का/ को विभक्तिमय मानते हैं तो / घर्/ जैसे रूपों को भी विभक्तिमय मानना पड़ेगा। इसके विपरीत यदि /घर्/ को एक रूपग्राम युक्त शब्द मानते हैं तो /लड़्का/ को भी विभक्ति रहित रूप में स्वीकार करना पड़ेगा क्योंकि विभक्तिमय रूप अपने ही वर्ग के किसी एक रूपग्रामिक शब्द द्वारा स्थानापन्न नहीं किया जा सकता।

यही कारण हैं कि /लड़्का/ को विभक्तिमय मानने के कारण, विश्लेषण-कर्ताओं को /बालक्–, सुनार्–, कवि–, मुनि–, प्रभु–/ जैसे एक रूपग्राम युक्त शब्दों को भी द्वयरूपग्रामिक शब्द मानना पड़ता है।[1] /बालक्, बालक्, बालक्, बालकों/इत्यादि की रूपतालिका में केवल अविकारी कारक एकवचन पुल्लिग के लिए ही शून्य {– ϕ} की कल्पना नहीं करनी पड़ती, प्रत्युत अविकारी कारक बहुवचन पुल्लिग, विकारी कारक एकवचन पुल्लिग संवर्गों के लिए भी शून्य प्रत्ययों की कल्पना करनी पड़ती हैं। भाषा के जिस वर्ग में, व्यतिरेकी स्थिति नहीं हैं, जिन व्याकरणिक संवर्गों के अनुरूप रूप वैभक्तिक नहीं हैं, उन्हें भी शून्य

---

१. हिन्दी में प्रत्यय विचार, पृष्ठ २१३।

प्रत्यय की कल्पना द्वारा बनाना पड़ता है। इस प्रकार का अध्ययन भाषा के प्रकृत्यानुरूप न होकर, पूर्व निर्धारित साँचों में भाषा के रूपों को बैठाने की प्रवृत्ति पर आधारित है।

सिद्धान्ततः विभक्तियुक्त शब्द से व्युत्पन्न रचना नहीं होती है। व्युत्पादक प्रत्ययों के आगे विभक्ति प्रत्यय आ सकते हैं, विभक्ति प्रत्ययों के बाद व्युत्पादक प्रत्यय नहीं आते हैं।[1] इस दृष्टि से भी हिन्दी के अविकारी एकवचन संज्ञा रूपों को विभक्तिमय मानना संगत प्रतीत नहीं होता है। उदाहरणार्थ, यदि अविकारी कारक एकवचन पुल्लिंग रूप /साधू/ को विभक्तिमय मानते हैं, तो /साधू/ के आगे किसी व्युत्पादक प्रत्यय का योग नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में समस्या यह है कि /सधुक्कड़/ जैसे शब्दों का विश्लेषण किस प्रकार किया जाए? प्रकृतितः यह /साधू/ मूल प्रातिपदिक में /-अक्कड़/ व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से व्युत्पन्न है। इस प्रकार या तो /साधू/ को विभक्ति रहित रूप में स्वीकार करना पड़ेगा अन्यथा उस नियम की संगति नहीं बैठेगी कि विभक्ति प्रत्यय के आगे व्युत्पादक प्रत्यय नहीं आते हैं। यदि हम /साधू/ में /ऊ/ विभक्ति मानते हैं[2] तथा /सधुक्कड़/

---

१. मिलाइए:

(क) "यहाँ विभक्ति तथा व्युत्पादक प्रत्ययों के अन्तर को भली भाँति समझ लेना चाहिए। वास्तव में विभक्ति युक्त प्रत्यय के बाद कोई अन्य प्रत्यय संयुक्त नहीं हो सकता किन्तु व्युत्पादक प्रत्यय के बाद अन्य प्रत्यय संयुक्त हो सकते हैं।"

—डा० उदयनारायण तिवारी—'भाषाशास्त्र की रूपरेखा', पृष्ठ १७१।

(ख) "विभक्तियों तथा व्युत्पादक प्रत्ययों के अन्तर की दूसरी बात यह है कि विभक्तियों के लगने पर व्युत्पादक प्रत्ययों का व्यवहार नहीं होता।"

—डा० मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय विचार', पृष्ठ २९।

(ग) "विभक्ति प्रत्यय जिन मूल प्रातिपदिक, व्युत्पन्न प्रातिपदिक अथवा धातु में जुड़ते हैं उनके सदैव अन्त में ही आते हैं। इस बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि विभक्ति प्रत्ययों के आगे व्युत्पादक प्रत्यय कभी नहीं आ सकते, व्युत्पादक प्रत्ययों के आगे विभक्ति प्रत्यय आ सकते हैं।"

—डा० महावीर सरन जैन—'आधुनिक भाषाशास्त्र के सन्दर्भ में 'प्रत्यय'—हिन्दुस्तानी, भाग २५, अंक १-४, जनवरी-दिसम्बर, १९६४, पृष्ठ ३६४, इलाहाबाद।

२. दे० हिन्दी में प्रत्यय विचार, पृष्ठ २१८-२१९।

को /साधू/[१] मूल प्रातिपदिक से व्युत्पन्न मानते हैं, तो यह सैद्धान्तिक अन्तर्विरोध है।

अंग्रेजी भाषा के अध्येताओं ने व्यावहारिक सुविधा की दृष्टि से एवं असंगतियों से बचने के लिए बहुत से ऐसे शब्दों को, जिनका विशुद्ध रूपात्मक एवं अर्थ-निरपेक्ष दृष्टि से विश्लेषण होना चाहिए, एक रूपग्राम युक्त शब्दों के रूप में स्वीकार किया है। यथा:—

(क) हाकिट ने अर्थगत कारणों से / SIStər / को / Si St / एवं /-ər/ में विभाजित नहीं किया है।[२]

(ख) नाइडा ने 'flare' को एक रूपग्राम युक्त शब्द के रूप में स्वीकार किया है। जैसा कि मार्तिने ने संकेत किया है,[३] 'flare' का रूपग्रामिक विश्लेषण सम्भव है, किन्तु व्यावहारिक सुविधा की दृष्टि से 'flare' को एक रूपग्राम युक्त शब्द के रूप में स्वीकार करना संगत है। 'Flare' का विश्लेषण

---

१. दे० हिन्दी में प्रत्यय विचार, पृष्ठ ९५।

२. "The words sister, brother, father, mother, daughter are all kinship terms, which means that they share some feature of meaning; on this basis one might want to extract the element—er as a Morpheme carrying this shared feature of meaning. However, to do so leaves us not only with a /sí st/ which — in this meaning— seems not to recur, but also with similarly forlorn elements /br ə́ð/, fáð/, /mə́ð/, and /dɔ́ t/. Thus it seems reasonable to conclude that sister should not be regarded as a combination of smaller forms si st– and –er.

No other way of cutting sister into smaller pieces seems to have even the partial justification which we have found above for the cut into sist– and er. We therefore decide to accept sister as a single morpheme."

—C. F. Hockett. "A Course in Modern Linguistics", p. 125.

३. A Martinet—'Review of Nida Morphology' Word VI, (1950), pp. 84-87.

करने पर उसके विभाजित तत्त्वों से अर्थ की उसी प्रकार प्रतीति नहीं होती, जिस प्रकार / लड़्का/ का विभाजन करने पर /-लड़्क्/ से नहीं होती। इस कारण से, एबलिंग भी, 'flare' का रूपग्रामिक-विश्लेषण नहीं करते हैं।[1]

(ग) इसी प्रकार एबलिंग 'hammer' का रूपग्रामिक विश्लेषण नहीं करते हैं।[2]

इस प्रकार / लड़्का/ को एक रूपग्राम युक्त शब्द के रूप में स्वीकार करना संगत है। इस विधि से विश्लेषण की सार्थकता सिद्ध होती है क्योंकि भाषा-विश्लेषण इस उद्देश्य से अनुप्राणित होना चाहिए कि वह भाषा के बारे में सरलतम पद्धति द्वारा अधिकाधिक सुनिश्चित एवं सुव्यवस्थित नियमों का निरूपण कर सकें, एवं उससे प्रसूत निष्कर्ष अधिकाधिक तथ्यात्मक एवं सूचनापरक हों।

दोनों विकल्पों का परीक्षण करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्गबन्धन की सुविधा, वितरणगत स्थितियों की स्पष्टता एवं सुनिश्चितता आदि अनेक दृष्टियों से अविकारी कारक एकवचन संज्ञा रूपों को (विशेषण एवं सर्वनाम कोटि के रूप भी) विभक्ति रहित रूप में स्वीकार करना अधिक संगत है।

---

१. "By starting the search of the Morphemes after having subjected the semantie constitution of the forms to a verifiable investigation, we change this doubt into a certainty. We find in the stem of 'flare' only one semantic minimum. Consequently, we observe only one form-meaning correspondence in this word."

—C. L. Ebeling— "Linguistic Units', p. 114.

२. "The demand of analogous distribution precludes the disintegration of words like hammer and the identification of –er in dancer and hammer———consequently the two elements –er do not have analogous distribution and hammer cannot be broken into two Morphemes. This case shows that the Morphemic Analysis cannot be completed until the arrangement of the semantic minimums has been studied."

—C. L. Ebeling—"Linguistic Units" (1960), p. 122.

३.१ व्युत्पन्न-प्रातिपदिक

३.१.० भूमिका

समीपी-संघटक के आधार पर व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना की निम्नलिखित प्रणालियाँ हैं:—

(१) व्युत्पादक प्रत्ययों द्वारा व्युत्पन्न प्रातिपदिक—इस प्रकार की संरचना में प्रातिपदिकों के साथ व्युत्पादक प्रत्ययों का योग होता है। इसको हाकिट ने 'सेकेन्ड्री डैरेवेटिव्स' के नाम से अभिहित किया है।[1]

(२) समास व्युत्पन्न प्रातिपदिक—इस प्रकार की संरचना में समस्त समीपी संघटक मुक्त रूप होते हैं।

(३) मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक—इस प्रकार की संरचना में दो या अधिक समीपी संघटक आबद्ध रूप होते हैं तथा कोई भी समीपी संघटक मुक्तरूप या प्रातिपदिक नहीं होता।

हिन्दी में आज नाना प्रकार की विधियों से शब्द रचना की जा रही है। 'नवीन व्युत्पादक प्रत्ययों का निर्माण हो रहा है, विदेशी भाषाओं से शब्दावली को ग्रहण किया जा रहा है।'[2] विस्तार के साथ परिनिष्ठित हिन्दी के समस्त व्युत्पादक रूपों को प्रकट करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। इसका कारण यह है कि ज्यों-ज्यों हिन्दी भाषा ज्ञान-विज्ञान की शाखा-प्रशाखा की अभिव्यक्ति के अपने राष्ट्रीय दायित्व को वहन करने में समर्थ हो रही है, त्यों-त्यों परिनिष्ठित हिन्दी में नित्य नवीन व्युत्पन्न शब्दों का प्रयोग बढ़ रहा है। नीचे हिन्दी की व्युत्पन्न-प्रवृत्तियों का ही निरूपण किया जा रहा है; अर्थात् हिन्दी के प्रमुख व्युत्पादक प्रत्ययों का विवरण, समास द्वारा शब्द रचना के प्रमुख प्रकार, एवं आबद्ध रूपों से निर्मित शब्द रचना की पद्धतियाँ आदि से सम्बन्धित अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

३.१.१ व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना :

३.१.१.० भूमिका

प्रातिपदिक के साथ व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से निष्पन्न रचना को ब्लूम-

---

१. C. F. Hockett—"A Course in Modern Linguistics", p. 240.

२. इस दृष्टि से द्रष्टव्य—अलैकसेई बरखूदारोव—समसामयिक साहित्यिक हिन्दी में शब्द-रचना—हिन्दी अनुशीलन : धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, पृष्ठ १२८-१३९।

फील्ड ने 'डिराइव्ड सैकेन्ड्री वर्ड्स'[1] तथा हाकिट ने 'सैकेन्ड्री डेरेवेटिव्स'[2] कहा है। इसमें एक समीपी संघटक स्वयं प्रातिपदिक तथा दूसरा समीपी संघटक व्युत्पादक प्रत्यय होता है।

प्रातिपदिकों के पूर्व अथवा पश्चात् जुड़ने के आधार पर व्युत्पादक प्रत्ययों के दो भेद हो जाते हैं:—

१. पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय या उपसर्ग।

२. पर व्युत्पादक प्रत्यय ।

पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय से जब कोई शब्द व्युत्पन्न होता है तो उसे—'आबद्ध रूप+मुक्त रूप' कह सकते हैं जिसमें एक समीपी संघटक आबद्ध रूप होता है तथा दूसरा समीपी संघटक मुक्त रूप होता है तथा आबद्ध रूप मुक्त रूप के पूर्व जुड़ता है।

इसके विपरीत जब पर व्युत्पादक प्रत्यय से कोई शब्द व्युत्पन्न होता है तो उसे 'मुक्त रूप+आबद्ध रूप' कह सकते हैं जिसमें दो समीपी संघटकों में से पहला मुक्त रूप एवं दूसरा आबद्ध रूप होता है ।

३.१.१.१ व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों द्वारा व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना (आबद्ध रूप + मुक्त रूप)

३.१.१.१.० भूमिका

ये आबद्ध रूप जिन मुक्त रूपों के साथ जुड़कर व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना का निर्माण करते हैं, उनके अर्थ को परिवर्तित अथवा/और परिवर्द्धित करते हैं तथा उनकी ही कोटि का अथवा/एवं भिन्न कोटि का निर्माण करते हैं।

हिन्दी के परम्परागत व्याकरणों में उद्धृत कुछ उपसर्गों एवं उनके उदाहरणों पर पुनर्विचार किया जाना चाहिए क्योंकि उन पुस्तकों में उद्धृत कुछ उपसर्ग तो हिन्दी में मुक्त रूप में व्यवहृत हैं तथा कुछ उदाहरणों का जिस प्रकार रूपग्रामिक विश्लेषण किया गया है, वह हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप नहीं है। यथा—पं० कामताप्रसाद गुरु ने निम्नलिखित उपसर्गों का विवेचन किया है—

/अमा–, अलम्–, आविर्–, उत्–~उद्–, तिरस्–, पुरस्–, प्रादुर्–,

---

१. Bloomfield—"Language", p. 209.

2. C. F. Hockett—"A Course in Modern Linguistics", p. 240. (§ 28.2).

वहिर्–, अल्–, बर्–/[1]

उपर्युक्त उपसर्गों के जो उदाहरण दिए गए हैं उनमें से कुछ परिनिष्ठित हिन्दी में व्यवहृत नहीं होते, शेष रूपग्रामिक दृष्टि से अखंडित हैं। उदाहरणार्थ /अमात्य /[2] को अमा– एवं -त्य में विभाजित नहीं कर सकते, क्योंकि /त्य/ मुक्त रूप में व्यवहृत नहीं होता है।

इसी प्रकार पं० कामताप्रसाद गुरु के 'हिन्दी व्याकरण' तथा 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी' में जिन हिन्दी उपसर्गों की सूची दी गई है, उनमें से निम्नलिखित रूप उपसर्ग नहीं हैं, क्योंकि उनका प्रयोग हिन्दी में मुक्त रूप में होता है—

अति–[3], अध–[4], अन्तर–[5]
इति–[6], ऐन–[7], कम–[8],
खुश–[9], गैर–[10], चिर–[11],
ना–[12], नाना–[13], प्रति–[14],
प्रातर् (प्रातः)–[15], फी–[16], वद–[17],

---

१. दे०—पं० कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ ३३३-३३८।

२. वही, पृष्ठ ३३५।

३. वही, पृष्ठ ३३२ एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी', पृ० १३३।

४. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३६।

५. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३५, एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी', पृष्ठ १३५।

६. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३५।

७-९. वही, पृष्ठ ३३७।

१०. 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी, पृष्ठ १३६।

११. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३५।

१२. 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी', पृष्ठ १३६।

१३. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३५।

१४. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३४, एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी,' पृष्ठ १३५।

१५. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३५।

१६. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३८ एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी', पृष्ठ १३६।

१७. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३८।

भर–[1], स्वयं–[2], हर–[3]।

/अध्–/ {आधा} का सहरूपग्राम है।

व्युत्पादक पूर्व प्रत्यय, जैसा पहले कहा जा चुका है, भाषा में आवद्ध रूप (बाउन्ड फार्मस्) होते हैं जो मुक्त रूपों के आश्रित होकर प्रयोग में आते हैं। इस दृष्टि से उपर्युक्त रूपों का चूँकि स्वतंत्र प्रयोग होता है इस कारण इन्हें भाषा में उपसर्ग नहीं माना जा सकता है।

आगे परिनिष्ठित हिन्दी में प्रयुक्त होने वाले व्युत्पादक प्रत्ययों का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा।

हिन्दी में पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय विभिन्न कोटि के रूपों में जुड़कर संज्ञा, विशेषण अथवा क्रिया-विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों को व्युत्पन्न करते हैं। कुछ भाषाशास्त्री पूर्व व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से क्रिया कोटि के प्रातिपदिकों को व्युत्पन्न मानते हैं। इस दृष्टि से {उ–} के योग से डा० मुरारीलाल उप्रैतिः 'उकस, उतर, उपट, उमर' आदि[4] तथा पं० किशोरीदास बाजपेयी 'उजड्ड', 'उजाड़', 'उचक्का' आदि[5] क्रिया कोटि के प्रातिपदिकों को व्युत्पन्न हुआ मानते हैं।

इन पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। पं० किशोरीदास वाजपेयी द्वारा प्रस्तुत उदाहरण इस कारण संगत नहीं हैं, क्योंकि 'ज ड्ड', 'जाड़' या 'चक्का' आदि का मुक्त रूप में प्रयोग नहीं होता है। मुरारीलाल उप्रैतिः ने जिन उदाहरणों को प्रस्तुत किया है उनमें विशुद्ध रूप की दृष्टि से {उ-} को /उकस्, उतर्, उपट्, उमर्/ से अलग किया जा सकता है किन्तु {उ-} के योग से /उकस्, उतर्, उपट् उमर्/ आदि समस्त रूपों में 'ऊपर वाले' अर्थ की अभिव्यक्ति हो रही है, यह विचारणीय है।

३.१.१.१.१ संज्ञा-व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना

हिन्दी में {अन्-} एवं {निर्–} पूर्व व्युत्पादक प्रत्ययों के अतिरिक्त शेष समस्त पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़कर संज्ञा कोटि के

---

१. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३७, एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी', पृष्ठ। १३६।

२. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ, ३३६।

३. पं० कामताप्रसाद गुरु, पृष्ठ ३३८, एवं 'ए बेसिक ग्रामर आफ़ माडर्न हिन्दी,' पृष्ठ १३६।

४. मुरारीलाल उप्रैतिः—"हिन्दी में प्रत्यय विचार", ५९-६०।

५. पं० किशोरीदास बाजपेयी—'हिन्दी शब्दानुशासन', पृष्ठ २६०।

ही व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की संरचना करते हैं। {अन्-} एवं {निर्-} पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय संज्ञा एवं क्रिया दोनों प्रकार की कोटि के रूपों में जुड़कर संज्ञा व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की संरचना करते हैं। इन व्युत्पादक प्रत्ययों को उदाहरण सहित इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:—

(१) {अ–}

पूर्व व्यु० प्र०		मूल प्रातिपदिक		व्युत्पन्न प्रातिपदिक	पूर्व व्यु० प्र० का अर्थ
अ–	+	–ज्ञान्	>	अज्ञान्	प्रतिकूलार्थक
अ–	+	–समय्	>	असमय्	हीनार्थक

(२) {अधि–}

अधि–	+	–नायक्	>	अधिनायक्	प्रधानार्थक
अधि–	+	–मास्	>	अधिमास्	आधिक्यार्थक
अधि–	+	–नियम्	>	अधिनियम्	अतिरिक्तार्थक

(३) {अधो–}

अधो–	+	–गति	>	अधोगति	हीनार्थक
अधो–	+	–वस्त्र	>	अधोवस्त्र	निम्नार्थक

(४) {अन्–}

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा		संज्ञा	व्यु० पूर्व प्र० का अर्थ
अन्–	+	–रितु	>	अन्रितु (अनऋतु)	विपरीतार्थक
अन्–	+	–अध्याय्	>	अनध्याय्	अभावार्थक एवं क्रिया के न होने का भाव।
अन्–	+	–आदर्	>	अनादर्	राहित्य एवं हीनार्थक

व्यु० पूर्व प्र०		क्रिया		संज्ञा	अर्थ
अन्–	+	–बन्	>	अन्बन्	अभावार्थक

(५) {अनु–}

अनु–	+	–चर्	>	अनुचर्	'बाद में' अर्थद्योतक
अनु–	+	–शीलन्	>	अनुशीलन्	'बार-बार' अर्थद्योतक
अनु–	+	–कृति	>	अनुकृति	'समान' अर्थद्योतक
अनु–	+	–क्रम्	>	अनुक्रम्	'नियमित' अर्थद्योतक
अनु–	+	–ताप्	>	अनुताप्	'करने वाला' अर्थद्योतक
अनु–	+	–उत्तर्दायी	>	अनुत्तर्दायी	अभावार्थक

(६) {अप्–}

अप्–	+	–कर्म	>	अप्कर्म	हीनार्थक
अप्–	+	–शब्द	>	अप्शब्द	कुत्सार्थक
अप्–	+	–व्यय्	>	अप्व्यय्	व्यर्थ एवं आधिक्यार्थक
अप्–	+	–यश्	>	अप्यश्	विरोधार्थक
अप्–	+	–क्रम्	>	अप्क्रम्	अनुपयुक्तार्थक
अप्–	+	–मृत्यु	>	अप्मृत्यु	आकस्मिक अर्थद्योतक

(७) {अभि–}

अभि–	+	–सिंचन्	>	अभिसिंचन्	आधिक्यार्थक
अभि–[अभ्य्]	+	–उदय्	>	अभ्युदय्	'श्रेष्ठता' अर्थद्योतक
अभि–	+	–मत्	>	अभिमत्	निजी एवं स्थिर अर्थद्योतक

(८) {अल्–}

(९) {अव्–}

अव्–	+	–गुन्	>	अव्गुन् (अवगुण)	हीनार्थक
अव्–	+	–धारना	>	अव्धारना (अवधारणा)	विशिष्टार्थक

{-गुन्} के साथ {अव्-} रूपग्राम का सहरूपग्राम {-औ} मुक्तवितरण की स्थिति में वितरित है, यथा :—

–अव्~–औ– + – गुन् > अवगुन्~औगुन्

(१०) {आ–}

आ–	+	–गमन्	>	आगमन्	विरोधार्थक

(११) {उप्–}

उप्–	+	–मंत्री	>	उप्मंत्री	'कुछ घटकर' अर्थद्योतक

(१२) {क–}

क–	+	–पूत्	>	कपूत्	हीनार्थक

(१३) {कु–}

कु–	+	–कर्म	>	कुकर्म	कुत्सित एवं हीनार्थक

(१४) {दुर्–}

दुर्– + –गुन् > दुर्गुन् (दुर्गुण) हीनार्थक
दुर्– + –भाग्य > दुर्भाग्य 'बुरा' अर्थद्योतक

{–दुर्} का एक सहरूपग्राम {–दुस्} है जो /स्/ से आरम्भ होने वाले प्रातिपदिकों के पूर्व आता है:—

दुस्– + –साहस् > दुस्साहस् अनुपम एवं अनुचित अर्थद्योतक

(१५) {निर्–}

व्यु० पूर्व-प्र०		क्रि० प्रा०		संज्ञा व्यु० प्रा०	अर्थ
निर्–	+	–झर्	>	निर्झर्	'निरन्तर' अर्थद्योतक

(१६) {पर्–}

पर्– + –बाबा > पर्बाबा 'पूर्व पीढ़ी का सम्बन्ध'
पर्– + –लोक् > पर्लोक् भिन्नार्थक

(१७) {परा–}

परा– + –जय् > पराजय् विपरीतार्थक

(१८) {परि–}

परि– + –गड़ँना > परिगँड़ना (परिगणना) 'पूरी' अर्थद्योतक
परि– + –ग्रहन् > परिग्रहन् (परिग्रहण) 'अच्छी तरह' अर्थद्योतक
परि– + –ताप् > परिताप् 'अत्यधिक' अर्थद्योतक
परि– + –जन् > परिजन् 'आश्रित' अर्थद्योतक
परि– + –भ्रमन् > परिभ्रमन् (परिभ्रमण) 'चारों ओर' अर्थद्योतक

(१९) {पुनर्–}

पुनर्– + –उत्थान् > पुनरुत्थान् 'दुबारा' अर्थद्योतक

(२०) {पुरा–}

पुरा– + –तत्त्व > पुरातत्त्व 'प्राचीन' अर्थद्योतक

(२१) {प्र–}

प्र– + –आचार्य > प्राचार्य 'उत्कर्ष' अर्थद्योतक
प्र– + –कोप् > प्रकोप् 'अत्यधिक' अर्थद्योतक

(२२) {प्राक्–}

प्राक्– + –कथन् > प्राक्कथन् 'पूर्व का' अर्थद्योतक

(२३) {वि–}

वि– + –योग् > वियोग् विपरीतार्थक
वि– + –भाग् > विभाग् अंश अर्थक
वि– + –ज्ञान् > विज्ञान् विशिष्टार्थक
वि– + –देश् > विदेश् अन्यार्थक

(२४) {–वै}

वै– + –रागी > वैरागी अभावार्थक
वै– + –भाश्य > वैभाश्य (वैभाष्य) विस्तृतार्थक

(२५) {स–}

स– + –पूत् > सपूत् अच्छा अर्थद्योतक

(२६) {सत्–}

सत्– + –कर्म > सत्कर्म 'श्रेष्ठ' द्योतक

स्वरों एवं कंठ्य सघोष व्यंजनों के पूर्व {–सत्} का {-सद्} सहरूपग्राम आता है—

सद्– + –गुरु > सद्गुरु 'श्रेष्ठ' द्योतक
सद्– + –आचार् > सदाचार् ''

(२७) {सब्–}

सब्– + –जज् > सब्जज् 'घटकर' द्योतक

(२८) {सम्–}

सम्– + –वेग् > संवेग् 'तीव्रता' द्योतक
सम्– + –आदर् > समादर् विशेषार्थक
सम्– + –अन्वय् > समन्वय् 'नियमित' द्योतक
सम्– + –वयस्क > संवयस्क 'समान' अर्थद्योतक

तवर्ग व्यंजनों के पूर्व {सम्-} का {सन्-} सहरूपग्राम आता है—

सन्– + –तोश् > सन्तोश् (सन्तोष) 'अच्छी तरह' अर्थद्योतक

(२९) {सर्–}

सर्– + –पंच > सर्पंच 'प्रधानार्थक'

(३०) {सह्-}

सह्- + -योगी > सह्योगी 'साथ' द्योतक

(३१) {सु-}

सु- + -कवि > सुकवि श्रेष्ठतार्थक

सु- + -दर्शन् > सुदर्शन् 'सुन्दर'

सु- + -गन्ध > सुगन्ध 'उत्तम'

सु- + -कीर्ति > सुकीर्ति 'श्रेष्ठ'

(३२) {स्व-}

स्व्- + -देश् > स्वदेश् 'अपना' अर्थद्योतक

३.१.१.१.२ विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना

विभिन्न कोटि के मूल अथवा व्युत्पन्न प्रातिपदिकों में निम्नलिखित पूर्व व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की संरचना होती है—

(१) {अ-}

व्यु० पूर्व प्र० संज्ञा विशेषण व्यु० प्रा० व्यु० पूर्व प्र० का अर्थ

अ- + -थाह् > अथाह् प्रतिकूलार्थक

अ- + -छूत् > अछूत् हीनार्थक

अ- + -कम्प > अकम्प अभावार्थक

व्यु० पूर्व प्र० क्रिया विशेषण व्यु० प्रा० अर्थ

अ- + -पढ् > अपढ् प्रतिकूलार्थक

(२) {अधि-}

पू० व्यु० प्र० वि० वि० व्यु० प्रा० अर्थ

अधि- + -शेश् > अधिशेश्=अधिशेष 'कम' अर्थद्योतक

(३) {अध्य-} क्रिया-विशेषण में जोड़ा जाता है:—

अध्य- + -आरूढ् > अध्यारूढ् =अध्यारूढ्

(४) {अन्-}

व्यु० पूर्व प्र० संज्ञा विशेषण व्यु० प्रा० पूर्व प्र० का अर्थ

अन्- + -अधिकार् > अनधिकार् अभावार्थक

अन्- + -मोल् > अन्मोल् 'क्रिया से परे' अर्थक

व्यु० पूर्व प्र० विशेषण विशेषण व्यु० प्रा० पूर्व प्र० का अर्थ

अन्- + -अभिव्यक्त > अनभिव्यक्त निषेधार्थक

अन्- + -आदि > अनादि 'अभावार्थक एवं शाश्वत होने का भाव'

व्यु० पूर्व प्र०		क्रिया		विशेषण व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
अन्–	+	–जान्	>	अन्जान्	निषेधार्थक
अन्–	+	–गढ़्	>	अन्गढ़्	हीनार्थक
अन्–	+	–गिना	>	अन्गिना	'क्रिया से परे'

(५) {अनु–}

पूर्व व्यु० प्र०		संज्ञा		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
अनु–	+	–रूप्	>	अनुरूप्	'समान' अर्थद्योतक

(६) {अप्–} – संज्ञा प्रा० के पश्चात् जुड़ता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
अप्–	+	–रूप्	>	अप्रूप्	कुत्सार्थक

(७) {अल्–} विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

अल्–	+	–मस्त	>	अल्मस्त	'सदा' अर्थद्योतक

(८) {अव्–} संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
अव्–	+	–गीत्	>	अव्गीत्	हीनार्थक
अव्–	+	–चेतन्	>	अव्चेतन्	अभावार्थक

(९) {उन्–} विशेषणों के पूर्व जुड़ता है:—

२०, ३० आदि संख्यावाचक विशेषणों में से जिस संख्यावाचक विशेषण के पूर्व जोड़ा जाता है, उससे उस संख्या से 'एक कम' का भाव द्योतित होता है:—

उन्– + –बीस् {निस्}~{नीस्} > उन्निस्~उन्नीस्

उन्– + तीस् {तिस्}–~{तीस्} > उन्तिस्~उन्तीस्

(१०) {कु–} संज्ञा एवं क्रिया कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
कु–	+	–रूप्	>	कुरूप्	'बुरा' अर्थद्योतक

व्यु० पूर्व प्र०		क्रिया प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
कु–	+	–पढ़्	>	कुपढ़्	हीनता अर्थद्योतक

(११) {खर्–} संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

खर्–	+	–दिमाग्	>	खर्दिमाग्	हीनार्थक एवं 'अप्रिय' अर्थद्योतक

(१२) {दुर्–} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है। इसका एक सह-रूपग्राम {दु} है जो /–वला/ के पूर्व आता है।

पूर्व व्यु० प्र०		संज्ञा प्रा०		वि० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
दुर्–	+	–वल्	>	दुर्वल्	'अल्प' अर्थद्योतक

(१३) {नि–} –संज्ञा एवं विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

पूर्व व्यु० प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
नि–	+	–डर्	>	निडर्	'अभाव' अर्थद्योतक

व्यु० पूर्व प्र०		विशे० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
नि–	+	–गूढ्	>	निगूढ्	'अति' अर्थद्योतक

(१४) {निर्–} –संज्ञा एवं विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों के पूर्व जुड़ता है:–

पूर्व व्यु० प्र०		सं० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
निर्–	+	–अंकुश्	>	निरंकुश्	'विना' अर्थद्योतक
निर्–	+	–अक्षर्	>	निरक्षर्	'अभाव' अर्थद्योतक
निर्–	+	–अपराध्	>	निरपराध्	निषेधार्थक

व्यु० पूर्व प्र०		विशे० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
निर्–	+	–अन्तर्	>	निरन्तर्	निषेधार्थक

(१५) {पर्–} –क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

पर्–	+	–अधीन्	>	पराधीन्	'दूसरे के' अर्थद्योतक

(१६) {परि–} –विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

परि–	+	–तुश्ट	>	परितुश्ट=परितुष्ट	'बहुत अधिक' अर्थद्योतक

(१७) {प्र–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

प्र–	+	–बल्	>	प्रबल्	विशिष्टार्थक

(१८) {प्राग्–} –विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

प्राग्–	+	–वैदिक्	>	प्रागवैदिक्	'पूर्व' द्योतक
प्राग्–	+	–ऐतिहासिक्	>	प्रागैतिहासिक	'पूर्व' द्योतक

(१९) {बर्–} –संज्ञा एवं विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:–

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
बर्–	+	–क़रार्	>	बर्क़रार्	निश्चयार्थक

व्यु० पूर्व प्र०		विशे० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
बर्–	+	–खिलाफ्	>	बर्खिलाफ्	निश्चयार्थक

(२०) {बा–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

बा–	+	–असर्	>	बाअसर्	'रखने वाला'

(२१) {बे–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

बे– + –अकल् > बेअकल् 'बिना' अर्थद्योतक

(२२) {वै–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

वै– + –रागी > वैरागी[1] अभावार्थक

(२३) {ला–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

ला– + –इलाज् > लाइलाज् 'परे' अर्थद्योतक

(२४) {स–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

स– + –चेतन् > सचेतन् युक्त

(२५) {सम्–} –संज्ञा एवं विशेषण प्रातिपदिकों के पूर्व इसका योग होता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
सम्–	+	–रूप्	>	संरूप्	समान

व्यु० पूर्व प्र०		विशे० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
सम्–	+	–दर्शी	>	संदर्शी	समान
सम्–	+	–पूर्ण	>	संपूर्ण	विशिष्टार्थक
सम्–	+	–उत्सुक्	>	समुत्सुक्	,,

(२६) {सु–} –संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
सु–	+	–गन्ध	>	सुगन्ध[2]	उत्तम
सु–	+	–कुमारी	>	सुकुमारी	'कोमल'

व्यु० पूर्व प्र०		विशे० प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
सु–	+	–दृढ्	>	सुदृढ्	आधिक्यार्थक

व्यु० पूर्व प्र०		क्रिया प्रा०		विशे० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
सु–	+	–जान्	>	सुजान्	चतुर्

---

१. प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण दोनों कोटियों में प्रयुक्त होता है।
२. प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण कोटियों में प्रयुक्त होता है।

(२७) {शा–} –क्रिया कोटि के प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

शा– + –मिल् > शामिल् समेतार्थक

३.१.१.१.३ क्रिया-विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना

संज्ञा, विशेषण, क्रिया विशेषण में से किसी एक या अधिक कोटि के प्रातिपदिकों में निम्नलिखित पूर्व व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से क्रियाविशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की संरचना होती है:—

(१) {दर्–} –विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

दर्– + –असल् > दरसल् 'में' अर्थद्योतक

(२) {फिल्–} –क्रिया-विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

फिल्– + –हाल् > फिल्हाल् 'निश्चय' अर्थद्योतक

(३) {ब–} –संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया-विशेषणों के पश्चात् जुड़ता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		अव्यय व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
ब–	+	–खूबी	>	बखूबी	'अनुसार'

व्यु० पूर्व प्र०		विशेषण		अव्यय व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
ब–	+	–गैर्	>	बगैर्	'बिना'
ब–	+	–मुश्किल्	>	बमुश्किल्	'से' अर्थद्योतक

व्यु० पूर्व प्र०		क्रि० वि०		अव्यय व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
ब–	+	–खुद्	>	बखुद्	'से' अर्थद्योतक

(४) {बहर्–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

बहर्– + –हाल् > बहर्हाल् 'निष्कर्ष' अर्थद्योतक

(५) {बा–} –संज्ञा कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

बा– + –वजूद् > बावजूद् अनुसार

(६) {बे–} –संज्ञा एवं क्रिया-विशेषण कोटि के प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है:—

व्यु० पूर्व प्र०		संज्ञा प्रा०		क्रि० वि० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
बे–	+	–शक्	>	बेशक्	'बिना'

व्यु० पूर्व प्र०		क्रि० वि० प्रा०		क्रि० वि० व्यु० प्रा०	पूर्व प्र० का अर्थ
बे–	+	–खट्के	>	बेखट्के	'बिना'

३.१.१.२ व्युत्पादक परप्रत्ययों द्वारा व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना (मुक्तरूप + आवद्धरूप)

व्युत्पादक परप्रत्यय किसी मूल प्रातिपदिक, व्युत्पन्न प्रातिपदिक अथवा समास शब्द के पश्चात् जुड़कर दूसरे प्रकार के प्रातिपदिक व्युत्पन्न करते हैं। ये आवद्ध रूप होते हैं। इनका स्वतंत्र रूप में प्रयोग नहीं होता है। इनकी अपनी कोई कोटि भी नहीं होती है। ये प्रातिपदिकों के पश्चात् प्रयुक्त होकर, उनके अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं तथा या तो उन मुक्त रूपों की कोटियों का ही निर्माण करते हैं अथवा उनसे भिन्न कोटियों का निर्माण करते हैं।

हिन्दी में व्युत्पादक परप्रत्ययों की लम्बी सूची है तथा इनसे निर्मित व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना रूपों की संख्या का पता लगाना अत्यंत दुष्कर कार्य है। व्युत्पादक परप्रत्यय का योग मूल-प्रातिपदिक के अतिरिक्त व्युत्पन्न-प्रातिपदिक के पश्चात् भी होता है। मूल-प्रातिपदिक के पश्चात् अधिक से अधिक चार व्युत्पादक-परप्रत्ययों का योग हो सकता है। यथा:—वनाव्टीपन्। इसमें मूल-प्रातिपदिक {वन्–} के बाद क्रमशः {-आ-} {-वट्-} {-ई} एवं {-पन्} का योग हो रहा है।

नीचे उपलब्ध व्युत्पादक परप्रत्ययों का संक्षिप्त अध्ययन इस आधार पर प्रस्तुत किया जा रहा है कि वे किस प्रकार की कोटि के प्रातिपदिक व्युत्पन्न करते हैं। सर्वप्रथम संधि-विचार प्रस्तुत किया जा रहा है।

संधि-विचार

ध्वन्यात्मक एवं रूपग्रामिक प्रतिवंधित संधि अर्थात् रूपान्तरण के नियम इस प्रकार हैं।

ध्वन्यात्मक प्रतिबंधित—इन नियमों में $V_1 \rightarrow$ /अ/

(१) दीर्घ स्वरान्त एकाक्षर प्रातिपदिकों के स्वरों में स्वरारम्भ परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में निम्न प्रकार से परिवर्तन होते हैं:—

(क) /आ/ का लोप

(ख) /ओ/ > /उ/

(ग) /ई/ > /इय्/

(२) यदि किसी प्रातिपदिक का अन्त ($\bar{V}$) $\bar{V}$ से होता है तो (C)V $\overset{\frown}{V}$ क्रम से आरम्भ होने वाले परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक अन्त्य दीर्घ स्वर / स्वरों का लोप हो जाता है।

(३) पश्च संवृत्त दीर्घ स्वर /ऊ/ के अतिरिक्त एकाक्षर से अधिक अक्षरों

वाले अन्य दीर्घ स्वरान्त प्रातिपदिकों के पश्चात् स्वर से आरम्भ होने वाले पर-प्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिकों के अन्त्य स्वरों का लोप हो जाता है। ऊकारान्त प्रातिपदिकों (एकाक्षर से अधिक अक्षरों वाले) में VCC क्रम से आरम्भ होने वाले परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक का अन्त्य /ऊ/>/उ/ में बदल जाता है तथा अन्य क्रम के स्वरारम्भ होनेवाले परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक का अन्त्य /ऊ/>/उ/ में बदलता है; साथ ही पर-प्रत्ययों के आदि स्वरों का भी लोप हो जाता है।

(४) /अ/ का लोप

(क) /अ/ अन्त्य प्रातिपदिकों के पश्चात् स्वर से आरम्भ होने वाले पर-प्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में

(ख) (C) VC V_1C अथवा VC V C VC V_1C क्रम के प्रातिपदिकों में स्वर से आरम्भ होने वाले परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक के अन्त्याक्षर का V_1

'$\bar{V}CV_1C$' क्रम के प्रातिपदिक में V_1 का लोप विकल्प से होता है।

(ग) $CVC\bar{V}$ क्रम के प्रातिपदिकों में $CV_1C\bar{V}$ क्रम के परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में परप्रत्यय का V_1

(५) /अ/ का आगम

$CV_1CC\bar{V}$ क्रम के प्रातिपदिक में $C\bar{V}(C\bar{V})$ क्रम के परप्रत्यय के जुड़ने पर यदि प्रातिपदिक का अन्त्य $\bar{V}$ लुप्त होता है तो प्रातिपदिक का व्यंजन गुच्छ समाप्त हो जाता है एवं मध्य में V_1 का आगम हो जाता है।

(६) /अ/ का विपर्यय

(C) VC क्रम के ह्रस्व स्वर युक्त प्रातिपदिकों में जब $CV_1C\bar{V}$ क्रम का परप्रत्यय जुड़ता है तो परप्रत्यय के आदि अक्षर का व्यंजन पश्चात् V_1 व्यंजन पूर्व अर्थात् परप्रत्यय की आदि स्थिति में आता है।

रूपग्रामिक प्रतिबंधित

(१) '$C\bar{V}C$' क्रम वाले प्रातिपदिकों के पश्चात् निम्नलिखित परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिकों के दीर्घ स्वरों में /आ/>/अ/; /ई/>/इ/; /ऊ/>/उ/; /ए/>/इ/ एवं /ओ/>/उ/ में बदल जाते हैं:—

{–/–अल्ला, –आई, –आर्, –आरी, –आड़्, –आड़ी, –आवट्, –इया, –इयारा, –ईना, –ईल्, –ईला, –उआ, –एतर्, –एरा, –एल्, –एली, –ओर्, –ओला, –औती, –औना, –औरी, –औड़ा, –कारा, –की, –जादा, –ड़ा, –वारा, –वाड़्/}

(२) (C) $\bar{V}CV$ अथवा $C\bar{V}CVC$ क्रम वाले द्व्यक्षर प्रातिपदिकों में जब निम्नलिखित परप्रत्यय जुड़ते हैं तो प्रातिपदिकों के प्रथमाक्षर के दीर्घ स्वर रूपग्रामिक प्रतिबंधित नियम १ के स्वरों के अनुरूप ही परिवर्तित हो जाते हैं :—

{/–अक्कड़्, –आइन्, –आई, –आरी, –औटा, –पा/}

(३) निम्नलिखित परप्रत्ययों के जुड़ने पर द्व्यक्षर प्रातिपदिकों के अन्त्य स्वरों का लोप हो जाता है :—

(/–क्राना, –त्री, –ती, –पन्, –मी, –ली, –यित्री, –हारा/}

(४) निम्नलिखित परप्रत्ययों के जुड़ने पर द्व्यक्षर स्वरान्त प्रातिपदिकों के द्वितीय अक्षर के अन्त्य स्वर का लोप हो जाता है तथा प्रथमाक्षर के दीर्घ स्वरों में /आ/>/अ/; /ई/>/इ/; /ऊ/>/उ/; /ए/>/इ/ एवं /ओ/>/उ/ में बदल जाते हैं :—

{/–आस्, –आर्, –आड़ी, –आया, –इयल्, –इया, –ऊटा, –एला, –एड़्, –ऐत्, –ला, –वानी, –वाड़ा/}

(५) {–अम्} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में द्व्यक्षर प्रातिपदिकों में यदि द्वितीय अक्षर का क्रम $C\bar{V}C$ होता है तो प्रातिपदिक के अन्तिमाक्षर का $\bar{V}>V$ में बदल जाता है।

(६) {-ईत्} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में द्व्यक्षर प्रातिपदिक का अन्त यदि 'अय्' से होता है तो प्रातिपदिक के अन्तिमाक्षर के शीर्ष एवं परगह्वर का लोप हो जाता है।

(७) {-इक्} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में एकाक्षर से अधिक अक्षरों वाले प्रातिपदिकों के प्रथम अक्षर में यदि /अ/, /इ/ अथवा /उ/ होते हैं तो क्रमशः /आ/, /ऐ/ एवं /औ/ में बदल जाते हैं।

(८) द्व्यक्षर प्रातिपदिकों में यदि अक्षर-सीमा दो व्यंजन गुच्छों के मध्य होती है तो {–ईली} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में प्रथम अक्षर के परगह्वर (गुच्छ का पूर्ववर्ती सदस्य) तथा {/–अत्, –इन्दा, –एरा, –ऐल्, –ओड़ी, –क्राना, –ट्ठा, –पन्/} परप्रत्ययों की यौगिक प्रक्रिया में द्वितीय अक्षर के पूर्वगह्वर (गुच्छ का परवर्ती सदस्य) का लोप हो जाता है।

(९) {–अल्} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में /व्/ से अन्त्य प्रातिपदिकों का अन्त्य /व्/>/य्/ में बदल जाता है।

(१०) {–ता} परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में सघोष अल्पप्राण कंठ्य स्पर्श व्यंजन /ग्/ से अन्त्य प्रातिपदिक का अन्त्य /ग्/ अघोष अल्पप्राण कंठ्य स्पर्श व्यंजन /क्/ में बदल जाता है।

३.१.१.२.१ संज्ञा व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना

(१) {–ϕ} –इसको धातुओं में जोड़कर संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण किया जाता है। इस प्रक्रिया में कभी-कभी धातु का स्वर परिवर्तित होता है। यथा:—

चल्–	+	–ϕ	>	चाल्
मिल्–	+	–ϕ	>	मेल्

(२) {–अइया} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है। यथा:—

मा–	+	–अइया	>	मइया
भाई–	+	–अइया	>	भइया

(३) {–अईं}

विशेषण		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
तेरह्–	+	–अईं	>	तेरहीं

(४) {–अक्} –संज्ञा, विशेषण एवं धातुओं में जोड़कर संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण किया जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अंक–	+	–अक्	>	अंकक्
विशे० प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
शत्–	+	–अक्	>	शतक्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बैठ्–	+	–अक्	>	बैठक्

(५) {–अक्कड़्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:—

साधू–	+	–अक्कड़्	>	सधुक्कड़्

(६) {–अग्य} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:—

मर्म–	+	–अग्य	>	मर्मज्ञ[1]

(७) {–अज्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

अग्र–	+	–अज्	>	अग्रज्[1]

(८) {–अत्} –संज्ञा प्रातिपदिकों, धातुओं एवं अव्ययों में जोड़ा जाता है। यथा:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
हज्जाम्–	+	–अत्	>	हजामत्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बच्–	+	–अत्	>	बचत्
अव्यय		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
जरूर्–	+	–अत्	>	जरूरत्

१. प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण दोनों कोटियों में प्रयुक्त होता है।

(९) {–अत्व} –संज्ञा एवं सर्वनामों के पश्चात् इसका योग होता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पुरुष्–	+	–अत्व	>	पुरुषत्व
सर्वनाम प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अप्ना–	+	–अत्व	>	अप्नत्व

(१०) {–अन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है। यथा:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अंक–	+	–अन्	>	अंकन्
विशे० प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
झूठ्–	+	–अन्	>	झूठन्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बेल्–	+	–अन्	>	बेलन्

(११) {–अर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

गाँठ् {गट्ठ}– + –अर् > गट्ठर्

(१२) {–अल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

पाँव्– + –अल् > पायल्

(१३) {–अल्ला} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

पूंछ्– + –अल्ला > पुंछल्ला

(१४) {–अड़्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

कीच्– + –अड़् > कीचड़्

(१५) {–आ} –विशेषण मूल प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है:—

विशे० प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
प्रतिश्ठ–	+	–आ	>	प्रतिश्ठा (प्रतिष्ठा)
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पूज्–	+	–आ	>	पूजा
काँट्–	+	–आ	>	काँटा

(१६) {–आइन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इससे स्त्रीलिंग संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण होता है:—

पंडित्–	+	–आइन्	>	पंडिताइन्
ठाकुर्–	+	–आइन्	>	ठकुराइन्

(१७) {–आई} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पंडित्–	+	–आई	>	पंडिताई

लोग्– + –आई > लुगाई

विशे० प्रा० परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

अधिक्– + –आई > अधिकाई

अच्छा– + –आई > अच्छाई

धातु परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

धो– + –आई > धुआई

बो– + –आई > बुवाई

(१८) {–आक्} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

धातु परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

फिर्– + –आक् > फिराक्

(१९) {–आका} –अव्ययों में जोड़ा जाता है:—

धम्– + –आका > धमाका

पट्– + –आका > पटाका

(२०) {–आत्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

मकान्– –आत् > मकानात्

(२१) {–आत्य} –अव्ययों में जोड़ा जाता है:—

दक्षिन्– + –आत्य > दक्षिनात्य[1] (दक्षिणात्य)

(२२) {–आन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा० परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

मालिक्– + –आन् > मालिकान्

धातु परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

उठ्– + –आन् > उठान्

(२३) {–आना} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

घर्– + –आना > घराना

राजपूत्– + –आना > राजपूताना

(२४) {–आनी} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है। इसके योग से स्त्रीलिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

संज्ञा प्रा० परप्रत्यय संज्ञा प्रा०

नौकर्– + –आनी > नौकरानी

सेठ्– + –आनी > सेठानी

---

१. प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण दोनों कोटियों में प्रयुक्त ।

धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
कह्–	+	–आनी	>	कहानी

(२५) {–आन्द} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

सड़–	+	–आन्द	>	सड़ान्द

(२६) {–आप्} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

मिल्–	+	–आप्	>	मिलाप्

(२७) {–आपा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

बहिन्–	+	–आपा	>	बहिनापा

(२८) {–आम्} धातुओं में जोड़ा जाता है:—

लग्–	+	–आम्	>	लगाम्

(२९) {–आयत्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है।

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पंच–	+	–आयत्	>	पंचायत्
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बहुत्–	+	–आयत्	>	बहुतायत्

(३०) {–आर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

सोना–	+	–आर्	>	सुनार्
लोहा–	+	–आर्	>	लुहार्

(३१) {–आरा} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
हत्या–	+	–आरा	>	हत्यारा
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
निबट्–	+	–आरा	>	निब्टारा

(३२) {–आरी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
भीख्–	+	–आरी	>	भिखारी

(३३) {–आल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

ससुर्–	+	–आल्	>	ससुराल्

(३४) {–आलय्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

पुस्तक्–	+	–आलय्	>	पुस्तकालय्

(३५) {–आव्} –विशेषण प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है:—

विशेषण		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अलग्–	+	–आव्	>	अलगाव्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
छिड़क्–	+	–आव्	>	छिड़काव्

(३६) {–आवत्} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

कह्–	+	–आवत्	>	कहावत्

(३७) {–आवट्} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
आम्–	+	–आवट्	>	अमावट्
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
तर्–	+	–आवट्	>	तरावट
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
मिल्–	+	–आवट्	>	मिलावट्
लिख्–	+	–आवट्	>	लिखावट्

(३८) {–आवा} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

पहन्–	+	–आवा	>	पहनावा
बढ़्–	+	–आवा	>	बढ़ावा

(३९) {–आस्} –विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:—

विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
मीठा–	+	–आस्	>	मिठास्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पी–	+	–आस्	>	पियास्

(४०) {–आसा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

मुँह्–		–आसा	>	मुँहासा

(४१) {–आड़्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

लात्–	+	–आड़्	>	लताड़्

(४२) {–आड़ी} –अव्ययों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:—

धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
खेल्–	+	–आड़ी	>	खिलाड़ी
अव्यय		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
आगे–	+	–आड़ी	>	अगाड़ी
पीछे–	+	–आड़ी	>	पिछाड़ी

(४३) {–इ} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है। यह स्त्रीवाचक प्रत्यय है:—

अतृप्त–	+	–इ	>	अतृप्ति
अनासक्त–	+	–इ	>	अनासक्ति

(४४) {–इका} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है। यह स्त्रीवाचक प्रत्यय है:—

अध्यापक्–	+	–इका	>	अध्यापिका
अभिसार्–	+	–इका	>	अभिसारिका

(४५) {–इज्म} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

हिन्दू–	+	–इज्म	>	हिन्दुइज्म
नेश्नल्–	+	–इज्म	>	नेश्नलिज्म

(४६) {–इन्} –यह संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से 'स्त्रीलिंग द्योतक' प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

सुनार्–	+	–इन्	>	सुनारिन्
धोबी–	+	–इन्	>	धोबिन्

{–इन्} का सहरूपग्राम {–इनी} / तपस्वी / के पश्चात् आता है।

(४७) {–इन्ग} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

राशन्–	+	–इन्ग	>	राश्निंग
साइकिल्–	+	–इन्ग	>	साइक्लिंग

(४८) {–इन्दा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

कार्य–	+	–इन्दा	>	कारिन्दा

(४९) {–इमा} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

काला–	+	–इमा	>	कालिमा
लाल्–	+	–इमा	>	लालिमा

(५०) {–इयत्} –संज्ञा तथा विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अंग्रेज्–	+	–इयत्	>	अंग्रेजियत्
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
खास्–	+	–इयत्	>	खासियत्
मासूम्	+	–इयत्	>	मासूमियत्

(५१) {–इया} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
आढत्-	+	-इया	>	आढ़तिया
कुत्ता–	+	–इया	>	कुतिया
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पीला–	+	–इया	>	पीलिया
बूढा-	+	-इया	>	बुढिया
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
छल्–	+	–इया	>	छलिया

(५२) {–इयार्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अन्ध–	+	–इयार्	>	अंधियार्

(५३) {–इयारा} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

गली–	+	–इयारा	>	गलियारा
घास्–	+	–इयारा	>	घसियारा

(५४) {–इश्} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
रंज्–	+	–इश्	>	रंजिश्
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
वंद्–	+	–इश्	>	वन्दिश्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
माल्–	+	–इश्	>	मालिश्

(५५) {–इस्तान्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अफ्गान्–	+	–इस्तान्	>	अफ्गानिस्तान्

(५६) {–ई} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है तथा यह स्त्रीवाचक प्रत्यय है।[1] इसके अतिरिक्त कुछ पुल्लिग संज्ञा व्युत्पादक परप्रत्ययों से व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिकों एवं कृदन्तों के साथ जुड़कर स्त्रीलिंग संज्ञा व्युत्पन्न प्रातिपदिकों का निर्माण करता है।

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
गवाह्–	+	–ई	>	गवाही
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अकड़्बाज्–	+	–ई	>	अकड़बाजी
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
हँस्–	+	–ई	>	हँसी

जिन पुल्लिग संज्ञा व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से पुल्लिग व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् {–ई} परप्रत्यय जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न संज्ञा प्रातिपदिकों का निर्माण करता है, वे पुल्लिग संज्ञा व्युत्पादक परप्रत्यय निम्नलिखित हैं:—

(१)	{–अक्कड़}	दे० संज्ञा व्यु०	परप्रत्यय क्रम सं०	५
(२)	{–आना}	"	"	२३
(३)	{–इयारा}	"	"	५३
(४)	{–ओला}	"	"	६६
(५)	{–औटा}	"	"	६८
(६)	{–औड़ा}	"	"	७५
(७)	{–का}	"	"	७७
(८)	{–चा}	"	"	८७
(९)	{–जादा}	"	"	९१
(१०)	{–बाज्}	"	"	१०४
(११)	{–वाला}	"	"	१२१
(१२)	{–हारा}	"	"	१२९
(१३)	{–ड़ा}	"	"	१३०

---

१. [ई] यद्यपि यह स्त्रीलिंग वाचक प्रत्यय है किन्तु लिंग परिवर्तन के साथ साथ यह अर्थ परिवर्तन भी करता है। इस दृष्टि से द्रष्टव्य—'हिन्दी में लिंग-भेद के द्वारा सूक्ष्म अर्थ-भेद का द्योतन' (डा० बाबूराम सक्सेना) : 'हिन्दी अनुशीलन' (धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक), पृष्ठ १५१-५४।

व्युत्पन्न वर्तमानकालिक कृदन्त एवं भूतकालिक कृदन्तों[1] में भी जोड़ा जाता है :—

मर्ता– + –ई > मर्ती
मरा– + –ई > मरी

(५७) {–ईना} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

माह्– + –ईना > महीना

(५८) {–उआ} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

फाग्– + –उआ > फगुआ
राँड्– + –उआ > रँडुआ

(५९) {–एर्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अँध– + –एर्– > अँधेर्

(६०) {–एरा} –संज्ञा प्रातिपदिकों, एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
चित्र–	+	–एरा–	>	चितेरा
साँप्–	+	–एरा	>	सँपेरा
धातु		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
वस्–	+	–एरा	>	बसेरा

(६१) {–एल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

नाक्– + –एल् > नकेल्
फूल्– + –एल् > फुलेल्

(६२) {–एला} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

आधा– + –एला > अधेला

(६३) {–एली} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

हाथ– + –एली > हथेली
साथ्– {सह्} + –एली > सहेली

(६४) {–ऐल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
खप्पर्–	+	–ऐल्	>	खप्रैल्

१. दे० ३.१.१.२.५

धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
रख–	+	–ऐल्	>	रखैल्

(६५) {–ओई} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

बहन्–	+	–ओई	>	बहनोई
ननद्–	+	–ओई	>	नन्दोई

(६६) {–ओला} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

खाट्–	+	–ओला	>	खटोला
साँप्–	+	–ओला	>	सँपोला

(६७) {–ओहर्} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

धर्–	+	–ओहर्	>	धरोहर्

(६८) {–औटा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

काजल्–	{–काजर्}	+	–औटा	>	कजरौटा

(६९) {–औटी} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

कस्–	+	–औटी	>	कसौटी

(७०) {–औता} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
काठ्–	+	–औता	>	कठौता
धातु		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
समझ्–	+	–औता	>	समझौता

(७१) {–औती} –संज्ञा प्रातिपदिकों तथा धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बाप्–	+	–औती	>	बपौती
धातु		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
चुक्–	+	–औती	>	चुकौती
काट्–	+	–औती	>	कटौती

(७२) {–औना} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

खेल्–	+	–औना	>	खिलौना

(७३) {–औनी} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

मिल्–	+	–औनी	>	मिलौनी

(७४) {–औरी} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

नीम्–	{नीब्}	+	–औरी	>	निबौरी

(७५) {–औड़ा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

हाथ्– + –औड़ा > हथौड़ा

(७६) {–औड़ी} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पक्–	+	–औड़ी	>	पकौड़ी

(७७) {–क्का} –संख्यावाचक विशेषणों के पश्चात् लगता है :—

एक {इक्}–	+	–क्का	>	इक्का
दो {दुक्}–	+	–क्का	>	दुक्का
तीन {तिक्}–	+	–क्का	>	तिक्का
चार {चौक्}–	+	–क्का	>	चौक्का
छै {छक्}–	+	–क्का	>	छक्का

अन्य संख्यावाचक विशेषणों में {–क्का} के सहरूपग्राम शब्द-कोषीय स्तर पर प्रतिबंधित रूप में आते हैं। {–जा} का योग {पाँच–} के बाद, {–ता} का योग {सात–} के बाद; {–ठा} का योग {आठ्} के बाद तथा {–ला} का योग {नौ–} एवं {दस्–} के बाद होता है। {का–} के साथ {पाँच–} का {पं–} {सात–} का {सत्–}, {आठ–} का {अठ्–}, {नौ–} का {नह्–} एवं {दस्–} का {दह्–} सहरूपग्राम आते हैं।

(७८) {–कार्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

अंक–	+	–कार्	>	अंककार्
अदा–	+	–कार्	>	अदाकार्
अंगी–	+	–कार्	>	अंगीकार्

(७९) {–कारा} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

छूट्– + –कारा > छुट्कारा

(८०) {–की} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

डूब्– + –की > डुब्की

(८१) {–क्ड़ा} –'सौ' विशेषण के बाद जोड़ा जाता है :—

सौ– {सै–} + –क्ड़ा > सैक्ड़ा

(८२) {–गर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

जादू–	+	–गर्	>	जादूगर्
जिल्द–	+	–गर्	>	जिल्दगर्

(८३) {–गार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
याद्– + –गार् > यादगार्

(८४) {–गी} –संज्ञा एवं विशेषणों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
मर्द–	+	–गी	>	मर्दगी
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
नाराज्–	+	–गी	>	नाराज्गी
सादा–	+	–गी	>	साद्गी

(८५) {–गीर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
राह्– + –गीर् > राह्गीर्

(८६) {–गीरी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
नेता– + –गीरी > नेतागीरी
वावू– + –गीरी > वावूगीरी

(८७) {–चा} –इसका योग संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् होता है :—
सीँक्– + –चा > सीँक्चा

(८८) {–चारा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
भाई– + –चारा > भाईचारा

(८९) {–चीं} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
तव्ला– + –ची > तवल्ची
चिलम्– + –ची > चिलम्ची

(९०) {–जनी} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् जोड़ा जाता है :—
आग्– + –जनी > आग्जनी

(९१) {–जादा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
शाह– + –जादा > शँह्जादा (शहजादा)

(९२) {–टा} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—
झपट्– + –टा > झपट्टा

(९३) {–टी} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् इसका योग होता है :—
वधू– + –टी > वधूटी

(९४) {–डम्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
गुरु– + डम् > गुरुडम्

(९५) {–ता} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अध्यक्ष–	+	–ता	>	अध्यक्षता
कवि–	+	–ता–	>	कविता
अधिश्ठान्– {अधिश्ठा}	+	–ता	>	अधिश्ठाता (अधिष्ठाता)
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
अभिन्न–	+	–ता	>	अभिन्नता
अमर्–	+	–ता	>	अमर्ता
अयोग्य–	+	–ता	>	अयोग्यता
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
भोग्–	+	–ता	>	भोक्ता
हर्–	+	–ता	>	हर्ता

(९६) {–ती} –विशेषण एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
ज्यादा–	+	–ती	>	ज्याद्ती
कम्–	+	–ती	>	कम्ती
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
भर्–	+	–ती	>	भर्ती
बस्–	+	–ती	>	बस्ती

(९७) {–दान्} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

कलम्–	+	–दान्	>	कलम्दान्
पान्–	+	–दान्	>	पान्दान्

(९८) {–दार} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अमानत्–	+	–दार्	>	अमानत्दार

(९९) {–ना} –धातुओं के पश्चात् इसका प्रयोग होता है :—

झर्–	+	–ना–	>	झर्ना
गा–	+	–ना–	>	गाना

(१००) {–नामा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

किराया–	+	–नामा	>	किरायानामा

(१०१) {–नी} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं के पश्चात् इसका प्रयोग होता है। व्युत्पन्न प्रातिपदिक स्त्रीलिंग होते हैं :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
चाँद्–	+	–नी	>	चाँद्नी
मोर्–	+	–नी	>	मोर्नी
धातु		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
मिल्–	+	–नी	>	मिल्नी

(१०२) {–पन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
लड़का–	+	–पन्	>	लड़क्पन्
बच्चा–	+	–पन्	>	बच्पन
विशेषण प्रा०		**परप्रत्य**		**संज्ञा प्रा०**
अनोखा–	+	–पन्	>	अनोखापन्
अक्खड़्–	+	–पन्	>	अक्खड़्पन्

{बड़ा} के साथ {–पन्} का सहरूपग्राम {–अप्पन्} आता है :—

बड़ा–	+	–पन्	>	बड़प्पन्

(१०३) {–पा} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पूजा–	+	–पा	>	पुजापा
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
मोटा–	+	–पा	>	मुटापा
बूढ़ा–	+	–पा	>	बुढ़ापा

(१०४) {–बाज्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :–

पतंग–	+	–बाज्	>	पतंगबाज्[1]

(१०५) {–बी} –/धो/ धातु के साथ जुड़कर पुल्लिग कर्तृवाचक संज्ञा प्रातिपदिक व्युत्पन्न होता है :—

धो–	+	–बी	>	धोबी

---

१. प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण दोनों कोटियों में प्रयुक्त।

(१०६) {–मती} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

वास्– + –मती > वास्मती

(१०७) {–मन्} –धातु में जोड़ा जाता है :—

सी– + –मन् > सीमन्

(१०८) {–या} –संख्यावाचक विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

ढाई– {ढइ} + –या > ढइया

{या} के सहरूपग्राम {–आ} का योग / पाव् / के साथ होता है :—

पाव्– {पउ} + –आ > पउआ

(१०९) {–यित्री} –इकारान्त संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है। इसके योग से स्त्रीलिंगवाचक प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

कवि– + –यित्री > कव्यित्री

(११०) {–री} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

छाता {छत्}– + –री > छत्री

बाँस् {बाँसु}– + –री > बाँसुरी

(१११) {–रेज्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

रँग्– + –रेज् > रँगरेज्

(११२) {–ली} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

खुजा– + –ली > खुज्ली

(११३) {–वर्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

जान्– + –वर् > जान्वर्

(११४) {–वइया} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

पी– + –वइया > पिवइया

गा– + –वइया > गवइया

(११५) {–वा} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

मल्– + –वा > मल्वा

(११६) {–वान्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
रथ्–	+	–वान्	>	रथ्वान्
वाग्–	+	–वान्	>	वाग्वान्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
पक्–	+	–वान्	>	पक्वान्

(११७) {–वानी} –अव्ययों में जोड़ा जाता है:—

आगे– + –वानी > अग्वानी

(११८) {–वार्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
उम्मीद्–	+	–वार्	>	उम्मीद्वार्

(११९) {–वारा} –विशेषण एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:—

विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
आठ्–	+	–वारा	>	अठ्वारा
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
बाँट्–	+	–वारा	>	बट्वारा

(१२०) {–वाल्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:--

कोट् {कोत्}– + –वाल् > कोत्वाल्

(१२१) {–वाला} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:—

गाड़ी–	+	–वाला	>	गाड़ीवाला
इक्का {इक्के}–	+	–वाला	>	इक्केवाला
घर्–	+	–वाला	>	घर्वाला

(१२२) {–वाहा} –संज्ञा एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
हल्–	+	–वाहा	>	हल्वाहा
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
चर्–	+	–वाहा	>	चर्वाहा

(१२३) {–वाड़्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है:—

खेल्– + –वाड़् > खिल्वाड़्

(१२४) {–वाड़ा} –अव्ययों में जोड़ा जाता है:—

पीछे– + –वाड़ा > पिछ्वाड़ा

(१२५) {–वी ~ –वज्} –संज्ञा /भाई/ में जोड़ा जाता है:—

भाई– + –वी ~ –वज् > भाभी ~ भावज्

(१२६) {–हट्} –विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है:--

विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
चिक्ना	+	–हट्	>	चिक्नाहट्
धातु		परप्रत्यय		संज्ञा प्रा०
मुस्करा–	+	हट्	>	मुस्कराहट्

(१२७) {हर्[1]} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

पिता {पी}–	+	–हर	>	पीहर
खंड-	+	–हर्	>	खंडहर

(१२८) {–हार्} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

मनि=(मणि)–	+	–हार्	>	मनिहार्

(१२९) {–हारा} –संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

लक्ड़ी–	+	–हारा	>	लकड़्हारा

(१३०) {–ड़ा}–संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् इसका योग होता है :–

मुख्–	+	–ड़ा	>	मुख्ड़ा
चाम्–	+	–ड़ा	>	चम्ड़ा

(१३१) {–ड़ाई} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् इसका योग होता है। स्त्रीलिंग द्योतक प्रत्यय है। यथा :—

अंग–	+	–ड़ाई	>	अंगड़ाई

३.१.१.२.२ विशेषण व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना

(१) {–अक्} –संज्ञा एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :–

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
अप्हार्–	+	–अक्	>	अप्हारक्
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
अमोल्–	+	–अक्	>	अमोलक्

(२) {–अक्कड़्} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

पी–	+	–अक्कड़्	>	पिअक्कड़्

(३) {–अग्य} –संज्ञा प्रातिदपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अन्तर्–	+	–अग्य	>	अन्तरग्य (अन्तरज्ञ)

(४) {–अट्} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

चूस्–	+	–अट्	>	चूसट्

(५) {–अड्डी} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

फिसल्–{फिस्}+		–अड्डी	>	फिसड्डी

---

१. यह /घ्र्/ का परिवर्तित रूप है। किन्तु संकालिक स्तर पर इसे आबद्ध रूप मानना ही संगत है।

(६) {–अन्} –विशेषण पु० व्युत्पन्न प्रातिपदिकों में जुड़ता है तथा इसके योग से स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों का निर्माण होता है :—

गँवार– + –अन् > गँवारन्

(७) {–अंछु} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

उड़्– + –अंछु > उड़न्छु

(८) {–अन्त} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

रट्– + –अन्त > रटन्त

(९) {–अम्} –संज्ञा एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
विहंग–	+	–अम्	>	विहंगम्
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
अनूप्–	+	–अम्	>	अनुपम्

(१०) {–अल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

घाव्– + –अल् > घायल्

(११) {–अस्थ} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

आधीन्– + –अस्थ > अधीनस्थ

(१२) {–अस्वी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

तप– + –अस्वी > तपस्वी

तेज्– + –अस्वी > तेजस्वी

(१३) {–आ} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं अव्यय प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
वघेल्–	+	–आ	>	वघेला
बुन्देल्–	+	–आ	>	बुन्देला
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
मौजूद्–	+	–आ	>	मौजूदा

(१४) {–आई} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
पूरब्–	+	–आई	>	पुरबाई

विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
चौथा–	+	–आई	>	चौथाई
तीन {तिह्}–	+	–आई	>	तिहाई

(१५) {–आऊ} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :–

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
पंडित्–	+	–आऊ	>	पंडिताऊ
धातु		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
उड़ा–	+	–आऊ	>	उड़ाऊ
कमा–	+	–आऊ	>	कमाऊ

(१६) {–आक्} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

तैर्– + –आक् > तैराक्

(१७) {–आका} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

लड़्– + –आका > लड़ाका

(१८) {–आकी} –विशेषणों में जोड़ा जाता है :—

एक्– + –आकी > एकाकी

(१९) {–आकू} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

लड़्– + –आकू > लड़ाकू

(२०) {–आती} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

घर्– + –आती > घराती

(२१) {–आना} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

साल्– + –आना > सालाना

(२२) {–आनी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

वर्फ– + –आनी > वर्फानी

(२३) {–आमी} –अव्ययों में जोड़ा जाता है :—

आगे– + –आमी > आगामी

(२४) {–आया} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

बाकी– + –आया > बकाया

(२५) {–आर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

गाँव– + –आर् > गँवार्

(२६) {–आरी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

काजर्– + –आरी > कजरारी

(२७) {–आला} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

मिट्टी [मटि]– + –आला > मटियाला

(२८) {–आवर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :- -

दस्त- + -आवर् > दस्तावर्

(२९) {–आँही ~ – आँहियाँ} -संज्ञा में जोड़ा जाता है :- -

पश्चिम् [पछ्]- + -आँही ~ आँहियाँ > पछाँही ~ पछाँहियाँ

(३०) {–आड़ी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

खेल्– + -आड़ी > खिलाड़ी

(३१) {–इक्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अध्यात्म– + –इक् > आध्यात्मिक्

इतिहास– + –इक् > ऐतिहासिक्

भूगोल– + –इक् > भौगोलिक्

(३२) {–इत्} –संज्ञा, विशेषण एवं अव्ययों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
प्रकाश्–	+	–इत्	>	प्रकाशित्
प्रतिश्ठा–	+	–इत्	>	प्रतिश्ठित् (प्रतिष्ठित)
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
अतुल्–	+	–इत्	>	अतुलित्
अव्यय		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
एकत्र–	+	–इत्	>	एकत्रित्

(३३) {–इन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

मल्– + –इन् > मलिन्

(३४) {–इन्दा} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :–

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
शर्म–	+	–इन्दा	>	शर्मिन्दा
धातु		**परप्रत्यय**		**संज्ञा प्रा०**
चुन्–	+	–इन्दा	>	चुनिन्दा

(३५) {–इम्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

अन्तर् – + – इम् > अंतरिम्

(३६) {–इयल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :–

संज्ञा प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
दाड़ी	–	+	–	इयल्	>	दड़ियल्
धातु				**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
मर्	–	+	–	इयल्	>	मरियल्
अड़्	–	+	–	इयल्	>	अड़ियल्

(३७) {–इया} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
अखाड़ा	–	+	–	इया	>	अखाड़िया
दूध्	–	+	–	इया	>	दूधिया
धातु				**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
बढ़्	–	+	–	इया	>	बढ़िया
घट्	–	+	–	इया	>	घटिया

(३८) {–इल्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

बोझ् – + – इल् > बोझिल्

पंक – + – इल् > पंकिल्

(३९) {–इस्ट} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

नेश्नल् – + – इस्ट > नेश्नलिस्ट

संघ – + – इस्ट > संघिस्ट

(४०) {–ई} –संज्ञा प्रातिपदिकों, व्युत्पन्न वर्तमानकालिक कृदन्त एवं भूतकालिक कृदन्त, विशेषण प्रातिपदिकों, रूपान्तरित होनेवाले आकारान्त पु० विशेषण प्रातिपदिकों एवं अव्ययों में जोड़ा जाता है। इसके अतिरिक्त २१ पु० विशेषण व्युत्पादक परप्रत्ययों से व्युत्पन्न विशेषण प्रातिपदिकों के साथ जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न प्रातिपदिकों का निर्माण करता है।

संज्ञा प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
सनक्	–	+	–	ई	>	सनकी
अनार्	–	+	–	ई	>	अनारी
भोग्	–	+	–	ई	>	भोगी

[1]वर्तमानकालिक कृदन्त						परप्रत्यय		विशेषण प्रा० (स्त्रीलिंग वर्तमान-कालिक कृदन्त)
जाता	–	+	–	ई	>	जाती
[1]भूतकालिक कृदन्त				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
हुआ	–	+	–	ई	>	हुई
विशेषण प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
अच्छा	–	+	–	ई	>	अच्छी
अभंग्	–	+	–	ई	>	अभंगी
वातून्	–	+	–	ई	>	वातूनी
ऊपर्	–	+	–	ई	>	ऊपरी

जिन २१ पुल्लिंग विशेषण व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से पुल्लिंग व्युत्पन्न विशेषण प्रातिपदिकों के बाद {-ई} परप्रत्यय जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न विशेषण प्रातिपदिकों का निर्माण करता है, वे पु० विशेषण व्युत्पादक परप्रत्यय निम्नलिखित हैं (इसकी यौगिक प्रक्रिया में पु० व्युत्पन्न विशेषण प्रा० का अन्त्य स्वर /आ/ लुप्त हो जाता है।)

(१)	{-आका}- दे० विशेषण	व्युत्पन्न	परप्रत्यय	क्रम सं०	१७
(२)	{-आला}	"	"	"	२७
(३)	{-ईदा}	"	"	"	४२
(४)	{-ईला}	"	"	"	४५
(५)	{-ऊटा}	"	"	'	४९
(६)	{-एरा}	"	"	"	५५
(७)	{-एला}	"	"	"	५६
(८)	{-ऐला}	"	"	"	६२
(९)	{-ओला}	"	"	"	६५
(१०)	{-औना}	"	"	"	६६
(११)	{-काना}	"	"	"	७१
(१२)	{-खुरा}	"	"	"	७२
(१३)	{-जादा}	"	"	"	७९
(१४)	{-ट्ठा}	"	"	"	८०
(१५)	{-तना}	"	"	"	८२

१. दे० ३. १. १. २. ५.

(१६) {-ला} दे० विशेषण व्युत्पन्न परप्रत्यय क्रम सं० ९८
(१७) {-लौता} " " " १००
(१८) {-वना} " " " १०२
(१९) {-सा} " " " १०९
(२०) {-हरा} " " " १११

(२१) {-वाँ}—इससे व्युत्पन्न पुल्लिग विशेषण प्रातिपदिकों के बाद {-ई} का योग प्रतिबंधित है। जव {-वाँ} परप्रत्यय का योग मूल विशेषण प्रातिपदिकों के बाद होता है; केवल उन्हीं व्युत्पन्न पु० विशेषण प्रातिपदिकों के बाद {-ई} जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न विशेषण प्रातिपदिकों का निर्माण करता है।

(दे० विशे० व्यु० परप्रत्यय क्रम सं० १०४)

उदाहरण

पु० विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिक				परप्रत्यय {-ई}		स्त्रीलिंग विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिक
लड़ाका	–	+	–	ई	>	लड़ाकी
मटियाला	–	+	–	ई	>	मटियाली
पेचीदा	–	+	–	ई	>	पेचीदी
पथ्रीला	–	+	–	ई	>	पथ्रीली
कलूटा	–	+	–	ई	>	कलूटी
कमेरा	–	+	–	ई	>	कमेरी
सौतेला	–	+	–	ई	>	सौतेली
विशैला	–	+	–	ई	>	विशैली = (विषैली)
बिजौरा	–	+	–	ई	>	बिजौरी
मँझोला	–	+	–	ई	>	मँझोली
वच्काना	–	+	–	ई	>	वच्कानी
अकल्खुरा	–	+	–	ई	>	अकल्खुरी
हराम्जादा	–	+	–	ई	>	हराम्जादी
इकट्ठा	–	+	–	ई	>	इकट्ठी
इत्ना	–	+	–	ई	>	इत्नी
लाड़ला	–	+	–	ई	>	लाड़ली
इक्लौता	–	+	–	ई	>	इक्लौती
सुहाव्ना	–	+	–	ई	>	सुहाव्नी
ऐसा	–	+	–	ई	>	ऐसी
सुनहरा	–	+	–	ई	>	सुनहरी

(४१) {-ईत्} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
निर्णय् + ईत् + निर्णीत्

(४२) {-ईदा}—संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं—
पेच् + ईदा > पेचीदा
पोश् + ईदा > पोशीदा

(४३) {ईन्}—संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
ग्राम्	–	+	–	ईन्	>	ग्रामीन् (ग्रामीण)

विशेषण प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
कम्	–	+	–	ईन्	>	कमीन्
नव्	–	+	–	ईन्	>	नवीन्

(४४) {-ईय्} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
दर्शन् – + – ईय् > दर्शनीय्
अनुकरन् – + – ईय् > अनुकर्नीय (अनुकरणीय)

(४५) {–ईला} —संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है तथा इससे पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

संज्ञा प्रा०				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
जहर्	–	+	–	ईला	>	जह्रीला
गाँठ्	–	+	–	ईला	>	गँठीला
रंग	–	+	–	ईला	>	रंगीला
पत्थर्	–	+	–	ईला	>	पथ्रीला

धातु				परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
हँस्	–	+	–	ईला	>	हँसीला
काट्	–	+	–	ईला	>	कटीला

(४६) {-उक्} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—
इच्छा –+ – उक् > इच्छुक्

(४७) {-उर्} —विशेषणों में जोड़ा जाता है :—
अभंग - + - उर् > - अभंगुर्

(४८) {-ऊ} —संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जुड़ता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
पेट्	— + —	ऊ	>	पेटू
नाक् }नक्कू}	— + —	ऊ	>	नक्कू
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
गँवार्	— + —	ऊ	>	गँवारू
धातु		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
टाल्	— + —	ऊ	>	टालू
रट् {रट्ट}	— + —	ऊ	>	रट्टू

(४९) {-ऊटा} —विशेषणों में जोड़ा जाता है तथा इससे पुंल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं—

काला — + — ऊटा > कलूटा

(५०) {-ऊन्} —संज्ञा में जोड़ा जाता है :—

बात् — + — ऊन् बातून्

(५१) {—ऊनी} —अव्ययों में जोड़ा जाता है :—

अन्दर् — + — ऊनी > अन्दरूनी

(५२) {-ए} —संख्यावाचक विशेषणों में जोड़ा जाता है :—

दो→{दून्}	— + —	ए	>	दूने
तीन्→{तिं}	— + —	ए	>	तिंए
चार्→{चौक्क}	— + —	ए	>	चौक्के
पाँच्→{पंज}	— + —	ए	>	पंजे
छः→{छक्क}	— + —	ए	>	छक्के
सात्→सत्त}	— + —	ए	>	सत्ते
आठ्→{अठ्ठ}	— + —	ए	>	अट्ठे
नौ→{नम्म}	— + —	ए	>	नम्मे

{-ए} का सहरूपग्राम {-अम} /एक/ के बाद तथा {आम्} /दस्/ सवा, ढाई/ के बाद आता है / यथा {/ एकम् /} में शब्द का पहला भाग {एक्-} संख्यावाचक विशेषण है तथा शेष भाग {-अम् }आबद्ध रूप है तथा विशेषण व्युत्पादक है।

(५३) {-एतर्} —धातुओं में जोड़ा जाता है :—

माँग् — + — एतर् > मँगेतर्

(५४) {-एर्} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

दिल् — + — एर् > दिलेर्

(५५) {-एरा} —संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है तथा इससे पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
काम्	— + —	एरा	>	कमेरा
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
बहुत्	— + —	एरा	>	बहुतेरा
धातु		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
लूट्	— + —	एरा	>	लुटेरा

(५६) {-एला} —संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है तथा इससे पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
सौत्	— + —	एला	>	सौतेला
विशेषण प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
एक् {अक्}	— + —	एला	>	अकेला
नव्	— + —	एला	>	नवेला

(५७) {-एलू} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

घर् — + — एलू > घरेलू

(५८) {-एड़्} —विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

आधा — + — एड़् > अधेड़्

(५९) {-ऐत} —संज्ञा प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
लाठी	— + —	ऐत	>	लठैत
धातु		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
लड़्	— + —	ऐत्	>	लड़ैत्

(६०) {—ऐनी} —संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

पुश्त — + — ऐनी > पुश्तैनी

(६१) {-ऐल्} —धातुओं में जोड़ा जाता है :—

बिगड़् — + — ऐल् > बिगड़ैल्

(६२) {-ऐला} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

विश् – + – ऐला > विशैला = (विषैला)

(६३) {-ओँ} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
ढेर् – +	– ओँ	>	ढेरोँ

(६४) {–ओर्} –धातुओं के साथ जोड़ा जाता है :—

चाट् – + – ओर > चटोर्

(६५) {–ओला} –विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

मध्य {मझ्} – + – ओला > मझोला

(६६) {-औना} –संज्ञा प्रातिपादिकों के साथ जोड़ा जाता है, तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं।

घिन् – + – औना > घिनौना

(६७) {–औड़्} –धातुओं में जोड़ा जाता है :—

हँस् – + – औड़् > हँसौड़्

(६८) {–औड़ी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

गप्प – + – औड़ी > गपौड़ी

(६९) {–कर्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अंत – + – कर् > अन्तकर्

(७०) {–कार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जुड़ता है :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
अंडा	– +	– कार्	>	अंडाकार्
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
बद्	– +	– कार्	>	बद्कार्
धातु		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
जान्	– +	– कार्	>	जान्कार्

(७१) {–काना} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

बच्चा – + – काना > बच्काना

(७२) {–खुरा} –विशेषणों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

अकेला →[इकल्] – + – खुरा > इकल्खुरा

(७३) {–खेज्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

सन्सनी – + – खेज् > सन्सनीखेज्

(७४) {–खोर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

घूस् – + – खोर् > घूस्खोर्

सूद् – + – खोर् > सूद्खोर्

(७५) {–गत्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

अन्तर् – + – गत् > अन्तर्गत्

(७६) {–गार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

मदद् – + – गार् > मदद्गार्

(७७) {–गीन्} –संज्ञा प्रातिपादिकों में जोड़ा जाता है:—

गम् – + – गीन् > गम्गीन्

(७८) {–ची} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

अफीम् – + – ची > अफीम्ची

(७९) {–जादा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

हराम् – + – जादा > हराम्जादा

(८०) {–ट्ठा} –संख्यावाचक विशेषणों में जुड़ता है तथा इससे पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

एक् [इक्क] – + – ट्ठा > इकट्ठा

इसका रूपग्रामिक विश्लेषण {एक्}→[इक्]– + –अट्ठा > इकट्ठा भी किया जा सकता है।

(८१) {–ड़ी} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

भंग – + – ड़ी > भंगड़ी

(८२) {–तना} –सर्वनामों में जुड़कर पुल्लिग परिमाणवाचक विशेषण व्युत्पन्न करता है:—

यह् – + – तना > इत्ना

वह – + – तना > उत्ना

जो – + – तना > जित्ना

कौन् – + – तना > कित्ना

टिप्पणी : / इत्ना, उत्ना, जित्ना, कित्ना / का विश्लेषण मूलरूपग्राम तथा {–तना} के रूप में भी किया जा सकता है। उदाहरणार्थ / इत्ना / को {निकटवर्ती अन्य पुरुष सर्वनाम मूलरूपग्राम} तथा {–तना} = य् – + – तना > इत्ना रूप में विश्लेषित किया जा सकता है। इस स्थिति में / इत्ना / जैसे रूपों की रचना 'आबद्ध रूप+आबद्ध रूप' के योग से निष्पन्न है। इस संबंध में ३.१.३ में विचार किया गया है।

(८३) {–तम्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

विशेषण प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
अधिक् –	+ – तम्	>	अधिक्तम्

(८४) {–तर्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अधिक् – + – तर् > अधिक्तर्

(८५) {–ता} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अमुक् – + – ता > अमुक्ता

(८६) {–ती} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

कम् – + – ती > कम्ती

(८७) {–दाँ} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अंग्रेजी – + – दाँ > अंग्रेजी दाँ

(८८) {–दार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

शान् – + – दार् > शान्दार्

(८९) {–नाक्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

दर्द – + – नाक् > दर्दनाक्

खतरा {खतर्} – + – नाक् > खतर्नाक्

(९०) {–नी} –विशेषणों में जुड़ता है तथा इसके योग से व्युत्पन्न प्रातिपदिक स्त्रीलिंग होते हैं :—

अग्र – + – नी > अग्रनी (अग्रणी)

(९१) {–नीय्} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अतुल् – + – नीय् > अतुल्नीय्

अभेद् – + – नीय् > अभेद्नीय्

(९२) {–नुमा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अँगूठी – + – नुमा > अँगूठीनुमा

(९३) {–बाज़्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं अव्ययों में जुड़ता है:—

संज्ञा प्रा० परप्रत्यय विशेषण प्रा०

अकड़् – + – बाज़् > अकड़बाज़्

रंडी – + – बाज़् > रंडीबाज़्

अव्यय परप्रत्यय विशेषण प्रा०

जल्दी {जल्द} – + – बाज़् > जल्दबाज़्

(९४) {–वीन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

तमाशा {तमाश्} – + – बीन् > तमाश्बीन्

(९५) {–मती} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

बाँस् – + – मती > बाँस्मती

(९६) {–मंद} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

अक्ल् – + – मन्द > अक्लमंद

(९७) {–रूक्} –धातुओं में जोड़ा जाता है:—

जाग् – + – रूक् > जाग्रूक्

(९८) {–ला} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं अव्ययों में जोड़ा जाता है तथा इससे पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

संज्ञा प्रा० परप्रत्यय विशेषण प्रा०

लाड़् – + – ला > लाड़्ला

विशेषण प्रा० परप्रत्यय विशेषण प्रा०

नीचा – + – ला > निच्ला

अव्यय परप्रत्यय विशेषण प्रा०

आगे – + – ला > अग्ला

पीछे – + – ला > पिछ्ला

(९९) {–लू} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

श्रद्धा – + – लू > श्रद्धालू

कृपा – + – लू > कृपालू

(१००) {–लौता} –संख्यावाचक विशेषणों में जुड़ता है तथा इससे पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

एक् {इक्} – + – लौता > इक्लौता

(१०१) {–वर्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

नाम् – + – वर् > नाम्वर्

(१०२) {–वना} –धातुओं में जुड़ता है तथा इससे पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

सुहा – + – वना > सुहावना

(१०३) {–वन्त} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है:—

कला – + – वन्त > कलावन्त

(१०४) {–वाँ} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं में जुड़ता है तथा इससे पुल्लिग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं:—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
पश्चिम् {पछ्–} –	+ – वाँ	>	पछ्वाँ

संख्यावाचक विशेषणों के आगे जुड़ने पर यह क्रमवाचक विशेषण व्युत्पन्न करता है:—

विशेषण प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
पाँच् –	+ – वाँ	>	पाँच्वाँ
सात् –	+ – वाँ	>	सात्वाँ
आठ् –	+ – वाँ	>	आठ्वाँ
नौ –	+ – वाँ	>	नौवाँ
दस् –	+ – वाँ	>	दस्वाँ
सौ –	+ – वाँ	>	सौवाँ

{–वाँ} के सहरूपग्राम इस प्रकार हैं:—

{छँ} के {छ} के बाद – वाँ → टा

{चार्} के {चौ} के बाद – वाँ → था

{एक्} के {पह्} के बाद् – वाँ → ला

{दो} के {दु} एवं, {तीन्} के {ती} के बाद – वाँ →सरा

धातु	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
जुड़् –	+ – वाँ	>	जुड़्वाँ

(१०५) {–वान्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

धन् – + – वान् > धन्वान्

(१०६) {–वार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है:—

कसूर् – + – वार् > कसूर्वार्

(१०७) {–वी} –संज्ञा प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है:—

माया – + – वी > मायावी

(१०८) {–शुदा} –संज्ञा एवं विशेषण प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
शादी	– + – शुदा	>	शादीशुदा
विशेषण प्रा०	**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
गुम्	– + – शुदा	>	गुम्शुदा

(१०९) {–सा} –यह सर्वनाम रूपों के साथ जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रकारवाचक विशेषण व्युत्पन्न होते हैं :—

यह्	– + – सा	>	ऐसा
वह्	– + – सा	>	वैसा
कौन्	– + – सा	>	कैसा
जो	– + – सा	>	जैसा

टिप्पणी—यदि 'यह्, वह्, कौन्, जो' रूपों में से वचन एवं कारक विभक्ति निकालकर सर्वनाम मूलरूपग्राम (Base Morpheme) में इस व्युत्पादक प्रत्यय का योग माना जाए तो इसकी संरचना 'मुक्तरूप + आवद्ध रूप' की न होकर 'आवद्ध रूप + आवद्ध रूप' की होगी। उस स्थिति में :—

{य्}	→	{ऐ}	– + – सा	>	ऐसा
{व्}	→	{वै}	– + – सा	>	वैसा
{ज्}	→	{जै}	– + – सा	>	जैसा
{क्}	→	{कै}	– + – सा	>	कैसा

इस सम्बन्ध में आगे विचार किया जाएगा।

(११०) {–सार्} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

मिलन् – + – सार् > मिलन्सार्

(१११) {–हरा} –संज्ञा एवं विशेषण प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है तथा इसके योग से पुल्लिंग प्रातिपदिक व्युत्पन्न होते हैं :—

संज्ञा प्रा०		परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
सोना	{सुन्}	– + – हरा	>	सुनह्‌रा
/रूप् ~ रुप्या/	के बाद	– हरा	→	हला
विशेषण प्रा०		**परप्रत्यय**		**विशेषण प्रा०**
एक्	{इक्}	– + – हरा	>	इकह्‌रा
दो	{दु}	– + – हरा	>	दुहरा

(११२) {–हार्} –संज्ञा तथा धातुओं के बाद जुड़ता है। धातुओं के बाद {-हार} का सहरूपग्राम {-न्हार्~अन्हार्} आता है।

स्वरान्त धातुओं के बाद – हार् → न्हार्

व्यंजनान्त धातुओं के बाद – हार् → अन्हार्.

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		विशेषण प्रा०
देन् –	+ – हार्	>	देन्हार्

धातु	परप्रत्यय	विशेषण प्रा०
हो –	+ – {–न्हार्}	होन्हार्
देख् –	+ – {–अन्हार्}	देखन्हार्

३.१.१.२.३ क्रिया-व्युत्पन्न-प्रातिपदिक

क्रिया कोटि के व्युत्पन्न प्रातिपदिकों को दो भागों में बाँटा जा सकता है :—

(क) क्रिया के अतिरिक्त अन्य कोटियों के प्रातिपदिकों से व्युत्पन्न प्रातिपदिक।

(ख) क्रिया मूल प्रातिपदिकों से व्युत्पन्न प्रातिपदिक।

३.१.१.२.३.१ अन्य कोटियों के प्रातिपदिकों से व्युत्पन्न क्रिया-कोटि के प्रातिपदिक

अन्य कोटियों के प्रातिपदिकों में निम्नलिखित व्युत्पादक परप्रत्यय जुड़कर क्रिया कोटि के प्रातिपदिक व्युत्पन्न करते हैं:—

(१) {–ϕ} –जिस प्रकार {बोल्–}, {तेल्–} इत्यादि क्रिया प्रातिपदिक संज्ञा प्रातिपदिक के रूप में व्यवहृत होते हैं, उसी प्रकार {विचार्–} {ललकार्–}, {छल्–}, {पुकार्–} {अपना–} इत्यादि संज्ञा एवं सर्वनाम प्रातिपदिक क्रिया प्रातिपदिक के रूप में व्यवहृत होते हैं। इन प्रातिपदिकों के आगे {–ϕ} परप्रत्यय के योग से क्रिया-प्रातिपदिकों का निर्माण माना जा सकता है।

इनकी व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि ये प्रातिपदिक संज्ञा अथवा सर्वनाम एवं क्रिया दोनों में प्रयुक्त होते हैं, तथा इनकी कोटि का निर्धारण वाक्य स्तर पर होता है।[1]

---

१. कुछ भाषाशास्त्री शून्य परप्रत्यय की कल्पना को निरर्थक मानते हैं। दे०—Sol. Saporta—"On the use of Zero in Morphemics";

(२) {–आ} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं क्रिया विशेषण प्रातिपदिकों में जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		क्रिया प्रा०
दुख्	– + – आ	>	दुखा
आलस्य→{अल्स्}	– + – आ	>	अल्सा
खट्खट्	– + – आ	>	खट्खटा
भिन्भिन्	– + – आ	>	भिन्भिना
विशेषण प्रा०	**परप्रत्यय**		**क्रिया प्रा०**
गरम्	– + – आ	>	गर्मा
अधिक्	– + – आ	>	अधिका
क्रिया विशे० प्रा०	**परप्रत्यय**		**क्रिया प्रा०**
खट्खट्	– + – आ	>	खट्खटा
थर्थर्	– + – आ	>	थर्थरा

(३) {–इया} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है :—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय		क्रिया प्रा०
हाथ्	– + – इया	>	हथिया
लाठी	– + – इया	>	लठिया
विशेषण प्रा०	**परप्रत्यय**		**क्रिया प्रा०**
साठ्	– + – इया	>	सठिया

.१.१.२.३.२ मूल क्रिया प्रातिपदिकों से व्युत्पन्न क्रिया कोटि के व्युत्पन्न प्रातिपदिक :—

इस प्रकरण में मूल क्रिया प्रातिपदिकों (मूलधातु) से व्युत्पन्न होने वाले क्रिया-प्रातिपदिकों का अध्ययन किया गया है। जिन धातुओं के अकर्मक एवं सकर्मक रूपों में भिन्नता होती है उनमें अकर्मक धातु रूपों को मूल धातु माना गया है। जिन धातुओं के अकर्मक एवं सकर्मक रूप समान होते हैं अथवा जिन धातुओं के केवल सकर्मक रूप ही प्राप्त होते हैं, वहाँ अकर्मक-सकर्मक अथवा सकर्मक धातु रूपों को मूलधातु माना गया है। इन मूल-धातुओं से प्रेरणार्थक

Proceedings of the Ninth International Congress of Linguistics. (Edited by Horace G. Lunt) pp. 228-230.

धातुएँ व्युत्पन्न होती हैं। ये प्रेरणार्थक धातुएँ भी सकर्मक ही होती हैं, इस कारण इन्हें सुविधा की दृष्टि से 'सकर्मक-प्रेरणार्थक' धातु के नाम से पुकारा जा सकता है।

हिन्दी के अधिकांश व्याकरणों में धातु से व्युत्पन्न रूपों को प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक के नाम से अभिहित किया गया है।[1] उन पुस्तकों में प्रथम प्रेरणार्थक के जिन उदाहरणों को प्रस्तुत किया गया है, उनमें से कुछ में प्रेरणा का भाव नहीं है, तथा अन्यों का द्वितीय प्रेरणार्थक के रूपों से कार्यकारी व्यतिरेक नहीं है। उदाहरणार्थ, श्री कामताप्रसाद गुरु ने प्रथम प्रेरणार्थक के निम्नलिखित उदाहरण दिए हैं:—

/ उठाना, औटाना, गिराना, चलाना, पढ़ाना, फैलाना, सुनाना, उढ़ाना, जगाना, जिताना, डुवाना, वुलाना, भिगाना, लिटाना, चम्काना, पिघ्लाना, वद्लाना, समझाना, खिलाना, छुलाना, दिलाना, घुलाना, पिलाना, सिलाना, सुलाना, जिलाना, कहाना, दिखाना, सिखाना, सुखाना, विठाना / इत्यादि।[2]

उपर्युक्त उदाहरणों में से निम्नलिखित में प्रेरणा का कोई भाव नहीं है:—

/ उठाना, औटाना, गिराना, चलाना, पढ़ाना, फैलाना, सुनाना, उढ़ाना, जगाना, डुवाना, वुलाना, भिगाना, लिटाना, चम्काना, पिघ्लाना, समझाना, खिलाना, पिलाना, सुलाना, जिलाना, दिखाना, सिखाना, सुखाना, विठाना /

'राम बच्चे को उठाता है', 'वह् दूध् को औटाता है', 'वह ईंट को गिराता है', 'वह बच्चे को चलाता है' आदि वाक्यों में 'क्रिया के व्यापार में कर्ता पर किसी की प्रेरणा'[3] नहीं है। यही कारण है कि इन्हें 'प्रेरणार्थक' अभिधान से सूचित करने की अपेक्षा 'सकर्मक' धातु के नाम से पुकारना संगत है।

जिन धातुओं से प्रेरणा का भाव परिलक्षित हो रहा है, वे निम्नलिखित हैं:—

/ जिताना, वद्लाना, दिलाना, घुलाना, सिलाना, कहाना /

इन्हें प्रथम प्रेरणार्थक मानकर इनके द्वितीय प्रेरणार्थक रूप क्रमशः / जित्-

---

१. दे० (अ) कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ १२८-१३३।
(आ) किशोरीदास बाजपेयी—हिन्दी शब्दानुशासन, पृष्ठ ४५६-४७६।
(इ) ए बेसिक ग्रामर आफ मार्डन हिन्दी, पृष्ठ ८२-८६।

२. कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ १२९-१३१।

३. वही— पृ० १२८।

वाना, वदल्वाना, दिल्वाना, घुल्वाना, सिल्वाना, कह्वाना/[1] माने गए हैं। इन दोनों सरणियों के उदाहरणों में 'रूप' की दृष्टि से भिन्नता अवश्य मिलती है किन्तु भाषा में ये परस्पर व्यतिरेकी नहीं हैं, प्रत्युत स्वतंत्रतापूर्वक एक दूसरे को स्थानापन्न करते हैं। इस कारण प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक में अन्तर करना संगत प्रतीत नहीं होता है। 'वह नौकर से घर धुलाता है' अथवा 'वह नौकर से घर धुल्वाता है' में कोई अन्तर नहीं है। अतएव /धुलाता~धुल्-वाता/ को सकर्मक-प्रेरणार्थक के नाम से पुकारा जा सकता है।

डा० मुरारीलाल उप्रैतिः ने मूल धातुओं से सकर्मक धातु, प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक व्युत्पन्न होना माना है।[2] सकर्मक एवं प्रेरणार्थक का अन्तर निरूपित करते हुए डा० उप्रैतिः ने लिखा है :—

"अकर्मक तथा सकर्मक धातुओं से प्रेरणार्थक धातुएँ व्युत्पन्न होती हैं। ये सभी प्रेरणार्थक धातुएँ सकर्मक कही जा सकती हैं परन्तु इस प्रसंग में इन्हें सकर्मक न कहकर प्रेरणार्थक इसलिए कहा जाता है कि इनके द्वारा प्रेरणा अभिव्यक्त होती है। उदाहरणार्थ—/रस्सी कटती है/,/वह रस्सी काटती है/,/वह रस्सी कटाती है/वाक्यों में /कट्/,/काट्/तथा/कटा/धातुएँ द्रष्टव्य हैं। इनमें /कट्/अकर्मक धातु है जिससे/काट/तथा/कटा/धातुएँ व्युत्पन्न हैं। इन दोनों को /कट्/ के सकर्मक रूप कह सकते हैं परन्तु इनमें अन्तर है। /काट्/ में वह भाव नहीं जो /कटा/ में है। /काट/ क्रिया का कर्ता स्वयं है जबकि /कटा/ में वह प्रत्यक्ष नहीं, वह काटने की क्रिया किसी अन्य व्यक्ति से कराता है। इस प्रकार सकर्मक तथा प्रेरणार्थक धातुओं में कार्यगत अन्तर है। प्रेरणार्थक धातुएँ वे हैं जिनका कर्ता प्रत्यक्षतः क्रिया नहीं करता अपितु किसी अन्य के माध्यम से उस क्रिया का सम्पादन कराता है।"[3]

सकर्मक एवं प्रेरणार्थक धातुओं से सम्बन्धित उपर्युक्त परिभाषा को मानने के पश्चात् डा० उप्रैतिः ने प्रेरणार्थक धातुओं को पुनः दो भागों—प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक—में बाँटकर उनका वर्णन किया है। इससे विश्लेषण में दो असंगतियाँ आ गयी हैं:—

(१) प्रथम-प्रेरणार्थक क्रिया प्रातिपदिक व्युत्पन्न रूपों में जिन उदाहरणों को रखा गया है, उनमें से कुछ में प्रेरणा की भावना उसी प्रकार नहीं है जिस

---

१. कामताप्रसाद गुरु हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ १३०-१३१।
२. डा० मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय विचार', पृष्ठ १८७-२०३।
३. वही, पृष्ठ १९०।

प्रकार श्री कामताप्रसाद गुरु द्वारा प्रथम-प्रेरणार्थक-धातु रूपों के अधिकांश उदाहरणों में नहीं मिलती। डा० उप्रेतिः ने प्रथम-प्रेरणार्थक-क्रिया-प्रातिपदिक रूपों में जिन उदाहरणों को प्रस्तुत किया है, उनमें से / उगा, उठा, उड़ा, औटा, खपा, गला, चढ़ा /[1] इत्यादि में क्रिया का कर्ता स्वयं ही है, कर्ता क्रिया करने की प्रेरणा किसी अन्य व्यक्ति को नहीं दे रहा है। यथा :—

/ वह खेत् उगा रहा है / / वह वजन् उठा रहा है / / वह पतंग उड़ा रहा है / इत्यादि वाक्यों में क्रिया का कर्ता स्वयं खेत् उगाता है; स्वयं वजन् उठाता है तथा स्वयं पतंग उड़ाता है, इन क्रियाओं को करने की प्रेरणा किसी अन्य व्यक्ति को नहीं देता। इस प्रकार उपर्युक्त धातु रूप डा० उप्रैतिः द्वारा मान्य / काट् / सकर्मक के अनुरूप हैं, प्रेरणार्थक / कटा / के अनुरूप नहीं हैं। / काट् / को / उड़ा–, उगा–, उठा–, औटा– / आदि द्वारा स्थानापन्न किया जा सकता है :—

वह् { काट्ता / उड़ाता / उगाता / उठाता / औटाता } है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि इन्हें डा० उप्रैतिः द्वारा मान्य प्रेरणार्थक रूप / कटा / से स्थानापन्न नहीं किया जा सकता है।

(२) डा० उप्रेतिः ने प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक रूपों के अन्तर्गत जिन रूपों को रखा है, उनमें से कुछ उदाहरण रूप की दृष्टि से भी भिन्न नहीं हैं। इस दृष्टि से कुछ उदाहरणों को प्रस्तुत किया जा सकता है :—

प्रथम प्रेरणार्थक धातु→ / करा, गढ़ा, गिना / इत्यादि[2]

द्वितीय प्रेरणार्थक धातु→ / करा, गढ़ा, गिना / इत्यादि[3]

इस प्रकार प्रेरणार्थक धातुओं को दो भेदों—प्रथम प्रेरणार्थक एवं द्वितीय प्रेरणार्थक—में बाँटना तर्कसंगत एवं सार्थक नहीं है। इस कारण मूल क्रिया प्रातिपदिकों (मूल धातुओं) से व्युत्पन्न होने वाले क्रिया प्रातिपदिकों को 'सकर्मक-धातु' एवं 'सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु' के नाम से पुकारा जाएगा।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि प्रत्येक मूल धातु से सकर्मक-धातु अथवा / और सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु व्युत्पन्न नहीं होती। कुछ धातुएँ ऐसी हैं जिनके अकर्मक

---

१. डा० मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय विचार', पृष्ठ १९१।

२. वही, पृष्ठ १९३।

३. वही, पृष्ठ २०१।

रूप ही मिलते हैं, उनके सकर्मक रूप प्राप्त नहीं होते। इसके विपरीत कुछ धातुओं के केवल सकर्मक रूप ही प्राप्त होते हैं उनके अकर्मक रूप प्राप्त नहीं होते। कुछ धातुएँ ऐसी भी हैं जो अकर्मक एवं सकर्मक प्रकार की रचना में प्रयुक्त तो होती हैं, किन्तु उनके रूप में कोई अन्तर नहीं आता है। कुछ मूल धातुओं में न तो सकर्मक रूप के लिए और न प्रेरणार्थक रूप के लिए व्युत्पादक प्रत्ययों का योग होता है, अर्थात् वे ऐसी धातुएँ हैं, जिनमें किसी प्रकार के व्युत्पादक प्रत्ययों का योग नहीं होता। इन स्थितियों को उदाहरण सहित इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(क) कुछ मूल धातुएँ ऐसी हैं जिनके प्रेरणार्थक रूप तो व्युत्पन्न होते हैं किन्तु जिनके अकर्मक अथवा सकर्मक रूप या तो प्राप्त नहीं होते अथवा दोनों में समान रूप से प्रयुक्त होते हैं। ऐसी धातुओं को निम्नलिखित भागों में बाँटकर, उनका वर्णन किया जा सकता है :—

१. धातुएँ : जिनके अकर्मक रूप प्राप्त होते हैं, सकर्मक रूप नहीं, यथा :—

/ पड़्–, बक्–, लजा–, सोच्–, कुम्हला- / इत्यादि।

२. धातुएँ : जिनके सकर्मक रूप प्राप्त होते हैं, अकर्मक रूप नहीं, यथा :—

/ कर्–, कमा–, खोज्–, गँवा–, जता–, दे–, दुखा–, बुला–, रख्–, ले–, लुभा–, सता– / इत्यादि।

३. धातुएँ : जिनके अकर्मक एवं सकर्मक रूपों में कोई भिन्नता नहीं होती, यथा :—

/ कह्–, घिस्–, पूँछ–, भर्–, बदल्– / इत्यादि।

(ख) कुछ मूल धातुएँ ऐसी हैं जिनके 'सकर्मक प्रेरणार्थक' रूप प्राप्त नहीं होते हैं। इस प्रकार की मूल धातुएँ वे हैं जिनसे कोई रूप व्युत्पन्न नहीं होते हैं। इनको भी निम्नलिखित भागों में बाँटकर वर्णित कर सकते हैं :—

१. धातुएँ: जिनके केवल अकर्मक रूप प्राप्त होते हैं, यथा :—

/ आ–, खो–, जा–, जान्–, चाह्–, पा–, रुच्–, रह्–, सक्–, सोच्–, हो– / इत्यादि।

२. धातुएँ : जिनके केवल सकर्मक रूप मिलते हैं, यथा :—

/ अल्गा–, खो–, चिक्ना–, भूल–, लठिया–, लतिया–, शर्मा– / इत्यादि।

जिन धातुओं के अकर्मक अथवा सकर्मक रूप प्राप्त नहीं होते अथवा धातु का वही रूप दोनों में समान रूप से प्रयुक्त होता है, उन धातुओं की या तो सकर्मक रचना होती ही नहीं अथवा उनमें सकर्मक रूप के लिए किसी व्युत्पादक प्रत्यय का योग नहीं होता। जिन धातुओं के 'सकर्मक-प्रेरणार्थक' रूप प्राप्त

नहीं होते हैं, उनमें सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु व्युत्पादक प्रत्ययों का योग नहीं होता है।

आगे सकर्मक-प्रेरणार्थक-क्रिया-प्रातिपदिक एवं / अथवा सकर्मक क्रिया-प्रातिपदिक व्युत्पन्न करने वाले व्युत्पादक परप्रत्ययों के सम्बन्ध में विचार किया जाएगा। इस दृष्टि से हिन्दी में दो रूपग्राम हैं:—

१. { सकर्मक धातु व्युत्पादक प्रत्यय }

२. { सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु व्युत्पादक प्रत्यय }

इनके सहरूपग्रामों का विवेचन इस प्रकार है:—

(१) {सकर्मक धातु व्युत्पादक प्रत्यय}

सकर्मक क्रिया प्रातिपदिकों की रचना दो प्रकार से होती है:—

(१) अकर्मक धातु अथवा मूल धातुओं में आन्तरिक ध्वनि परिवर्तन द्वारा:— / कट् / → / काट् /। इसमें किसी रूपयुक्त परप्रत्यय का योग नहीं हुआ है, धातु के स्वर में परिवर्तन करके धातु व्युत्पन्न की गयी है। सुविधा की दृष्टि से इसका विवेचन शून्य परप्रत्यय {ϕ} की सहायता से किया जा सकता है। यह प्रक्रिया आन्तरिक ध्वनिपरिवर्तन को परप्रत्यय की सहायता से विवेचित करने की है।

इसका विवेचन मध्य-प्रत्यय-योजना द्वारा भी सम्भव है। / कट् / एवं / काट् / जैसे रूपों में मूलरूपग्राम { क्–ट् } को माना जा सकता है जो अकर्मक रूप है। इस { क्–ट् } मूलरूपग्राम में मध्य प्रत्यय { –अ– } के संयोग से / कट् / तथा { –आ– } के योग से / काट् / जैसी रचनाएँ व्युत्पन्न मानी जा सकती हैं।

प्रस्तुत संदर्भ में { – ϕ } द्वारा आंतरिक ध्वनि परिवर्तन का विवेचन किया जा रहा है।

(२) अकर्मक धातुओं में परप्रत्यय के योग से—{ सकर्मक धातु व्युत्पादक प्रत्यय पदग्राम } के समस्त सहरूपग्रामों का विवरण समस्त स्थितियों में ध्वन्यात्मक प्रतिबन्धित रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, क्योंकि 'समान अन्त्य एवं समानाक्षर वाली मूल धातुओं में भिन्न सहरूपग्रामों का योग होता है।[१]

निम्नलिखित प्रकार की धातुओं में {शून्य} सहरूपग्राम एवं {–आ} सहरूपग्राम का योग होता है:—

---

१. द्रष्टव्य—टी० वाई० एलिजावेन्कोवा—'हिन्दी भाषा की प्रेरणार्थक क्रियाओं में असुघटत्व', हिन्दी अनुशीलन : धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, पृष्ठ ११५।

(१.) 'CVC'
(२.) 'VCVC'
(३.) 'CVCVC'

इन धातुओं में { सकर्मक धातु व्युत्पादक प्रत्यय पदग्राम } के सहरूपग्रामों का वितरण शब्दकोषीय दृष्टि से प्रतिवन्धित है।

अन्य क्रम वाली धातुओं में सहरूपग्रामों का वितरण ध्वन्यात्मक प्रतिवंधित है। ये धातुएँ निम्नलिखित प्रकार की हैं :—

(१.) VC
(२) CV
(३.) CVCV

{ सकर्मक धातु व्युत्पादक प्रत्यय पदग्राम } के सहरूपग्रामों का वितरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

{-ϕ}

'CVC', 'CVCVC', एवं 'VCVC' क्रम वाली धातुओं के साथ शब्दकोषीय रूप से प्रतिवंधित रूप में जुड़ता है। इसकी यौगिक प्रक्रिया में मूल प्रातिपदिक में ध्वन्यात्मक परिवर्तन होता है। उदाहरण सहित इसका विवेचन इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(अ.) 'CVC' —क्रम वाली धातुओं के साथ जब {-ϕ} का योग होता है तो धातु के निम्नलिखित स्वरों में इस प्रकार परिवर्तन होता है :—

अ > आ
उ > ओ
ऊ > ओ

{च्, प्, म, भ्, स्} के वाद→/ इ / होने पर > ई

{घ्, छ्, फ्, व्} के वाद→ /इ / होने पर > ए

{ख्} के वाद→/ इ / होने पर > ई~ए

उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

कट्	–	+	–	ϕ	>	काट्
खिँच्	–	+	–	ϕ	>	खींच् ~ खेंच्
खुल्	–	+	–	ϕ	>	खोल्
गड़्	–	+	–	ϕ	>	गाड़्
गँठ्	–	+	–	ϕ	>	गाँठ्
घुल्	–	+	–	ϕ	>	घोल्
घिर्	–	+	–	ϕ	>	घेर्
चिर्	–	+	–	ϕ	>	चीर्
छप	–	+	–	ϕ	>	छाप्
छिड़्	–	+	–	ϕ	>	छेड़्
छिन्	–	+	–	ϕ	>	छीन्
जग्	–	+	–	ϕ	>	जाग्
जुड़्	–	+	–	ϕ	>	जोड़्
टँक्	–	+	–	ϕ	>	टाँक्
टल्	–	+	–	ϕ	>	टाल्
टूट्	–	+	–	ϕ	>	तोड़्
डल्	–	+	–	ϕ	>	डाल्
तक्	–	+	-	ϕ	>	ताक्
पिट्	-	+	–	ϕ	>	पीट्
पिस्	–	+	–	ϕ	>	पीस्
फट्	–	+	–	ϕ	>	फाड़्
फिँक्	–	+	–	ϕ	>	फेंक
बँध्	–	+	–	ϕ	>	बाँध्
बिक्	–	+	–	ϕ	>	बेच्
बट्	–	+	–	ϕ	>	बाँट
भिँच्	–	+	–	ϕ	>	भींच
नुच्	–	+	–	ϕ	>	नोच्
मर्	–	+	–	ϕ	>	मार्
मिँच्	–	+	–	ϕ	>	मींच्
लद्	–	+	–	ϕ	>	लाद्
सिँच्	–	+	–	ϕ	>	सींच्

(आ) 'VCVC' क्रम वाली धातुओं के साथ जब {–ϕ} का योग होता है तो VC– के बाद वाला ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है। उदाहरण सहित इसको इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

उखड़् – + – ϕ > उखाड़्
उतर् – + – ϕ > उतार्
उबल् – + – ϕ > उबाल्
उजड़् – + – ϕ > उजाड़्

(इ) 'CVCVC' क्रम वाली धातुओं के साथ जब {–ϕ} का योग होता है तो यौगिक प्रक्रिया में 'CVC'–के बाद वाला ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है। यथा :—

सुधर् – + – ϕ > सुधार्
निकल् – + – ϕ > निकाल्
बिगड़् – + – ϕ > बिगाड़्

{–आ} —यह निम्नलिखित प्रकार की धातुओं के साथ जुड़ता है :—

(अ) 'VC'—प्रकार की धातुओं के साथ

समस्त 'स्वर+व्यंजन' प्रकार की धातुओं के साथ {आ} जुड़ता है तथा इस प्रकार की धातुओं के साथ { सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम } का अन्य कोई सहपदग्राम नहीं आता है—

उठ् – + – आ > उठा
ओढ़् – + – आ > उढा ~ओढा
उड़् – + – आ > उड़ा
उग् – + – आ > उगा
ओट् – + – आ > औटा
ऊब् – + – आ > उबा

(आ) 'CV_1' —प्रकार की धातुओं के साथ

V_1 → / ऊ / स्वर

व्यंजन+/ ऊ / प्रकार की धातु के साथ {–आ} जुड़ता है तथा इस प्रकार की धातुओं के साथ { सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम } का अन्य कोई सहपदग्राम नहीं आता है। यथा :—

छू – + – आ > छुआ
चू – + – आ > चुआ

(इ) 'CVCVC'—प्रकार की धातुओं के साथ

इस प्रकार की धातुओं के साथ इसका योग शब्दकोषीय प्रतिबंधित है। 'CVC '– के बाद वाला स्वर यदि 'अ' होता है, तो यौगिक प्रक्रिया में उसका लोप हो जाता है। उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

कसक् – + – आ > कस्का
चमक् – + – आ > चम्का
छलक् – + – आ > छल्का
टहल् – + – आ > टह्ला
ठहर् – + – आ > ठह्रा
तरस् – + – आ > तर्सा
धमक् – + – आ > धम्का
पकड़् – + – आ > पक्ड़ा
पहन – + – आ > पह्ना
पहुँच् – + – आ > पहुँचा
लटक् – + – आ > लट्का
समझ् – + – आ > समझा

(ई) 'VCVC' —प्रकार की धातुओं के साथ :—

इस प्रकार की धातुओं के साथ इसका योग शब्दकोषीय प्रतिबंधित यौगिक प्रक्रिया में 'VC'– के बाद वाले स्वर का लोप हो जाता है। उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

अटक् – + – आ > अट्का
उचक् – + – आ > उच्का
उपज् – + – आ > उप्जा
उमड़् – + – आ > उम्ड़ा
उलझ् – + – आ > उल्झा

(उ) 'CVC' प्रकार की धातुओं के साथ :—

इस प्रकार की धातुओं के साथ इसका योग शब्दकोषीय प्रतिबंधित है। यौगिक प्रक्रिया में मूल धातु के निम्नलिखित स्वरों में इस प्रकार परिवर्तन हो जाते हैं :—

आ > अ
ई > इ
ऊ > उ
ए > इ
ओ > उ

/बैठ्–/ धातु के साथ मुक्त वितरण की स्थिति में धातु का ऐ >ऐ ~ इ रूप में है। उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

कूद्	–	+	–	आ	>	कुदा
खप्	–	+	–	आ	>	खपा
खिल्	–	+	–	आ	>	खिला
खेल्	–	+	–	आ	>	खिला
गल्	–	+	–	आ	>	गला
गूँज्	–	+	–	आ	>	गुँजा
गेर्	–	+	–	आ	>	गिरा
घुस्	–	+	–	आ	>	घुसा
घूम्	–	+	–	आ	>	घुमा
चख्	–	+	–	आ	>	चखा
चढ्	–	+	–	आ	>	चढा
चर्	–	+	–	आ	>	चरा
चल्	–	+	–	आ	>	चला
चाट्	–	+	–	आ	>	चटा
चाब्	–	+	–	आ	>	चबा
चिढ्	–	+	–	आ	>	चिढा
चिन्	–	+	–	आ	>	चिना
चुग्	–	+	–	आ	>	चुगा
चूस्	–	+	–	आ	>	चुसा
चौंक्	–	+	–	आ	>	चौंका
छिप्	–	+	–	आ	>	छिपा
छुट्	–	+	–	आ	>	छुटा
छोड़्	–	+	–	आ	>	छुड़ा
जन्	–	+	–	आ	>	जना
जम्	–	+	–	आ	>	जमा
जल्	–	+	–	आ	>	जला
जाग्	–	+	–	आ	>	जगा
जीत्	–	+	–	आ	>	जिता
झुक्	–	+	–	आ	>	झुका

झूल्	–	+	–	आ	>	झुला
टेक्	–	+	–	आ	>	टिका
डर्	–	+	–	आ	>	डरा
डूब्	–	+	–	आ	>	डुबा
तैर्	–	+	–	आ	>	तैरा
थक्	–	+	–	आ	>	थका
देख्	–	+	–	आ	>	दिखा
दौड़्	–	+	–	आ	>	दौड़ा
पढ्	–	+	–	आ	>	पढा
फँस्	–	+	–	आ	>	फँसा
फूल्	–	+	–	आ	>	फुला
फैल्	–	+	–	आ	>	फैला
बज्	–	+	–	आ	>	बजा
बन्	–	+	–	आ	>	बना
बह्	–	+	–	आ	>	बहा
बीत्	–	+	–	आ	>	बिता
बैठ्	–	+	–	आ	>	बैठा ~ बिठा
बोल्	–	+	–	आ	>	बुला
भाग्	–	+	–	आ	>	भगा
भीग्	–	+	–	आ	>	भिगा
भूल्	–	+	–	आ	>	भुला
मान्	–	+	–	आ	>	मना
मिट्	–	+	–	आ	>	मिटा
मिल्	–	+	–	आ	>	मिला
नाच्	–	+	–	आ	>	नचा
रिस्	–	+	–	आ	>	रिसा
लग्	–	+	–	आ	>	लगा
लड़्	–	+	–	आ	>	लड़ा
लिख्	–	+	–	आ	>	लिखा
लूट्	–	+	–	आ	>	लुटा
लेट्	–	+	–	आ	>	लिटा

लौट्	-	+	-	आ	>	लौटा
सज्	-	+	-	आ	>	सजा
सीख्	-	+	-	आ	>	सिखा
सुन्	-	+	-	आ	>	सुना
सूख्	-	+	-	आ	>	सुखा
सूंघ	-	+	-	आ	>	सुँघा
हँस्	-	+	-	आ	>	हँसा
हार्	-	+	-	आ	>	हरा
हिल्	-	+	-	आ	>	हिला

{-आल्} —इसका योग केवल /वैठ्–/ धातु के साथ होता है। इस धातु के साथ इसका वितरण {-आ} के साथ मुक्त स्थिति का है :—

वैठ्– + –आ ~आल्>वैठा ~बैठाल् ~बिठा ~विठाल्

{-ओ}—इसका योग केवल / भीग् / एवं / डूब् / के साथ होता है। इनके साथ इसका वितरण {आ} के साथ मुक्त स्थिति का है :—

भीग् – + – आ ~ ओ ~भिगा ~भिगो

डूब् – + – आ ~ ओ ~ डुबा ~डुबो

{-ला}—यह निम्नलिखित प्रकार की धातुओं के साथ जुड़ता है :—

(अ) 'CV_2' प्रकार की धातुओं के साथ :—

$V_2 \rightarrow$ = /ऊ/ को छोड़कर कोई भी स्वर

व्यंजन+ स्वर (/ऊ/ को छोड़कर) प्रकार की उन समस्त धातुओं, जिनके अकर्मक एवं सकर्मक रूपों में भिन्नता होती है, के साथ यह जुड़ता है तथा इस प्रकार की धातुओं के साथ { सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम } का अन्य कोई सह-पदग्राम नहीं आता है। यौगिक प्रक्रिया में मूल धातु के स्वरों में निम्नलिखित प्रकार से परिवर्तन हो जाते हैं—

आ	>	इ
ई	>	इ
ए	>	इ
ऊ	>	उ
ओ	>	उ

उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है—

खा – + – ला > खिला
सी – + – ला > सिला
पी – + – ला > पिला
जी – + – ला > जिला
दे – + – ला > दिला
ढो – + – ला > ढुला
धो – + – ला > धुला
रो – + – ला > रुला
सो – + – ला > सुला

(आ) 'CVCV' प्रकार की धातुओं के साथ :—

इस प्रकार की धातुओं के साथ यह जुड़ता है तथा इस प्रकार की धातुओं के साथ {सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम} का अन्य कोई सहपदग्राम नहीं आता है। यौगिक प्रक्रिया में धातु के अन्तिम स्वर का लोप हो जाता है :—

नहा – + – ला > नह्ला ~ निह्ला

( ) 'CVC' —प्रकार की धातुओं के साथ :—

इस प्रकार की धातुओं में इसका योग केवल /बैठ्-, कह्-, देख्-, सीख्-/ आदि सीमित धातुओं के साथ होता है। इनके साथ इसका वितरण {-आ} के साथ मुक्त स्थिति का है। यौगिक प्रक्रिया में धातुओं के ई, ए, ऐ→इ में परिणत हो जाते हैं। यथा :—

बैठ् – + – ला > बिठ्ला
कह् – + – ला > कह्ला
देख् – + – ला > दिख्ला
सीख् – + – ला > सिख्ला

{सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु प्रत्यय}

सकर्मक प्रेरणार्थक व्युत्पन्न धातु की रचना मूल धातु में निम्नलिखित व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से होती है—

{-वा}
{-आ}
{-अल्वा}
{-ल्वा}

{-आ}—इसका योग 'CVC' एवं 'VCVC' प्रकार की धातुओं में होता है।

{-वा}—इसका योग 'VC', 'CV', 'CVCV', 'CVC', 'VCVC' एवं 'CVCVC' प्रकार की धातुओं के बाद होता है।

{-ल्वा}—इसका योग 'CV' प्रकार की धातु के पश्चात् होता है।

{-अल्वा}—इसका योग 'CVCV' एवं 'CVC' प्रकार की धातुओं के पश्चात् होता है।

इन समस्त सहपदग्रामों में से 'CVCVC' एवं 'VC' प्रकार की धातुओं में केवल {-वा} जुड़ता है और इस स्थिति में यह ध्वन्यात्मक प्रतिबंधित हैं। 'CV' प्रकार की मूल धातुओं के पश्चात् {-वा} एवं {-ल्वा} का योग होता है। इनका योग भी ध्वन्यात्मक प्रतिबंधित रूप में होता है, जिसके सम्बन्ध में आगे विचार किया जाएगा। 'CVC', 'CVCV' एवं 'VCVC' प्रकार की धातुओं के साथ सहपद-ग्रामों का योग पदग्रामिक एवं शब्दकोषीय दृष्टि से प्रतिबंधित है।

इन्हें उदाहरण सहित इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

'VC' प्रकार की धातुओं के साथ—

समस्त 'स्वर+व्यंजन' प्रकार की मूल धातुओं के साथ {-वा} जुड़ता है तथा इस प्रकार की धातुओं के साथ {सकर्मक प्रेरणार्थक व्युत्पन्न प्रत्यय} का अन्य कोई सहपदग्राम नहीं आता है। यथा—

उठ् – + – वा > उठ्वा
उग् – + – वा > उग्वा
ओढ् – + – वा > उढ्वा
उड़् – + – वा > उड़्वा

'CV' प्रकार की धातु के साथ—

CV_1, → {-वा} V_1 =/ऊ/

CV_2 → {-ल्वा} V_2=/ ऊ / के अतिरिक्त अन्य कोई स्वर ध्वनिग्राम

'CV_1' प्रकार की धातु के साथ {-वा} की यौगिक प्रक्रिया में ऊ > उ में परिणत हो जाता है :—

छू – + – वा > छुवा
चू – + – वा > चुवा

'CV_2' प्रकार की धातु के साथ {-ल्वा} की यौगिक प्रक्रिया में CV_2 मूल धातु के स्वरों में निम्नलिखित प्रकार से परिवर्तन हो जाते हैं :—

आ > इ
ई > इ

ए	>	इ
ऊ	>	उ
ओ	>	उ

उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

खा	–	+	–	ल्वा	>	खिल्वा
सी	–	+	–	ल्वा	>	सिल्वा
पी	–	+	–	ल्वा	>	पिल्वा
जी	–	+	–	ल्वा	>	जिल्वा
दे	–	+	–	ल्वा	>	दिल्वा
ढो	–	+	–	ल्वा	>	ढुल्वा
घो	–	+	–	ल्वा	>	घुल्वा
रो	–	+	–	ल्वा	>	रुल्वा
सो	–	+	–	ल्वा	>	सुल्वा

'CVCVC' प्रकार की धातु के साथ—

{-वा} की यौगिक प्रक्रिया में 'CVC'—के बाद वाला स्वर यदि दीर्घ होता है तो ह्रस्व हो जाता है। यथा :—

सुघर्	–	+	–	वा	>	सुघर्वा
निकल्	–	+	–	वा	>	निकल्वा
बिगड़्	–	+	–	वा	>	बिड़्गवा
चमक्	–	+	–	वा	>	चमक्वा
छलक्	–	+	–	वा	>	छलक्वा
टहल्	–	+	–	वा	>	टहल्वा
ठहर्	–	+	–	वा	>	ठहर्वा
पकड़्	–	+	–	वा	>	पकड़्वा
पहन्	–	+	–	वा	>	पहन्वा
पहुँच्	–	+	–	वा	>	पहुँच्वा
पिघल	–	+	–	वा	>	पिघलवा
निखार्	–	+	–	वा	>	निखर्वा
लटक्	–	+	–	वा	>	लटक्वा
समझ्	–	+	–	वा	>	समझ्वा

'CVCV' प्रकार की धातु के साथ—

'CVCV' प्रकार की ऐसी धातुओं जिनके अकर्मक सकर्मक रूप भिन्न नहीं होते अथवा जिनके केवल सकर्मक रूप होते हैं, अकर्मक रूप नहीं होते, के साथ {-वा} का योग होता है। यौगिक प्रक्रिया में धातु के अन्त्य स्वर का लोप हो जाता है। यथा :—

कमा – + – वा > कम्वा
बुला – + – वा > बुल्वा
खुजा – + – वा > खुज्वा

'CVCV' प्रकार की ऐसी धातुओं में जिनके अकर्मक एवं सकर्मक रूपों में भिन्नता होती है, {-अल्वा} का योग होता है। यौगिक प्रक्रिया में मूल धातु के प्रथमाक्षर का स्वर /अ/ →इ में परिणत हो जाता है तथा मूल धातु के अन्तिम स्वर का लोप हो जाता है। यथा :—

नहा – + – अल्वा > निहल्वा

'VCVC' प्रकार की प्रत्येक मूल धातु के पश्चात् {-वा} का योग होता है। {-आ} का मुक्त वितरण की स्थिति में योग शब्दकोपीय प्रतिबंधित है तथा इसका प्रयोगावृत्ति बहुत कम है। इसके योग से VC– के बाद वाले स्वर / अ / का लोप हो जाता है।

{-वा} ~ {-आ}

उखड़् – + – आ ~ –वा > उख्ड़ा ~ उखड़्वा
उतर् – + – आ ~ –वा > उत्रा ~ उतर्वा
उबल् – + – आ ~ –वा > उब्ला ~ उबल्वा
उजड़् – + – आ ~ –वा > उज्ड़ा ~ उजड़्वा

'VCVC' प्रकार की ऐसी भी मूल धातुएँ हैं, जिनके पश्चात् केवल {-वा} का योग होता है। इन्हें उदाहरणार्थ इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

अटक् – + – वा > अटक्वा
उगल् – + – वा > उगल्वा
उचक् – + – वा > उचक्वा
उपज् – + – वा > उपज्वा
उमड़् – + – वा > उमड़्वा
उलझ् – + – वा > उलझवा

'CVC' प्रकार की मूल धातुओं के पश्चात्—

इनमें से प्रत्येक के पश्चात् {-वा} का योग होता है। {-आ} एवं {-अल्वा} का योग शब्दकोषीय प्रतिबंधित है तथा दोनों का वितरण परस्पर परिपूरक है। {-वा} के साथ दोनों सहपदग्रामों की स्थिति मुक्त वितरण की है। यथा :—

{-अल्वा}~{-वा}

यह स्थिति/बैठ्-, कह्-, देख्-, सीख्-/ इत्यादि सीमित धातुओं के पश्चात् है। यौगिक प्रक्रिया में मूल धातु के ऐ, ए, ई स्वर→इ में परिणत हो जाते हैं। यथा :—

बैठ् – + – अल्वा~–वा > बिठल्वा~बिठ्वा

{-आ}~{-वा}

यह स्थिति उन सभी 'CVC' प्रकार की मूल धातुओं के साथ है जिनके सकर्मक रूप की रचना में {सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम} का {–ϕ} सहपदग्राम लगता है। मूल धातु एवं {सकर्मक-प्रेरणार्थक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम} के {–आ} ~ {–वा} सहपदग्रामों की यौगिक प्रक्रिया में कोई ध्वन्यात्मक परिवर्तन नहीं होता है। यथा :—

कट् – + – आ ~ – वा > कटा ~ कट्वा
खिंच् – + – आ ~ – वा > खिंचा ~ खिंच्वा

यह स्थिति / चिर्–, छप्–, छिड़्–, छिन्–, जग्–, दौड़्–, जुड़्–, टँक्–, टल्–, डल्–, तक्–, पिट्–, पिस्–, फिंक्–, बँध्–, बिक्–, बट्–, भिंच्–, नुच्–, मर्–, मिंच्–, लद्–, सिंच्– / आदि धातुओं के साथ हैं।

{–वा}

'CVC' प्रकार की कुछ धातुएँ ऐसी भी हैं, जिनके पश्चात् {सकर्मक प्रेरणार्थक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम} का {–वा} सहपदग्राम ही जुड़ता है, अन्य कोई सहपदग्राम उनके साथ नहीं आता। ये मूल धातुएँ वे हैं, जिनके सकर्मक व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की रचना में {सकर्मक धातु व्युत्पन्न प्रत्यय पदग्राम} के निम्नलिखित सहपदग्राम जुड़ते हैं :—

{–आ}
{–ओं}

मूल धातु के साथ {–वा} की यौगिक प्रक्रिया में मूल धातु के निम्नलिखित स्वरों में इस प्रकार परिवर्तन हो जाते हैं :—

आ	>	अ
ई	>	इ
ऊ	>	उ
ए	>	इ
ओ	>	उ

यथा :—

कूद्	–	+	–	वा	>	कुद्वा
चाट्	–	+	–	वा	>	चट्वा
चिढ्	–	+	–	वा	>	चिढ्वा
खीँच्	–	+	–	वा	>	खिँच्वा
घुस्	–	+	–	वा	>	घुस्वा
घूम्	–	+	–	वा	>	घुम्वा
खेल्	–	+	–	वा	>	खिल्वा
तैर्	–	+	–	वा	>	तैर्वा
वोल्	–	+	–	वा	>	बुल्वा
मीग्	–	+	–	वा	>	मिग्वा
डूव्	–	+	–	वा	>	डुव्वा

यह स्थिति / खप्–, खिल्–, गल्–, गूंज्–, गेर्–, चख्–, चढ्–, चर्–, चल्–, चाव्–, चिन्–, चुग्–, चूस्–, चौँक्–, छिप्–, छूट्–, छोड़–; जन्–, जम्–, जल्–, जाग्–, जीत्–, झुक्–, झूल्–, टेक्–, डर्–, डूव्–, थक्–, देख्–, पढ्–, फाँस्–; फूल्–, फैल्–, वज्–, बन्–, वह्–, बीत्–, बैठ्–, भाग्–, भीग्–, भूल्–, मान्–, मिट्–, मिल्–, नाच्–, रिस्–, लग्–, लड़्–,लिख्–, लूट्–; लेट्–, लौट्–, सज्–, सीख्–, सुन्–, सूख्–, सूँघ्–, हँस्–, हार्–, हिल्– / इत्यादि धातुओं के साथ है।

३.१.१.२.४ क्रिया-विशेषण व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना

विभिन्न कोटियों में निम्नलिखित व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से क्रिया-विशेषण व्युत्पन्न-प्रातिपदिकों की संरचना होती है। इन्हें उदाहरणार्थ इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि क्रिया-विशेषणों का एक विशिष्ट शब्द-वर्ग धातुओं में परप्रत्ययों के योग से व्युत्पन्न होता है। इसको परम्परागत व्याकरणों में 'कृदन्त अव्यय' के नाम से अभिहित किया गया है।

इस प्रकार के क्रिया-विशेषणों को 'क्रिया-विशेषणार्थक कृदन्त' के नाम से पुकारना उचित होगा। क्रिया-विशेषणार्थक कृदन्त शब्दों का अन्य क्रिया-विशेषणों से संरचनात्मक अथवा रूपात्मक अन्तर न होकर अर्थगत अन्तर है। ये कालार्थक होते हैं। अतएव क्रिया-विशेषणार्थक कृदन्तों की व्युत्पन्नता का अध्ययन भी अन्य क्रिया-विशेषणों के साथ किया जा रहा है।

(१) {–अत्र} –विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

अन्य – + – अत्र > अन्यत्र

(२) {–अन्} –संज्ञा प्रातिपदिकों एवं विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय	क्रिया वि० प्रा०
आदत्	– + – अन् >	आदतन
कानून्	– + – अन् >	कानूनन्

विशेषण प्रा०	परप्रत्यय	क्रि० वि० प्रा०
मज्बूर्	– + – अन् >	मज्बूरन्

(३) {–आना} –क्रिया-विशेषणों के पश्चात् जुड़ता है :—

रोज् – + – आना > रोजाना

(४) {–आड़ी} –अव्ययों के पश्चात् जुड़ता है :—

आगे – + – आड़ी > अगाड़ी

(५) {–ए} –संज्ञा प्रातिपदिकों, विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं के पश्चात् जुड़ता है :—

संज्ञा प्रा०	परप्रत्यय	क्रि० वि० प्रा०
सवेरा	– + – ए >	सवेरे

विशेषण प्रा०	परप्रत्यय	क्रि० वि० प्रा०
अन्जान्	– + – ए >	अन्जाने

धातुओं में इसके योग से पूर्ण क्रिया-विशेषणार्थक कृन्दतों का निर्माण होता है :—

हो – + ए > हुए

धातुओं में परप्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में उसी प्रकार से ध्वन्यात्मक परिवर्तन होते हैं जिस प्रकार {क्रिया वर्ग ४ बहुवचन पुल्लिग} विभक्ति की यौगिक प्रक्रिया में होते हैं।

(दे० ३.२.४.४. संधि विचार)

(६) {–कर्} –विशेषण प्रातिपदिकों एवं क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों एवं धातुओं के पश्चात् जुड़ता है :—

विशे० प्रा० परप्रत्यय क्रि० वि० प्रा०

खास् – + – कर् > खास्कर्

क्रिया वि० प्रा० परप्रत्यय क्रि० वि० प्रा०

क्यों – + – कर् > क्योंकर्

धातुओं में इसके योग से पूर्वकालिक क्रिया विशेषणार्थक कृदन्तों का निर्माण होता है :—

जा – + – कर् > जाकर्

/कर्/ धातु के बाद {–कर्} का {के} आता है।

(७) {–चे} –क्रिया विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

अगर् – + – चे > अगर्चे

(८) {–तया} –विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

विशेश् – + – तया > विशेश्तया (विशेषतया)

(९) {–तर्} –क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

पेश् – + – तर् > पेश्तर्

(१०) {–ते} –धातुओं में इसके योग से अपूर्ण क्रिया-विशेषणार्थक कृदन्तों का निर्माण होता है :—

जा – + – ते > जाते

(११) {–तह्} –संज्ञा प्रादिपदिकों में जुड़ता है :—

अंश् – + – तह् > अंश्तह् (अंशतः)

(१२) {–तोगत्वा} –संज्ञा प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अन्त – + – तोगत्वा > अन्ततोगत्वा

(१३) {–था} –विशेषण प्रातिपदिकों में जुड़ता है :—

अन्य – + – था > अन्यथा

(१४) {–पूर्वक्} –संज्ञा प्रातिपदिकों के पश्चात् जुड़ता है :—

प्रेम् – + – पूर्वक् > प्रेमपूर्वक्

ध्यान् – + – पूर्वक् > ध्यानपूर्वक्

(१५) {–वश्} –संज्ञा प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है :—

विधि – + – वश् > विधिवश्

भय् – + – वश् > भयवश्

(१६) {–वार्} – संज्ञा प्रातिपदिकों के आगे जोड़ा जाता है :—

माह् – + – वार् > माह्वार्

तारीख् – + – वार् > तारीख्वार्

(१७) {–ही} – अपूर्ण क्रिया विशेषणार्थक कृदन्तों में इसके योग से वर्तमानकालिक क्रिया विशेषणार्थक कृदन्तों का निर्माण होता है :—

जाते – + – ही > जाते ही

३.१.२.२.५ कृदन्त (संज्ञा एवं विशेषण) व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना

यहां यह उल्लेखनीय है कि कृदन्त हिंदी में कोई शब्द-कोटि नहीं है अपितु कृदन्त से तात्पर्य धातुओं से व्युत्पन्न होने वाले ऐसे शब्द-समूह से है जिसके सदस्य संज्ञा वाक्यांश में नामिक केन्द्रक के रूप में अथवा / तथा संज्ञा वाक्यांश में नामिक केन्द्रक के पूर्व विशेषणवत् कार्य करते हैं तथा नामिक केन्द्रक के रूप में संज्ञा कोटि एवं विशेषणवत् कार्य करने पर विशेषण कोटि के अनुसार रूपान्तरित होते हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि समान ध्वनिग्रामिक आकार वाले क्रिया रूप एवं कृदन्त बहु-अर्थक न होकर समनाम शब्द हैं। उदा०

/ पानी बह्ता है / में / बह्ता / में धातु बह्– के बाद क्रिया वर्ग ५ की विभक्तियाँ जुड़ रही हैं। किन्तु / बह्ता पानी / में धातु बह्– के बाद {ता} व्युत्पादक परप्रत्यय का योग हो रहा है।

धातुओं से विभिन्न कृदन्त रूपों का निर्माण निम्नलिखित व्युत्पादक पर-प्रत्ययों के योग से होता है :—

(१) {–ना} – धातुओं में जोड़कर जो रूप बनता है उनकी कार्य-कारिता, वितरण एवं रूपान्तरण संज्ञा कोटि के पुंल्लिग वर्ग २ एकवचन रूपों के अनुरूप होती है। इन्हें क्रियार्थक संज्ञा के नाम से पुकारा जाता है।

यथा :—

अवि० कारक एकवचन – / टहल्ना अच्छी बात् है /

वि० कारक एकवचन – / टहल्ने से स्वास्थ्य बढ़ता है /

वाक्यांश धरातल पर क्रियार्थक संज्ञा के विकारी कारक एकवचन रूपों के आगे रूपान्तर सहित परसर्ग {-वाला} (दे० ३. २. ७. २) एवं रूपान्तर रहित परसर्ग {-वाली} (दे० ३. २. ७. १) जुड़ते हैं तो संरचित रूप संज्ञा एवं विशेषण

कोटियों में प्रयुक्त होते हैं। इन्हें कर्तृवाचक संज्ञा कृदन्त के नाम से पुकारा जाता है।

संज्ञा—पु० —गानेवाला आ रहा है।

स्त्री —गानेवाली आ रही हैं।

वि०— गानेवाला भिखारी आ रहा है।

{—ता} — धातुओं में जोड़कर जो रूप बनता है उनकी कार्यकारिता वितरण एवं रूपान्तरण संज्ञा एवं विशेषण कोटि के अनुरूप होती हैं। इन्हें वर्तमानकालिक कृदन्त के रूप से पुकारा जाता है। संज्ञा पुल्लिग एवं विशेषण पुल्लिग में इनका रूपान्तरण क्रमशः पुल्लिग वर्ग २ एवं ३. २. ३. १. २ की रूपान्तर सहित विशेषणों की विभक्तियों के द्वारा होता है।

यथा :—

वह् + — ता > वह्ता

मर् + — ता > मर्ता

संज्ञा — / मर्ता क्या न कर्ता /

विशेषण — / वह्ता पानी /

व्युत्पन्न वर्तमानकालिक कृदन्तों में {—ई} व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से जो व्युत्पन्न रूप बनता है वह प्रयोगानुसार रूपान्तर रहित विशेषण एवं संज्ञा स्त्रीलिंग एकवचन में प्रयुक्त होता है। स्त्रीलिंग संज्ञा में एकवचन में ही प्रयोग मिलता है, बहुवचन में नहीं; अर्थात् स्त्रीलिंग संज्ञा में रूपान्तरण नहीं होता।

{—आ} — धातुओं में जोड़कर जो रूप बनता है उनकी कार्यकारिता वितरण एवं रूपान्तरण संज्ञा एवं विशेषण कोटि के अनुरूप होती है। इन्हें भूत-कालिक कृदन्त के नाम से पुकारा जाता है।

संज्ञा पु० एवं विशेषण पुल्लिग में इनका रूपान्तरण वर्तमानकालिक कृदन्तों की ही भाँति होता है। व्युत्पन्न वर्तमानकालिक कृदन्तों की भाँति व्युत्पन्न भूत-कालिक कृदन्तों में भी {—ई} व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से जो रूप बनता है वह प्रयोगानुसार रूपान्तररहित विशेषण वर्ग एवं संज्ञा स्त्रीलिंग एकवचन में प्रयुक्त होता है। व्युत्पन्न रूप अपवादस्वरूप संज्ञा स्त्रीलिंग के बहुवचन के विकारी कारक में भी प्रयुक्त होता है उस समय विकारी कारक बहु० विभ० {—ओं} लगती है। यथा :—/ मारियों को क्या मार्ना /

उदा० मर् — + — आ > मरा

संज्ञा— / मरा क्या कर् सक्ता है /

/ मरे को क्या मार्ना /

विशेषण– / मरा आदमी /

धातुओं में {–आ} परप्रत्यय के योग से ध्वन्यात्मक परिवर्तन उसी प्रकार होते हैं, जिस प्रकार {क्रिया वर्ग ४ एकवचन पुल्लिग} विभक्ति की यौगिक प्रक्रिया में होते हैं।[1] वाक्यांश धरातल पर वर्तमानकालिक कृदन्त + भूतकालिक कृदन्त मिलकर बृहत् संरचना का निर्माण करते हैं।

३.१.२ प्रातिपदिक समास द्वारा प्रातिपदिक संरचना

३. १. २. ० भूमिका :—इस प्रकार की संरचना में समस्त समीपी संघटक स्वयं प्रातिपदिक अथवा मुक्त रूप होते हैं। इस प्रकार सामासिक शब्द में उसके समीपी संघटक मुक्त रूप अर्थात् स्वयं प्रयुक्त होने की क्षमता रखते हैं तथा एक शब्द का निर्माण करते हैं।[2]

---

१. दे० ३.२.४.४ कुछ विचार।

२. मिलाइए :

(A) 'Compound words have two (or more) free forms among their immediate constituents (door-knob).

—Bloomfield—Language, p. 227. (1963).

(B) "If at least one of the immediate constituents of a word is a bound form the word is a complex, if both of the immediate constituents are Free Forms, the word is compound."

—Bloch and Trager : 'Outline of Linguistic Analysis", Linguistic Society of America (1942), p. 66.

(C) "Some stems of words contain two or more roots, and are said to be compound. Blackbird /bl̥ǝ́kǝ̀rd/ is a compound word, containing two roots, /blǝek/ and /bǝrd/. Blackbird contains a compound stem and an affix."

—H. A. Gleason—"An Introduction to Descriptive Linguistics." (Revised Edition), (1961), p. 59.

(D) 'Stem Compounds, in which both (or all) ICs are themselves Stems."

—C. F. Hockett— 'A Course in Modern Linguistics", p. 240.

सामासिक शब्द एवं वाक्यांश में अन्तर होता है। सामासिक शब्द में उसके समीपी संघटक मुक्त रूप प्रातिपदिक मिलकर एक शब्द का निर्माण करते हैं, किन्तु सामासिक वाक्यांश के समीपी संघटक वाक्यांश की रचना करते हैं।[1]

ध्वन्यात्मक स्तर पर हिन्दी में सामासिक शब्द एवं वाक्यांश के मध्य अल्प विवृत्ति एवं आघात का अन्तर होता है। सामासिक शब्द के मध्य अल्प विवृत्ति का प्रवेश नहीं होता है इस कारण मुक्त रूपों के जितने समीपी संघटक मिलकर जितने अक्षरों का सामासिक शब्द बनाते हैं, उस पर उतने ही अक्षरों वाले शब्दों की नियत स्थितियों के अनुरूप बलाघात पड़ता है। इसके विपरीत सामासिक वाक्यांश में समीपी संघटकों के मध्य अल्पविवृति /+/ का आगम होता है, इस कारण सामासिक-वाक्यांश में समीपी संघटकों पर उनके अक्षरानुरूप बलाघात पड़ता है। कुछ उदाहरणों द्वारा इस बात को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:—

---

१. (अ) समास शब्द एवं वाक्यांश की ध्वन्यात्मक दृष्टि से भिन्नता का साइमन पौटर ने इस प्रकार व्यक्त किया है:—

Such primary compounds differ from word-groups or phrases in (a) phonemic qualities of components; (b) juncture; or (c) stress; or by a combination of two or more of these.

—Simeon Potter—'Modern Linguistics' (1960), p. 91.

(ब) समास शब्द एवं वाक्यांश में पदग्रामिक दृष्टि से अन्तर बताते हुए डा० रमेशचन्द्र जैन ने लिखा है:—"दो स्वतंत्र शब्दों के योग से बना होने पर भी समास वाक्यरचना में व्याकरण की एक इकाई का रूप ग्रहण करता है। उदाहरणार्थ किसी भाषा में संज्ञा का रूप लेगा अथवा विशेषण या अन्य किसी रूपात्मक इकाई का। संज्ञा और विशेषण के रूप में उसकी रूपात्मक सत्ता पृथक्-पृथक् नहीं हो सकती। यदि उसकी सत्ता पृथक्-पृथक् रहती है तो ऐसे शब्द समास की रचना नहीं, वाक्यांश की रचना करेंगे।...समास, शब्द की भाँति व्याकरण की एक इकाई के रूप में वाक्य-रचना के अन्तर्गत कार्य करता है, उसकी एक कसौटी यह भी है कि जिस प्रकार किसी शब्द में शब्दांश जोड़कर नवीन यौगिक शब्दों की रचना कर ली जाती है, उसी प्रकार समास में भी शब्दांशों के योग से नवीन यौगिक शब्दों की रचना होती है।"

—डा० रमेशचन्द्र जैन : 'हिन्दी समास-रचना का अध्ययन' पृष्ठ ९, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (१९६४)।

सामासिक शब्द	वाक्यांश
/ अकाल्पीड़ित् /	/ अकाल्+पीड़ित् /
/ अपनेराम् /	/ अपने+राम /
/ आज्कल् /	/ आज्+कल् /
/ आनाजाना /	/ आना+जाना /
/ खातापीता /	/ खाता+पीता /
/ रेल्गाड़ी /	/ रेल्+गाड़ी /
/ कालापानी /	/ काला+पानी /

सामासिक-शब्दों की दो प्रकार की रचनाएँ मिलती हैं :—

(१) अन्तः केन्द्रमुखी

(२) वहिः केन्द्रमुखी

यदि कोई सामासिक शब्द वही भाव प्रकट करता है जो उसका कोई समीपी संघटक करता है तो इस प्रकार के सामासिक शब्द को 'अन्तः केन्द्रमुखी' समास कहेंगे और इस प्रकार के सामासिक शब्दों की संरचना 'अन्तः केन्द्रमुखी संरचना' कहलाएगी। इस प्रकार की संरचना में समस्त सामासिक शब्द अपने एक समीपी-संघटक के अनुरूप कार्य करता है। यथा :—/ रेल्गाड़ी। /

/ रेलगाड़ी जा रही है /

/ रेल् जा रही है /

/ गाड़ी जा रही है /

यदि कोई समास शब्द वही भाव एवं कार्य द्योतित नहीं करता जो उसके किसी समीपी-संघटक द्वारा होता है तो इस प्रकार के सामासिक शब्द को 'बहिः केन्द्रमुखी' समास कहेंगे। इस प्रकार की संरचना में सामासिक शब्द को उसके किसी समीपी संघटक द्वारा स्थानापन्न नहीं किया जा सकता है। यथा :—

/ उसे कालापानी हो गया था /

इसमें 'कालापानी' का जो कार्य है, वह न तो 'काला' द्वारा हो सकता है और न 'पानी' द्वारा। इस कारण / कालापानी / समास की संरचना बहिः केन्द्रमुखी संरचना कहलायेगी।

कभी कभी समास-शब्द के समीपी-संघटकों की यौगिक प्रक्रिया में ध्वनिग्रामिक परिवर्तन हो जाता है। समास शब्द के निर्मापक समीपी संघटकों में ध्वन्यात्मक परिवर्तन हुआ है अथवा नहीं, इसके आधार पर सामासिक शब्दों को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है :—

(१) संधि-युक्त समास
(२) संधि-हीन समास

समास के समीपी संघटकों में ध्वन्यात्मक परिवर्तन दो प्रकार का हो सकता है :—

(क) पहले समीपी संघटक के अंतिम ध्वनिग्राम एवं / अथवा दूसरे समीपी संघटक के प्रारम्भिक ध्वनिग्राम में परिवर्तन। इस प्रकार के परिवर्तन को वाह्य संधि कहते हैं, तथा इस प्रकार की संधि से युक्त समासों को 'वाह्य संधि-युक्त' समास कहेंगे।

(ख) पहले समीपी संघटक के अन्तिम ध्वनिग्राम के पूर्व एवं / अथवा दूसरे समीपी संघटक के प्रारम्भिक ध्वनिग्राम के पश्चात् के ध्वनिग्रामीय आकार में परिवर्तन। इस प्रकार के परिवर्तन को आन्तरिक संधि कहते हैं तथा इस प्रकार की संधि से युक्त समासों को 'आंतरिक संधि-युक्त समास' कहते हैं। आगे सामासिक शब्दों द्वारा व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की प्रमुख पद्धतियों का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा। यह अध्ययन इस दृष्टि से संवलित होगा कि समास-शब्द के समीपी संघटकों की अलग अलग कोटियाँ क्या हैं तथा उनके योग से व्युत्पन्न शब्द किस कोटि का है। इस प्रकार व्युत्पन्न सामासिक शब्द की कोटियों के अनुसार अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा। प्रस्तुत प्रकरण में 'कृदन्त' रूपों को विशेषण कोटि के एवं 'अव्यय कृदन्तों' को अव्यय या क्रिया-विशेषण कोटि के अन्तर्गत रखकर विश्लेषण किया गया है।

३.१.२.१ संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिक

संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण दो, तीन अथवा चार निर्मापक समीपी-संघटकों द्वारा होता है। दो निर्मापक समीपी-संघटकों के योग से जिन संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों का निर्माण होता है उनमें से पूर्व-समीपी संघटक 'संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया' तथा पश्चात् समीपी संघटक 'संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया' कोटि का हो सकता है। इनका परस्पर योग प्रतिबंधित है। संज्ञा कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा, क्रिया अथवा विशेषण में से किसी एक की कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ तथा सर्वनाम कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा अथवा विशेषण में से किसी एक की कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न सामासिक-प्रातिपदिकों की संरचना करता है। विशेषण कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा अथवा विशेषण में से किसी एक की कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर

संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न सामासिक-प्रातिपदिकों की संरचना करता है। क्रिया कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक क्रिया अथवा संज्ञा कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों की संरचना करता हैं। इसके गठनात्मक स्वरूप को इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है :—

सं० को० व्यु० – सा० प्रा० → {
{ सं० } + { सं०, वि०, क्रि० }
{ सर्व०, वि० } + { सं०, वि० }
क्रि० + { क्रि०, सं० }
}

तीन निर्मापक मुक्त रूपों के योग से जिन संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण होता है उनमें से पहला मुक्त रूप संज्ञा कोटि का, मध्य का मुक्त रूप क्रिया अथवा संज्ञा कोटि का तथा अन्तिम मुक्त रूप संज्ञा कोटि का होता है, अर्थात् :—

सं० को० व्यु० – सा० प्रा० → सं० + { सं०, क्रि० } + सं०

चार निर्मापक मुक्त रूपों के योग से जिन संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण होता है उनमें से पहला दूसरा संज्ञा, तीसरा विशेषण एवं चौथा संज्ञा होता है।

दो, तीन एवं चार निर्मापक मुक्त रूपों के योग से निर्मित संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण निम्न प्रकार से तालिका में प्रदर्शित किया जा सकता है :—

सं० को० न्यु०– सा०-प्रा०→
- सं० + { सं० (वि०) (सं०) / वि० / क्रि० (सं०) }
- { सर्वं०+ / वि० } { सं० / वि० }
- क्रि० + { क्रि० / सं० }

उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:—

(१) संज्ञा+संज्ञा>संज्ञा

(क) संधि-हीन :

वाद्-विवाद्	डाक्-घर्
माता-पिता	रुपया-पैसा
कूड़ा-कच्रा	नौकर्-चाकर्

(ख) संधि-युक्त :

हथ्कड़ी	हस्ताक्षर्
पन्चक्की	राजपूत्

(२) संज्ञा+विशेषण>संज्ञा

(क) संधि-हीन :

जन्-साधारण्	शान्ति-प्रेमी

(ख) संधि-युक्त :

पुरुषोत्तम्	घुड़सवार्

(३) संज्ञा+क्रिया>संज्ञा

(क) संधि-हीन :

जेब्कट्

(ख) संधि-युक्त :

चिड़ीमार्

(४) संज्ञा+संज्ञा+संज्ञा > संज्ञा

हिन्दी-साहित्य-समिति

(५) संज्ञा+संज्ञा +विशेषण+संज्ञा >संज्ञा

काशी-नागरी-प्रचारिणी-सभा

(६) संज्ञा+क्रिया+संज्ञा > संज्ञा –धातु पश्चात् विकल्प से /आ/ का आगम होता है।

काम्-रोको-प्रस्ताव्
भारत्-छोड़ो-आन्दोलन्

(७) सर्वनाम+संज्ञा > संज्ञा
आप्लोग् हम्लोग्

(८) सर्वनाम+विशेषण > संज्ञा
अप्ना-पराया आप्वीती

(९) विशेषण+संज्ञा > संज्ञा
(क) संधि-हीन :
महासागर् बहुवचन्
(ख) संधि-युक्त :
एकाधिकार् पीताम्बर्
इकन्नी चौराहा
पंसेरी तिमाही

(१०) विशेषण+विशेषण > संज्ञा
इसमें दोनों निर्मापक समीपी संघटक भूतकालिक 'कृदन्त' ही होते हैं।
(क) संधि-हीन :
कहा-सुना आया-गया
(ख) संधि-युक्त :
भागा-भूगी मारा-मारी

(११) क्रिया+क्रिया > संज्ञा
(क) संधि-हीन :
भूल्-चूक्
रोक्-टोक

(१२) क्रिया+संज्ञा > संज्ञा
संधि-युक्त :
मर्घट्

३.१.२.२ विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक-प्रातिपदिक

विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण दो निर्मापक समीपी-संघटकों द्वारा होता है। इनमें से पूर्व समीपी संघटक संज्ञा, विशेषण, क्रिया एवं अव्यय तथा पश्चात् समीपी-संघटक संज्ञा, विशेषण, क्रिया की कोटि का

हो सकता है। इनका परस्पर योग प्रतिबंधित है। संज्ञा कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा, विशेषण अथवा क्रिया में से किसी एक की कोटि के मुक्तरूप प्रातिपदिक के साथ तथा विशेषण, क्रिया अथवा अव्यय कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा अथवा विशेषण कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर ही विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों की संरचना कर सकता है। इसके गठनात्मक स्वरूप को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:—

वि० को० व्यु०-सा०-प्रा० → { संज्ञा + { सं० / वि० / क्रि० } ; { वि० / क्रि० / अव्० } + { सं० / वि० } }

उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

१. संज्ञा+संज्ञा > विशेषण

पत्थर्-दिल् चन्द्रमुख[1]

२. संज्ञा+विशेषण > विशेषण

(क) सन्धि-हीन :

पथ्-भ्रश्ट् कला-प्रवीन्

मन्-गढ़न्त् मन्-मौजी

(ख) सन्धि-युक्त :

आशातीत्

विशेषण रूप में कृदन्त रूप भी मिलते हैं।

(क) संधि-हीन :

आँसू-भरा

(ख) संधि-युक्त :

कन्-कटा भुख्-मरा

३. संज्ञा +क्रिया > विशेषण

(क) संधि-हीन :

पेट्-भर्[2]

सेर्-भर्[2] शक्ति-भर्[2]

---

१. 'चन्द्रमुख्' प्रयोगानुसार संज्ञा एवं विशेषण दोनों कोटियों का हो सकता है। दे०—'ए बेसिक ग्रामर आफ मार्डन हिन्दी', पृष्ठ १४९।

२. पाद-टिप्पणी अगले पृष्ठ पर देखिए।

४. क्रिया+संज्ञा > विशेषण

हँस् मुख	भर्-पेट्[1]

विशेष :

/शेर्-भर्, शक्तिभर्, पेट्-भर्, भर्-पेट्/ इत्यादि व्यु०—सा०—प्रा० प्रयोगानुसार विशेषण एवं क्रिया-विशेषण दोनों कोटियों के हो सकते हैं। यथा:—
विशेषण को० के रूप में :—

(१) /भर्-पेट् भोजन् कर्ना चाहिए/
(२) /शक्ति-भर् काम् कर्ना चाहिए/
(३) /मैंने पेट्-भर् भोजन् किया/

अव्यय (क्रिया—विशेषण) को० के रूप में :—

१. /उसे भोजन् भर्-पेट् कराओ /
२. /मेरा ही भाग्य खराब् था, उसने सारे प्रयत्न शक्ति-भर् किये /
३. /उसे भोजन् पेट्-भर् कराओ /

/भर्पेट्/ का पूर्व समीपी संघटक एवं / शक्तिभर् / तथा / पेट्भर् / का पश्चात् समीपी संघटक किस कोटि का है, यह विषय विवादग्रस्त हो सकता है। /भर् / को विशेषण, अव्यय एवं क्रिया तीनों कोटियों का माना जा सकता है। यहाँ /भर् / को क्रिया कोटि मानने का कारण यह है कि विशेषण एवं अव्यय (क्रि० वि०) दोनों ही कोटियों में क्रिया+संज्ञा तथा संज्ञा+क्रिया कोटि के मुक्त रूपों के क्रम से व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों के उदाहरण मिलते हैं।

पूर्व समीपी संघटक के रूप में /भर्/ को विशेषण कोटि का माना जा सकता है, क्योंकि विशेषण कोटि एवं अव्यय कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण विशेषण को० +संज्ञा को० के मुक्त रूपों के योग से होता है।

पूर्व समीपी संघटक के रूप में /भर्/ को अव्यय इस कारण नहीं माना जा सकता क्योंकि अव्यय कोटि+संज्ञा कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिकों के योग से विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपादिकों का तो निर्माण होता है किन्तु उस क्रम से अव्यय कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण नहीं होता है।

पश्चात् समीपी संघटक के रूप में /भर्/ को न तो विशेषण कोटि का माना जा सकता है और न अव्यय कोटि का। इसका कारण यह है कि संज्ञा कोटि+विशेषण कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिकों के योग से केवल विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण होता है, अव्यय कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण नहीं होता है। इसके विपरीत संज्ञा कोटि+अव्यय कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिकों के योग से केवल अव्यय कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का

(शेष अगले पृष्ठ पर)

५. क्रिया+विशेषण > विशेषण

इस प्रकार की कोटियों के मुक्त रूपों के योग से वि० को० के व्यु० सा० प्रा० के उदाहरण अपवाद स्वरूप प्राप्त हैं। यथा :—

मर् – + – भूखा मर्भक्खा

६. विशेषण+विशेषण > विशेषण

विशेषण रूप में कृदन्त शब्द भी प्रयुक्त हैं।

(क) संधि-हीन :

गहरा-नीला	सवा-चार्	खाता-पीता
दस्-पाँच्	बहुत्-अच्छा	जीता-जाग्ता
दस्-बीस्	ऐसा-वैसा	

(ख) संधि-युक्त :

तीन् मंजिला	अध् कच्चा	अध्-जला
		अध्-खिला

(पिछले पृष्ठ का शेष)

निर्माण होता है, विशेषण कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण नहीं होता है।

यदि हम /भर्/ को क्रिया कोटि का मान लेते हैं तो तत्सम्बन्धित कोई कठिनाई नहीं रह जाती है। क्रिया कोटि+संज्ञा कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिकों के योग से तथा इसी प्रकार संज्ञा कोटि+क्रिया कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिकों के योग से विशेषण तथा अव्यय दोनों ही कोटियों के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण होता है।

यहाँ एक अन्य प्रश्न उठाया जा सकता है कि पूर्व समीपी संघटक के रूप में हम /भर्/ को विशेषण कोटि का क्यों नहीं मान लेते ? /भर्पेट्/ में /पेट्/ विशेष्य के विशेषण रूप में /भर्/ कार्य भी कर रहा है। /भर्/ को पूर्व समीपी संघटक के रूप में भी विशेषण कोटि के न मानने का कारण यह है कि /भर्/ विशेषण कोटि के रूप में कभी मुक्त रूप में प्रयुक्त नहीं होता है। इसके विपरीत क्रिया कोटि के रूप /भर्/ मुक्त रूप में प्रयोग में आता है।

इन्हीं कारणों से प्रस्तुत विश्लेषण में /भर्/ को क्रिया कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के रूप में स्वीकार किया गया है।

विशेष

हिन्दी में दस (१०) से ऊपर की सौ (१००) तक की गणनात्मक संख्याओं में – १९, २०, २९, ३०, ३९, ४०, ४९, ५०, ५९, ६०, ६९, ७०, ७९, ८०, ८९, ९०, ९९, १००। संख्या द्योतक विशेषणों को छोड़कर शेष समस्त संख्याओं के द्योतक शब्दरूपों को व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिक के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, जिनके दो समीपी संघटक संख्यावाचक मुक्त रूप होते हैं। इन मुक्तरूपों की यौगिक प्रक्रिया में सामान्य से भिन्न ध्वन्यात्मक परिवर्तन होता है, इस कारण इन्हें विशेषण व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों की एक विशेष कोटि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। यथा :—

एक्	+	दस्	>	ग्यारह
दो	+	दस्	>	बारह्
तीन्	+	दस्	>	तेरह
चार्	+	दस्	>	चौदह्
पाँच्	+	दस्	>	पन्द्रह्
छह्	+	दस्	>	सोलह्
सात्	+	दस्	>	सत्तरह्
आठ्	+	दस्	>	अट्ठारह्

एक्	–	+	–	बीस्	>	इक्कीस	~	इक्किस्
दो	–	+	–	बीस्	>	बाईस्	~	बाइस्
तीन्	–	+	–	बीस्	>	तेईस्	~	तेइस्
चार्	–	+	–	बीस्	>	चौबीस्	~	चौबिस्
पाँच्	–	+	–	बीस्	>	पच्चीस्	~	पच्चिस्
एक्	–	+	–	तीस्	>	एक्तिस्	~	इक्कत्तिस्
तीन्	–	+	–	तीस्	>	तेतीस्	~	तेत्तिस्
चार्	–	+	–	तीस्	>	चौतीस्	~	चौतिस्
सात्	–	+	–	तीस्	>	सैंतीस्	~	सैंतिस्
आठ्	–	+	–	तीस्	>	अड़तीस्	~	अड़्तिस्
छह्	–	+	–	चालिस	>	छिआलिस		

कुछ विशेषणकर्त्ता २०, ३०, ४०, ५०, ६०, ७०, ८०, ९० द्योतक संख्याओं को भी दो समीपी संघटकों में विभाजित कर सकते हैं। यथा :—

दो	–	+	–	दस्	>	बीस्
तीन्	–	+	–	दस्	>	तीस्

चार्	–	+	–	दस्	>	चालीस् ~ चालिस्
पाँच्	–	+	–	दस्	>	पचास्
छह्	–	+	–	दस्	>	साठ्
सात्	–	+	–	दस्	>	सत्तर्
आठ्	–	+	–	दस्	>	अस्सी
नौ	–	+	–	दस्	>	नव्वे

ऐसी स्थिति में २१ से ९८ तक की संख्याओं में २९, ३०, ३९, ४०, ४९, ५०, ५९, ६०, ६९, ७०, ७९, ८०, ८९, ९० संख्याओं को छोड़ कर शेष समस्त संख्याओं में तीन समीपी संघटकों को मानना पड़ेगा। यथा :—

पाँच्	+	सात्	+	दस्	>	पचहत्तर्
सात्	+	सात्	+	दस्	>	सतहत्तर्
आठ्	+	आठ्	+	दस्	>	अठ्ठासी

इन संख्यावाचक विशेषणों के रूपग्रामिक समीपी संघटक एवं मुक्त रूप में आने वाले मूलरूपग्राम में अत्यधिक ध्वन्यात्मक परिवर्तन हो जाता है। इस कारण इन्हें विशिष्ट (यूनीक) रूपग्राम[1] के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

७. विशेषण+संज्ञा > विशेषण

(क) संधि-हीन :

खुश्‌दिल्   बद्-नाम्

चल्ता-पुर्जा   बहु-मूल्य

(ख) संधि-युक्त :

दुमंजिला   तिमंजिला

८. अव्यय+संज्ञा > विशेषण

संधि-युक्त :

बिला-कसूर्   बिला-बात्

११. अव्यय+विशेषण (कृदन्त) > विशेषण

(क) संधि-हीन :

नीचे लिखा

(ख) संधि-युक्त :

बिन्-सुना   बिन्-कहा

---

१. Unique Morphene—C. F. Hockett—"A Course in Modern Linguistics.", p. 127.

३.१.२.३ सर्वनाम कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिक

सर्वनाम कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण दो निर्मापक समीपी संघटकों द्वारा होता है। इनमें से पूर्व समीपी संघटक सर्वनाम कोटि का तथा पश्चात् समीपी संघटक भी सर्वनाम कोटि का होता है। उदाहरण सहित इन्हें इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(१) सर्वनाम + सर्वनाम > सर्वनाम

(क) संधि-हीन :

मैं-तुम् मेरा-तेरा

(ख) संधि-युक्त :

कोई-न-कोई

३.१.२.४ क्रिया कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिक

क्रिया कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण दो निर्मापक समीपी संघटकों द्वारा होता है तथा दोनों क्रिया कोटि के ही होते हैं। यथा—

खा—पी = उसने खाना खा-पी लिया

जा—फँस् = वह उसकी पार्टी में जा फँसा

३.१.२.५ अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिक

अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण दो निर्मापक समीपी-संघटकों द्वारा होता है। इनमें से पूर्व समीपी संघटक संज्ञा; सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय (क्रिया-विशेषण) तथा पश्चात् समीपी-संघटक भी संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया अथवा अव्यय (क्रिया-विशेषण) की कोटि का हो सकता है। इनका परस्पर योग प्रतिबंधित है। संज्ञा कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा, क्रिया अथवा अव्यय (क्रिया-विशेषण) में से किसी एक की कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिल कर, विशेषण कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा, विशेषण, अव्यय (क्रिया-विशेषण) में से किसी एक की कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर, सर्वनाम कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक सर्वनाम अथवा अव्यय कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर, क्रिया कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक संज्ञा कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ मिलकर, तथा अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि का मुक्त रूप प्रातिपदिक अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि के मुक्त रूप प्रातिपदिक के साथ ही मिलकर, अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि के

व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों की संरचना कर सकते हैं। इसके गठनात्मक स्वरूप को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है :—

अ० को० व्यु०-सा० प्रा० →	संज्ञा	+	सं०, क्रि०, अ०
	विशेषण	+	सं०, वि०, अ०
	सर्वनाम	+	सर्व०, अ०
	क्रिया	+	संज्ञा
	अव्यय	+	अ०

इन्हें उदाहरण सहित इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(१) संज्ञा+संज्ञा > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

(क) संधि-हीन :

रात्-दिन् घर-वाहर्

सुवह्-शाम् साँझ्-सवेरे

(ख) संधि-युक्त :

रातोंरात् हाथोंहाथ्

(२) संज्ञा+क्रिया > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

पेट्भर् शक्तिभर्

(३) संज्ञा+अव्यय (क्रिया-विशेषण) > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

(क) संधि-हीन :

घर्-वाहर् ध्यान्पूर्वक्

(ख) संधि-युक्त :

आज्ञानुसार् नियमानुसार्

(४) विशेषण+संज्ञा > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

एक्साथ् हर्-दिन्

(५) विशेषण+विशेषण > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

(क) संधि-हीन :

बहुत्-कुछ् साफ् साफ्

सब्-कुछ् एक्-एक्[1]

(ख) संधि-युक्त :

एकाएक्

(६) विशेषण+अव्यय (क्रिया-विशेषण) > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

अच्छी-तरह्

(७) सर्वनाम+सर्वनाम > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

(क) संधि-हीन :

आप्-आप् कुछ्-कुछ्

(ख) संधि-युक्त :

आप्-ही-आप् आप्-से-आप्

(८) सर्वनाम+अव्यय (क्रिया-विशेषण) > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

इस्-प्रकार् इस्लिए

(९) क्रिया+संज्ञा > अव्यय (क्रिया-विशेषण)

भर्पेट्

(१०) अव्यय (क्रि०-वि०)+अव्यय (क्रि०-वि०) > अव्यय (क्रि०-वि०)

(क) संधि-हीन :

इधर्-उधर् कल्-पर्सों सोते-जाग्ते

आज्कल् कभी-कभी उठ्ते-बैठ्ते

आगे-पीछे आम्ने-साम्ने

(ख) संधि-युक्त :

बीचोंबीच् कहीं-न-कहीं

---

१. /एक्-एक्/ प्रयोगानुसार विशेषण एवं क्रिया-विशेषण कोटि में आता है।

३.१.२.६ निष्कर्ष

(१) संज्ञा, विशेषण, सर्वनाम, क्रिया, अव्यय (क्रिया-विशेषण) सभी कोटियों के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण अपनी-अपनी कोटियों के दो निर्मापक समीपी-संघटकों द्वारा होता है।

(२) संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों के अतिरिक्त अन्य सभी कोटियों (विशेषण, सर्वनाम, क्रिया, अव्यय) के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों का निर्माण केवल दो निर्मापक समीपी-संघटकों द्वारा ही होता है।

(३) संज्ञा, विशेषण एवं अव्यय (क्रिया-विशेषण)—इन तीनों कोटियों के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों के निर्मापक समीपी संघटकों की कोटियों का एक समान साँचा उपलब्ध है। उसे इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है:—

संज्ञा, विशेषण एवं अव्यय (क्रि० वि०) को० के व्यु०-सा० प्रा० → { संज्ञा + {संज्ञा / क्रिया} ; वि० + {सं० / वि०} ; क्रिया + संज्ञा }

(४) संज्ञा, विशेषण, अव्यय के व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिकों के समीपी संघटकों की कोटियों के उपर्युक्त समान-साँचे के अतिरिक्त संज्ञा व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों एवं विशेषण व्युत्पन्न-सामासिक प्रातिपदिकों के समीपी संघटकों की कोटियों में निम्नलिखित दृष्टि से समानता और पायी जाती है:—

सं० एवं वि० कोटि के व्यु०—सा० प्रा० → सं० + वि०

(५) संज्ञा व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों एवं क्रिया व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों के समीपी संघटकों की कोटियों में निम्नलिखित दृष्टि से समानता पायी जाती है:—

संज्ञा एवं क्रि० कोटि के व्यु०-सा० प्रा० → क्रि० + क्रि०

(६) सर्वनाम एवं अव्यय कोटियों के व्युत्पन्न सामासिक प्रातिपदिकों के समीपी संघटकों की कोटियों में निम्नलिखित दृष्टि से समानता पायी जाती है:—

सर्व० एवं अ० कोटि के व्यु०-सा०-प्रा० → सर्व० + सर्व०

(७) केवल संज्ञा कोटि के व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों का निर्माण तीन एवं चार मुक्त रूपों के योग से होता है।

(८) संज्ञा, विशेषण एवं अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटि के ऐसे व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों की (जिनमें दो समीपी संघटक पाये जाते हैं) पूर्व एवं पश्चात् समीपी-संघटकों की कोटियाँ निम्नलिखित प्रकार से परस्पर भिन्न होती हैं, दूसरे शब्दों में संज्ञा, विशेषण एवं अव्यय (क्रिया-विशेषण) कोटियों के व्युत्पन्न-सामासिक-प्रातिपदिकों के दो निर्मापक समीपी-संघटकों की कोटियों की विशिष्ट विशेषताओं को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(क)

संo व्युo-साo प्राo → { सर्वं० + { सं० / वि० } ; क्रि० + क्रि० }

(ख)

वि० व्यु०-सा० प्रा० → { क्रि० + वि० ; अव० + { सं० / वि० } }

(ग)

अ० व्यु०-सा० प्रा० → { सं० + अव० ; वि० + अव० ; सर्वं० + { सर्वं० / अव० } ; अव० + अव० }

३.१.३ मूल-व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना

३.१.३.० भूमिका :

इस प्रकार की संरचना में समस्त समीपी-संघटक आवद्ध रूप होते हैं।[1]

आवद्ध रूपों में कोई व्युत्पादक प्रत्यय है या नहीं, इस आधार पर मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना के दो मुख्य भेद किए जा सकते हैं :—

१. मिलाइए—

(A) "Derived Primary words, containing more than one bound form."

—Bloomfield—"Language" (1963), p. 209.

(B) "Primary derived stems, in which no IC is itself a stem."

—C. F. Hockett. "A Course in Modern Linguistics", p. 240.

(१) मूल-व्युत्पादक :

इसके समीपी-संघटकों में से एक समीपी संघटक व्युत्पादक प्रत्यय होता है।

(२) आबद्ध रूप समास :

इसके दोनों समीपी-संघटकों में कोई भी व्युत्पादक प्रत्यय नहीं होता है।

३.१.३.१ मूल-व्युत्पादक

३.१.३.१.० भूमिका :

समीपी-संघटकों में कोई अक्रमक समीपी-संघटक है अथवा नहीं, इस आधार पर मूल व्युत्पादकों के दो भेद हो जाते हैं :—

(क) क्रमक समीपी-संघटक युक्त मूल व्युत्पादक :

इनमें पूर्व समीपी संघटक व्युत्पादक प्रत्यय हैं अथवा पश्चात् समीपी-संघटक व्युत्पादक प्रत्यय हैं, इसके आधार पर क्रमक समीपी संघटक-युक्त मूल-व्युत्पादकों के भी दो भेद किए जा सकते हैं :—

(अ) पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी-संघटक युक्त मूल-व्युत्पादक।
(आ) पर व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी-संघटक युक्त मूल-व्युत्पादक।

(ख) अक्रमक समीपी-संघटक युक्त मूल व्युत्पादक :

इसमें एक अक्रमक समीपी-संघटक होता है तथा दूसरा समीपी-संघटक मध्य व्युत्पादक प्रत्यय होता है।

३.१.३.१.१ क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक :

३.१.३.१.१.१ पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी-संघटक युक्त मूल व्युत्पादक :

इस प्रकार के प्रातिपदिकों में पूर्व-समीपी-संघटक पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय होता है तथा यह पश्चात् समीपी-संघटक (आबद्ध रूप) के साथ जुड़कर प्रातिपदिक संरचना करता है। निम्नलिखित पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय आबद्ध रूपों के साथ जुड़ कर व्युत्पन्न-प्रातिपदिकों का निर्माण करते हैं :—

{नि० उ०}=निकटवर्ती अर्थद्योतक उपसर्ग : इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{य–} काकल्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{इ–} दन्त्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{अ–} द्वयोष्ठ्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{ऐ–} वर्त्स्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{ϕ–} अर्द्धस्वर /य्/ के पूर्व

{दू० उ०}=दूरवर्ती अर्थद्योतक उपसर्ग : इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :

{व–} काकल्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{उ–} दन्त्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{वै–} वर्त्स्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व

{प्र० उ०}=प्रश्नवाचक अर्थद्योतक उपसर्ग : इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{कौ–} नासिक्य व्यंजनों के पूर्व
{कि–} दन्त्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{कै–} वर्त्स्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{क–} काकल्य संघर्षी व्यंजन एवं द्वयोष्ठ्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{क्–} अर्द्धस्वरों के पूर्व

{स० उ०}=सम्बन्ध वाचक उपसर्ग : इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{ज्–} स्वरों एवं अर्द्धस्वरों के पूर्व
{जि–} दन्त्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{जै–} वर्त्स्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{ज–} काकल्य संघर्षी एवं द्वयोष्ठ्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व

{सह स०उ०}=सहसम्बन्ध वाचक उपसर्ग : इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{त–}—काकल्य संघर्षी व्यंजन एवं द्वयोष्ठ्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{ति–}—दन्त्य स्पर्श व्यंजनों के पूर्व
{तै–}—वर्त्स्य संघर्षी व्यंजनों के पूर्व
{त्–}—अर्द्धस्वरों के पूर्व

ये उपर्युक्त उपसर्ग आवद्ध रूपों के साथ जुड़कर मूल व्युत्पन्न-प्रातिपदिक संरचना करते हैं। इस प्रकार के व्युत्पन्न प्रातिपदिक सर्वनाम, विशेषण एवं क्रिया-विशेषण कोटियों में से किसी कोटि के होते हैं। कोटियों के आधार पर इनका अध्ययन इस प्रकार किया जा सकता है :—

सर्वनाम व्युत्पन्न-प्रातिपदिक

{/ यह् /}={नि० उ०} + {–ह् }

'यह्' का एक समीपी-संघटक {य्–} है जो {/ यहाँ /} में देखा जा सकता है। यह 'निकटवर्ती अर्थद्योतक' है। दूसरा समीपी संघटक /–ह्/ आवद्ध धातु है जो निश्चयवाचक अन्य पुरुष सर्वनाम द्योतक है।

{/वह/} = {दू० उ०} + {–ह्}

पहला समीपी-संघटक {व्–} दूरवर्ती अर्थद्योतक है तथा दूसरा समीपी-संघटक /–ह्/ है जो /यह/ के दूसरे समीपी-संघट्क के समान है।

{/कौन्/} = {प्र० उ०} + {–न्}

पहला समीपी संघटक {कौ–} 'प्रश्नवाचक' अर्थद्योतक है तथा दूसरा समीपी संघटक /–न्/ है जो 'चेतन अन्यपुरुष सर्वनाम' द्योतक है।

{/क्या/} = {प्र० उ०} + {–या}

पहला समीपी संघटक {क्–} 'प्रश्नवाचक अर्थद्योतक' है तथा दूसरा समीपी संघटक 'अचेतन अन्य पुरुष सर्वनाम' द्योतक है।

{/जो/} = {सं० उ०} + {-ओ}

पहला समीपी संघटक {ज्–} 'सम्वन्ध सूचक अर्थद्योतक' है तथा दूसरा समीपी संघटक /–ओ/ 'अन्य पुरुष सर्वनाम द्योतक' है।

उपर्युक्त विवेचन के अनुसार उपसर्ग+अन्य पुरुष सर्वनाम द्योतक आवद्ध अंशों के योग से सर्वनाम व्युत्पन्न प्रातिपदिकों की रचना होती है। {अन्य पुरुष सर्वनाम द्योतक पदग्राम} के सहरूपग्राम का वितरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

{–ह्} / अ / स्वर के पश्चात्
{–न्} / औ / स्वर के पश्चात्
{–या} / क् / व्यंजन के पश्चात्
{–ओ} / ज् / व्यंजन के पश्चात्

सर्वनाम व्युत्पन्न-प्रातिपदिकों को सूत्रवत् इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

{नि० उ०} – + – {–अ० पु० स०}[1] > यह्
{दू० उ०} – + – {–अ० पु० स०} > वह्
{प्र० उ०} – + – {–अ० पु० स०} > क्या ~ कौन्
{सं० उ०} – + – {–अ० पु० स०} > जो

१. –अ० पु० स०=अन्यपुरुष सर्वनाम।

विशेषण-व्युत्पन्न-प्रातिपदिक

{/इत्ना/} = {नि० उ०} + {–त्ना}

पहला समीपी संघटक {इ–} निकटवर्ती अर्थद्योतक है तथा दूसरा समीपी संघटक /–त्ना/ 'पुल्लिग परिमाण वाचक विशेषण' द्योतक है। इसका दूसरा समीपी संघटक अन्य व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों के साथ जुड़कर अन्य 'पुल्लिग परिमाण वाचक विशेषण व्युत्पन्न-प्रातिपदिकों' की संरचना करता है। यथा :—

{दू० उ०} – + – {–त्ना} > उत्ना
{प्र० उ०} – + – {–त्ना} > कित्ना
{स० उ०} – + – {–त्ना} > जित्ना

{/ इत्नी /} = {नि० उ०} + {–त्नी}

पहला समीपी संघटक {इ–} 'निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी संघटक / –त्नी / 'स्त्रीलिंग परिमाणवाचक विशेषण' द्योतक हैं। इसका यह दूसरा समीपी संघटक अन्य व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों के साथ जुड़कर अन्य 'स्त्रीलिंग परिमाणवाचक विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिकों' की संरचना करता है। यथा :—

{दू० उ० } – + – {–त्नी} > उत्नी
{प्र० उ० } – + – {–त्नी} > कित्नी
{स० उ० } – + – {–त्नी} > जित्नी

{/ ऐसा /} = {नि० उ०} – + – {–सा}

पहला समीपी संघटक {ऐ–} निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी संघटक / –सा / 'पुल्लिग प्रणाली वाचक विशेषण' द्योतक है। इसका यह दूसरा समीपी संघटक अन्य व्युत्पादक पूर्व-प्रत्ययों के साथ जुड़कर अन्य 'पुल्लिग प्रणाली-वाचक विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिकों' की संरचना करता है। यथा :—

{दू० उ०} – + – {–सा} > वैसा
{प्र० उ०} – + – {–सा} > कैसा
{सं० उ०} – + – {–सा} > जैसा
{सह सं० उ०} – + – {–सा} > तैसा

{/ ऐसी /} = {नि० उ०} – + – {–सी}

पहला समीपी संघटक {इ–} निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी संघटक / –सी / 'स्त्रीलिंग प्रणाली वाचक विशेषण' द्योतक है। इसका यह दूसरा समीपी संघटक जब अन्य व्युत्पादक पूर्व-प्रत्ययों के साथ जुड़ता है तब

'स्त्रीलिंग प्रणाली वाचक विशेषण व्युत्पन्न प्रातिपदिकों' की संरचना होती है। यथा :—

{दू० उ०}	–	+	–	{–सी}	>	वैसी
{प्र० उ०}	–	+	–	{–सी}	>	कैसी
{सं० उ०}	–	+	–	{–सी}	>	जैसी
{सह सं० उ०}	–	+	–	{–सी}	>	तैसी

क्रिया-विशेषण व्युत्पन्न-प्रातिपदिक

{/यहाँ/} = {नि० उ०} – + – {–हाँ}

पहला समीपी-संघटक {य–} निकटवर्ती अर्थ द्योतक तथा दूसरा समीपी-संघटक /–हाँ/ 'स्थिति-स्थानवाचक क्रिया-विशेषण' द्योतक है। यह दूसरा समीपी संघटक जब अन्य व्युत्पादक पूर्व-प्रत्ययों के साथ जुड़ता है तो 'स्थिति-स्थानवाचक क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों' की संरचना होती है। यथा :—

{दू० उ०}	–	+	–	{–हाँ}	>	वहाँ
{प्र० उ०}	–	+	–	{–हाँ}	>	कहाँ
{सं० उ०}	–	+	–	{–हाँ}	>	जहाँ
{सह सं० उ०}	–	+	–	{–हाँ}	>	तहाँ

{/इधर्/} = {नि० उ०} – + – {–धर्}

पहला समीपी-संघटक {इ–} निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी संघटक /–धर्/ 'दिशावाचक क्रिया-विशेषण' द्योतक है। यह दूसरा समीपी-संघटक जब अन्य व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों के साथ जुड़ता है तो 'दिशा वाचक क्रिया–विशेषण प्रातिपदिकों' की संरचना होती है। यथा :—

{दू० उ०}	–	+	–	{–धर्}	>	उधर्
{प्र० उ०}	–	+	–	{–धर्}	>	किधर्
{सं० उ०}	–	+	–	{–धर्}	>	जिधर्

{/अब्/} = {नि० उ०} – + – {–ब्}

पहला समीपी-संघटक {–अ} निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी-संघटक /–ब्/ 'कालवाचक (समय) क्रिया-विशेषण' द्योतक है। यह दूसरा समीपी-संघटक जब अन्य व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों के साथ जुड़ता है तो 'कालवाचक (समय) क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों' की संरचना होती है। यथा :—

{प्र० उ०–}	–	+	–	{–व्}	>	कव्
{सं० उ०–}	–	+	–	{–व्}	>	जव्
{सह सं० उ०–}	–	+	–	{–व्}	>	तव्

{/यों/} = {नि० उ०} – + – {–यों}

पहला समीपी-संघटक {– ϕ } निकटवर्ती अर्थद्योतक तथा दूसरा समीपी-संघटक /–यों/ रीतिवाचक-क्रिया-विशेषण द्योतक है। यह दूसरा समीपी-संघटक जब अन्य व्युत्पादक पूर्व प्रत्ययों के साथ जुड़ता है, तब 'रीतिवाचक क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों' की संरचना होती है। यथा:—

{प्र० उ०}	–	+	–	{–यों}	>	क्यों
{सं० उ०}	–	+	–	{–यों}	>	ज्यों
{सह सं० उ०}	–	+	–	{–यों}	>	त्यों

३.१.३.१.१.२ पर-व्युत्पादक प्रत्यय वाला एक समीपी-संघटक युक्त मूल-व्युत्पादक

सर्वनाम, सार्वनामिक विशेषण एवं क्रिया-विशेषण

/यह्, वह्, कौन्, क्या, जो/ सर्वनाम प्रातिपदिकों ३.१.३.१.१.१ के प्रकरण में विवेचना करते समय उनके पूर्व समीपी-संघटक को पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय तथा पश्चात् समीपी-संघटक को मूल आवद्ध रूप के रूप में स्वीकार किया गया है। कुछ विश्लेषण कर्त्ता इन सर्वनामों को अखंड रूप में मानते हैं तथा इनका आगे रूपग्रामिक विश्लेषण नहीं करते हैं। इन सर्वनामों से, वे विशेषण एवं क्रिया-विशेषणों की व्युत्पत्ति मानते हैं। उदाहरणार्थ, उनके मतानुसार /इत्ना, उत्ना, जित्ना, कित्ना, ऐसा, वैसा, कैसा, जैसा/ आदि विशेषण सर्वनामों से व्युत्पन्न सार्वनामिक विशेषण हैं।[1] इसी प्रकार वे 'यहाँ, वहाँ, जहाँ,

---

१. सार्वनामिक विशेषण

(क) 'यह', 'वह', 'सो', 'जो' और 'कौन' के रूप 'इस', 'उस', 'तिस', 'जिस' और 'किस' के अन्त्य 'स' के स्थान में 'तना', आदेश करने से परिमाणवाचक विशेषण और 'इ' को 'ऐ' तथा 'उ' को 'वै' कर के 'सा' आदेश करने से गुणवाचक विशेषण बनते हैं। —कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ ९८।

(शेष अगले पृष्ठ पर)

कहाँ, तहाँ' स्थान-वाचक क्रिया-विशेषणों, 'इधर्, उधर्, जिधर्, किधर्' दिशा-वाचक क्रिया-विशेषणों, 'यों, ज्यों, क्यों' रीतिवाचक क्रिया-विशेषणों तथा 'अब्, जब्, कब्' कालवाचक क्रिया-विशेषणों को भी सर्वनामों से व्युत्पन्न मानते हैं।[1]

(पिछले पृष्ठ का शेष)

(ख) पं० किशोरीदास वाजपेयी 'ऐसा', वैसा' को 'यह', 'वह' सर्वनामों के साथ 'सम्' युक्त रूप के समास से व्युत्पन्न मानते हैं:—'ऐसा', 'वैसा' आदि प्रकार वाचक विशेषण भी 'यह', 'वह' आदि सर्वनामों से बने हैं। 'सम' का तद्भव रूप 'सा' हिन्दी में है ही। सर्वनामों के साथ उसका समास करके 'ऐसा', 'वैसा' आदि विशेषण। —पं० किशोरीदास वाजपेयी—हिन्दी शब्दानुशासन, पृष्ठ २३४।

(ग) डा० मुरारीलाल उप्रैतिः ने सर्वनामों में { तन। आ } व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से परिमाणवाचक विशेषण तथा {-स। आ } व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से प्रकारवाचक विशेषणों का व्युत्पन्न होना माना है।

—मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय-विचार', पृ० १६८-६९।

१. (क) "जो क्रिया-विशेषण दूसरे शब्दों में प्रत्यय या शब्द जोड़ने से बनते हैं, उन्हें यौगिक क्रिया-विशेषण कहते हैं वे नीचे लिखे शब्दभेदों से बनते हैं:—

(आ) सर्वनामों से—जैसे—यहाँ, वहाँ, अब्, जब्, जिस्से, इस्लिए, तिस् पर् इत्यादि।"

—कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ १३७।

(ख) "...'इधर-उधर' दिशावाचक अव्यय इन्हीं दोनों सर्वनामों से बने हैं—इस ओर 'इधर' और उस ओर 'उधर'। दिशार्थक 'धर्' तद्धित प्रत्यय है और 'यह', 'वह' के 'य'—'व्' को 'सम्प्रसारण'। यानी 'य' को 'इ' और 'व' को 'उ'।'... इसी तरह अधिकरण-प्रधान या स्थानवाचक अव्यय 'यहाँ'-'वहाँ' आदि बनते हैं। 'अहाँ' तद्धित प्रत्यय है। इस जगह—'यहाँ' और उस जगह 'वहाँ'। ...इसी तरह 'जहाँ' 'कहाँ' आदि। 'अहाँ' प्रत्यय आने पर प्रकृति का आद्य अंश शेष, शेष सबका लोप।"

—पं० किशोरीदास वाजपेयी—हिन्दी शब्दानुशासन, पृ० २३३-३४।

(ग) डा० मुरारीलाल उप्रैतिः ने सर्वनामों में { अहाँ } व्युत्पादक पर-प्रत्यय के योग से स्थानवाचक क्रिया-विशेषण; { -धर् } व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से दिशावाचक क्रिया-विशेषण, { -यों } व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से रीति-वाचक क्रिया-विशेषण तथा { -ब } व्युत्पादक परप्रत्यय के योग से कालवाचक क्रिया-विशेषण व्युत्पन्न होना माना है।

—मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय-विचार', पृ० २०५-२०६।

इस मान्यता के अनुसार उपर्युक्त सार्वनामिक विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों की व्युत्पत्ति / यह, वह / आदि सर्वनामों से सम्पन्न हुई है। ३.१.३.१.१.१ प्रकरण में हमने इन विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों का विवेचन करते समय इनके पूर्व समीपी संघटक को मुक्त रूप (सर्वनाम) न मानकर आवद्ध रूप (पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय) माना है। हमारी उस मान्यता का कारण यह रहा है कि इन्हें सर्वनामों से व्युत्पन्न मानने पर / तैसा / प्रकारवाचक विशेषण; / तहाँ / स्थानवाचक क्रिया-विशेषण; / त्यों / रीतिवाचक क्रिया-विशेषण एवं / तव् / कालवाचक क्रिया-विशेषण आदि रूपों को किस सर्वनाम से व्युत्पन्न मानें? पं० कामताप्रसाद गुरु ने इन्हें / सो / सर्वनाम से व्युत्पन्न माना है।[1] इस सम्बन्ध में कामताप्रसाद गुरु ने लिखा है :—" 'सो' के जो रूप यहाँ दिए गए हैं, वे यथार्थ में 'तौन' के हैं जो पुरानी भाषा में 'जौन' (जो) का नित्य सम्वन्धी है। 'तौन' अव प्रचलित नहीं है; परन्तु उसके कोई कोई रूप 'सो' के वदले और कभी कभी 'जिस' के साथ आते हैं।....'तिस पर भी', 'जिस तिसको' आदि रूपों को छोड़ 'तौन' के शेष रूपों के वदले 'वह' के रूप प्रचलित हैं।"[2]

जहाँ तक परिनिष्ठित हिन्दी का प्रश्न है, सहसम्वन्धवाचक सर्वनाम के लिए / सो / व्यवहृत नहीं होता है। परिनिष्ठित हिन्दी में / वह् / ही प्रचलित है।

इस प्रकार चूँकि / तैसा, त्यों, तव, तहाँ / आदि रूपों की व्युत्पत्ति किसी सर्वनाम में व्युत्पादक प्रत्यय के योग द्वारा ठीक नहीं वैठती, इस कारण संगति की दृष्टि से ३.१.३.१.१.१ प्रकरण में विवेचित रूपों को उपसर्ग एवं आवद्ध रूप द्वारा व्युत्पन्न माना गया है।

यदि हम इस मान्यता को स्वीकार करके चलते हैं कि 'यह्, वह्, कौन्, जो' सर्वनाम रूपग्रामिक दृष्टि से अखंडित हैं तथा सहसम्वन्ध वाचक सर्वनाम के रूप में 'सो' भी प्रयुक्त होता है और उसके आगे व्युत्पादक रूपों का योग होने पर / 'सो→त्' / में परिवर्तित हो जाता है, तो इन सर्वनाम रूपों से सार्वनामिक विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों को व्युत्पन्न माना जा सकता है। यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि सर्वनाम रूपों के आगे आवद्ध रूपों का योग होता है अथवा मुक्त रूपों का योग होता है। इस प्रश्न पर विद्वानों में मतैक्य नहीं है। उदाहरणार्थ, 'ऐसा, वैसा' आदि प्रकारवाचक विशेषणों को पं० किशोरीदास वाजपेयी

---

१. पं० कामताप्रसाद गुरु—हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ ९८।
२. वही, पृष्ठ २४३-२४४।

समास रचना द्वारा व्युत्पन्न मानते हैं,[1] किन्तु डा० मुरारीलाल उप्रैतिः इन्हें व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से निष्पन्न मानते हैं।[2] सर्वनामों से व्युत्पन्न समस्त विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों की रचना की एकरूपता की दृष्टि से सर्वनामों के आगे आबद्ध रूपों का योग मानना अधिक संगत है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सर्वनामों से व्युत्पन्न विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों के विश्लेषण का एक अन्य विकल्प भी है। वस्तुतः 'यह्, वह्, कौन्, जो, सो' सर्वनाम रूपों के आगे व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से विशेषण एवं क्रिया-विशेषणों को व्युत्पन्न मानने पर पर्याप्त ध्वन्यात्मक परिवर्तन होता है। यदि हम इस प्रकार के ध्वन्यात्मक परिवर्तन के विवेचन अथवा उद्भव प्रक्रिया के स्थान पर वस्तु व्यवस्थापन प्रक्रिया द्वारा विश्लेषण करना चाहें तो हमें सर्वनाम रूपों को विश्लेपित करना होगा। 'पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक' प्रकरण में हमने सर्वनामों को पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय तथा मूल आबद्ध रूप के योग से व्युत्पन्न माना था। हम सर्वनामों का विश्लेषण मूल-व्युत्पादक अथवा सर्वनामों के मूल रूप तथा पर व्युत्पादक प्रत्यय के रूप में भी कर सकते हैं तथा विशेषण एवं क्रिया-विशेषणों को सर्वनाम रूपों से नहीं, अपितु सर्वनामों के मूल रूपों से व्युत्पन्न मान सकते हैं। इस प्रकार के विश्लेषण से / इतना, उतना, जितना, कितना, ऐसा, वैसा, जैसा, कैसा, यहाँ, वहाँ, जहाँ, तहाँ, अब्, जब्, तब्, कब् / के दोनों समीपी संघटक आबद्ध रूप होंगे जिनमें पूर्व समीपी संघटक सर्वनाम मूलरूपग्राम तथा पश्चात् समीपी संघटक पर व्युत्पादक प्रत्यय होगा। इस दृष्टि से ये रूप पर व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक संरचना के हैं। उदाहरणार्थ:—

{नि० अन्य पु० वा० सर्व० मू० रूप०}	–	+	{–त्ना}	>	इत्ना
{नि० अन्य पु० वा० सर्व० मू० रूप०}	–	+	{–सा}	>	ऐसा
{नि० अन्य पु० वा० सर्व० मू० रूप०}	–	+	{–हाँ}	>	यहाँ
{नि० अन्य पु० वा० सर्व० मू० रूप०}	–	+	{–ब्}	>	अब्

यहाँ यह द्रष्टव्य है कि विशेषणों एवं क्रिया-विशेषणों को सर्वनामों अथवा सर्वनाम मूल रूपग्रामों से व्युत्पन्न मानने से न तो विश्लेषण में ही कोई सुविधा पड़ती है और न समस्त सर्वनामों का इस विधि से विवेचन ही युक्ति-संगत होता

---

१. पं० किशोरीदास वाजपेयी—हिन्दी शब्दानुशासन, पृष्ठ २३४।
२. मुरारीलाल उप्रैतिः—'हिन्दी में प्रत्यय-विचार', पृष्ठ १६९।

है। इस कारण सर्वनाम, विशेषण एवं क्रिया-विशेषणों का विवेचन पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक के रूप में मानना ही अधिक युक्ति-संगत है।

परसर्ग

{का}, {की}, {वाला}, {वाली}, {सा}, {सी} इत्यादि परसर्गों में पूर्व समीपी संघटक परसर्ग मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक तथा पश्चात् समीपी संघटक व्युत्पादक प्रत्यय हैं, अर्थात् ये रूप पर व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक संरचना के हैं।

{का} = {क्–} – + – {–आ}

पहला समीपी-संघटक {क्–} सम्वन्ध द्योतक मूल व्युत्पन्न तथा दूसरा समीपी संघटक {–आ} पुल्लिग द्योतक है।

{की} = {क्–} – + – {ई}

पहला समीपी संघटक {का} के पहले समीपी संघटक में देखा जा सकता है। दूसरा समीपी संघटक {–ई} स्त्रीलिंग वाचक हैं।

{क्–} सम्वन्ध द्योतक मूल व्युत्पन्न रूपग्राम के निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं:—

{र्–} /में–/ /हमा–/ /ते–/ /तुम्हा–/ के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में

{न्–} /अप्–/ के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में

{क्–} संज्ञा के विकारी रूपों तथा /इस्–, इन्–, उस्–, उन्, किन्–जिस्–, जिन्–/ के पश्चात् अल्पविवृत्ति सहित स्थिति में आता है। इस प्रकार {क्–} – + – {–आ} के योग से निम्नलिखित रूप बनते हैं:—

{र्–}	–	+	–	{–आ}	>	रा
{न–}	–	+	–	{–आ}	>	ना
{क्–}	–	+	–	{–आ}	>	का

इसी प्रकार {क्–} – + – {ई} के योग से निम्नलिखित रूप बनते हैं:—

{र्–}	–	+	–	{ई}	>	री
{न्–}	–	+	–	{ई}	>	नी
{क्–}	–	+	–	{ई}	>	की

{वाला} = {वाल्–} – + – {आ}

पहला समीपी संघटक {वाल्–} है जो {वाली} में देखा जा सकता है तथा दूसरा समीपी संघटक {आ} है जो {का} के दूसरे समीपी संघटक के रूप में देखा जा सकता है।

{वाली} = {वाल्–} – + – {ई}

पहला समीपी संघटक {वाल्–} तथा दूसरा समीपी संघटक {–ई} हैं।

{सा} = {स्–} – + – {–आ}

पहला समीपी संघटक {स्–} एवं दूसरा {–आ} है।

{सी} = {स्–} – + – {ई}

पहला समीपी संघटक {स्–} एवं दूसरा {–ई} है।

३.१.३.१.२ अक्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक :

३.१.१.२ प्रकरण के अन्तर्गत मूल प्रातिपदिकों के अन्तर्गत आन्तरिक ध्वनिपरिवर्तन की प्रक्रिया से व्युत्पन्न होने वाले प्रातिपदिकों का विवेचन मूल प्रातिपदिक के पश्चात् शून्य परप्रत्यय के योग के द्वारा किया गया है। यथा :—

चल्	–	+	–	ϕ	>	चाल्
मिल्	–	+	–	ϕ	>	मेल्
कट्	–	+	–	ϕ	>	काट्

इत्यादि।

उपर्युक्त रूपों में से किसी एक को मूल प्रातिपदिक तथा उसमें शून्य पर-प्रत्यय के कारण आन्तरिक ध्वनि-परिवर्तन होना माना गया है। इनका विवेचन मध्य प्रत्यय योजना के द्वारा भी सम्भव है। उस स्थिति में मूल रूपग्राम को अक्रमक रूपग्राम मानना पड़ेगा तथा मध्य प्रत्यय द्वारा शब्द रूपों को व्युत्पन्न मानकर उनका विवेचन किया जायेगा.। इस स्थिति में इन्हें मुक्त रूप + आवद्ध रूप की संरचना न मानकर आवद्ध रूप + आबद्ध रूप की रचना मानी जाएगी अर्थात् एक आवद्ध रूप अक्रमक मूल रूपग्राम तथा दूसरा आवद्ध रूप मध्य-व्युत्पादक प्रत्यय। अक्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादकों को कुछ उदाहरण सहित इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है:—

{च्–ल्}	–	+	{–अ–}	>	चल्
{च्–ल्}	–	+	{–आ–}	>	चाल्
{म्–ल्}	–	+	{–इ–}	>	मिल्
{म्–ल्}	–	+	{–ए–}	>	मेल्
{क्–ट्}	–	+	{–अ–}	>	कट्
{क्–ट्}	–	+	{–आ–}	>	काट्

इस प्रकार की विश्लेषण प्रक्रिया से इस धारणा का अन्त हो जाता है कि हिन्दी भाषा में मध्य प्रत्यय उपलब्ध नहीं है। वस्तुतः यह विश्लेषणकर्ता पर निर्भर करता है कि वह किसी भाषा के रूपों का विश्लेषण किस प्रकार करता है। चूंकि मध्य प्रत्यय हिन्दी में पूर्व प्रत्यय एवं परप्रत्यय की तुलना में बहुत कम उपलब्ध हैं, इस कारण सामान्यतः मध्य प्रत्यय युक्त रूपों में से एक को मूल प्रातिपदिक मानकर, उसके आगे शून्य परप्रत्यय के योग से दूसरा रूप व्युत्पन्न माना जाता है तथा शून्य प्रत्यय की यौगिक प्रक्रिया में मूल प्रातिपदिक में ध्वन्यात्मक परिवर्तन की स्थिति स्वीकार की जाती है। उपर्युक्त विवेचन यह स्पष्ट करता है कि यदि कोई विश्लेषणकर्ता चाहे तो हिन्दी के / चल चाल् / जैसे रूपों का विश्लेषण उनमें मध्य प्रत्यय की स्थिति मानकर, कर सकता है।

३.१.३.२ आबद्ध रूप समास :

इसके दोनों समीपी संघटकों में न तो कोई मुक्त रूप ही होता है और न कोई व्युत्पादक प्रत्यय ही होता है। इस प्रकार के आबद्ध रूप समासों के दोनों समीपी संघटक आबद्ध रूप होते हुए भी व्युत्पादक प्रत्यय नहीं होते हैं। अनुकरणमूलक शब्दों की ध्वन्यात्मक आवृत्ति से बने शब्दों का यदि हम विश्लेषण करें तो उनमें से अधिकांश उदाहरण आबद्ध रूप समास के उपलब्ध होते हैं। यथा—/ खट्पट्, गिट्पिट्, कट्कटा, गुद्गुदा, चिड़्चिड़ा, किर्किरा / इत्यादि उदाहरणों को देखा जा सकता है। इस प्रकार की प्रवृत्ति के निदर्शन के लिए कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं :—

(१) सर् – + – दार् > सर्दार्

/ सर्दार् / के दोनों समीपी संघटक {सर्–} एवं {–दार्} आबद्ध रूप हैं। पहले समीपी संघटक {सर्–} को / सर्पंच् / में देखा जा सकता है। दूसरे समीपी संघटक {–दार्} को / खबर्दार् / में देखा जा सकता है।

(२) तक् – + – धिन् > तक्धिन्
(३) दर् – + – गाह > दर्गाह
(४) उप् – + – चार् > उप्चार्
(५) चक् – + – अल्लस् > चक्कल्लस्
(६) फड़् – + – फड़् > फड़फड़् इत्यादि।

३.२ शब्द कोटियाँ

३.२.० भूमिका (विभक्ति विचार : वैयाकरणिक संवर्ग एवं कोटियाँ)

विभक्ति विचार के अन्तर्गत किसी भाषा के वैभक्तिक प्रत्ययों का अध्ययन किया जाता है। व्युत्पादक परप्रत्ययों अथवा सामासिक या मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना के पश्चात् जो आबद्ध रूप शेष रह जाते हैं, वे विभक्ति-प्रत्यय होते हैं।

विभक्ति विचार के अन्तर्गत भाषा की सम्पूर्ण रूपग्रामिक व्यवस्था के सन्दर्भ में, विभक्ति-प्रत्ययों का विश्लेषण किया जाता है, वितरण के आधार पर सहरूपग्रामों को रूपग्रामों में वर्गबद्ध किया जाता है, व्याकरणिक कार्य करने के आधार पर उन्हें कुछ व्याकरणिक संवर्गों में बाँटा जाता है (कुछ विभक्तियाँ एकाधिक व्याकरणिक संवर्गों की सिद्धि करती हैं)।

विभक्ति युक्त शब्द रूपों की रूपात्मक या रूपग्रामिक (विशिष्ट व्याकरणिक संवर्गों के अनुसार वैभक्तिक अथवा विशिष्ट विभक्तियों के अनुसार रूपान्तरण) एवं / अथवा वाक्यीय (वाक्य में व्यवहार एवं कार्य) आधार पर, कोटियों का निर्धारण किया जाता है।

विशुद्ध रूपग्रामिक अर्थात् रूपात्मक दृष्टि से हिन्दी में चार प्रकार की तालिकाएँ हैं :—

(१) जिनमें वचन एवं कारक व्याकरणिक संवर्गों के अनुसार विभक्तियाँ जुड़ती हैं। यथा :—
संज्ञा, रूपान्तर सहित विशेषण, रूपान्तर सहित परसर्ग

(२) जिनमें काल एवं / अथवा अर्थ, वचन, पुरुष एवं / अथवा लिंग के अनुसार विभक्तियाँ जुड़ती हैं। यथा :—
क्रिया

(३) जिनमें केवल वहुवचन रूप के लिए विभक्ति जुड़ती है। यथा :—
रूपान्तर सहित क्रिया-विशेषण

(४) जिनमें किसी व्याकरणिक संवर्ग के लिए किसी भी विभक्ति का योग नहीं होता। यथा :—

सर्वनाम, रूपान्तर रहित विशेषण, रूपान्तर रहित क्रिया-विशेषण, रूपान्तर रहित परसर्ग, समुच्चयबोधक, निपात। अकेले रूपग्रामिक दृष्टि से कोटियों का निर्धारण नहीं किया जा सकता। अतएव नीचे रूपग्रामिक एवं वाक्यीय आधारों पर हिन्दी के शब्दों की कोटियों का निर्धारण किया जा रहा है।

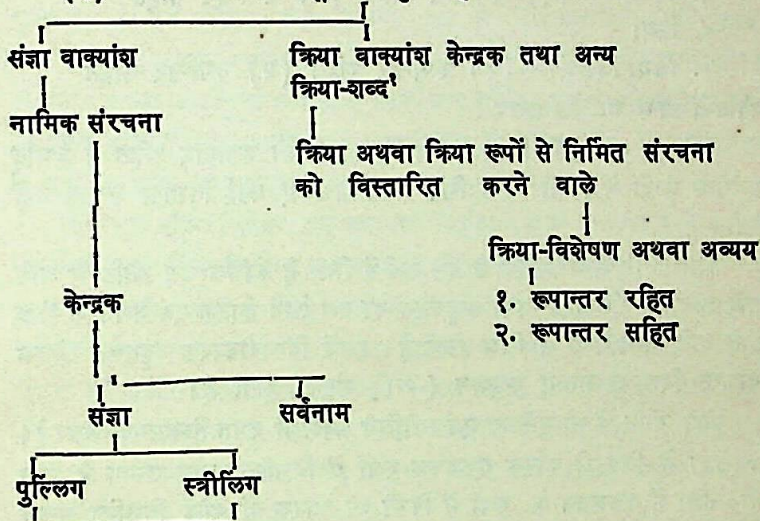
हिंदी में शब्दों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है :—

(१) वाक्य में स्वतंत्रतापूर्वक (मुक्त रूप में) प्रयुक्त होने में सक्षम—
संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया-विशेषण।

(२) वाक्य में स्वतंत्रतापूर्वक (मुक्त रूप में) प्रयुक्त होने में अक्षम—
समुच्चयवोधक, परसर्ग, निपात।

(३) वाक्य संरचना से पृथक् मानसिक भावों को व्यक्त करने वाले शब्द—
इन्हें परम्परागत व्याकरणों में विस्मयादि वोधक शब्दों के नाम से पुकारा जाता है। चूंकि इन विस्मयादि वोधक शब्दों का संरचनात्मक महत्त्व नहीं है इस कारण इन पर विचार नहीं किया जाएगा। शेष उपर्युक्त दो भागों में आने वाले शब्दों की कोटियों पर ही विचार किया जाएगा।

(१) वाक्य में स्वतंत्रतापूर्वक प्रयुक्त होने में सक्षम



संज्ञा रूपों को विस्तारित करने वाले

विशेषण[2]—(१) रूपान्तर रहित (२) रूपान्तर सहित

विशेषण रूपों को विस्तारित करने वाले

क्रिया-विशेषण—(१) रूपान्तर रहित (२) रूपान्तर सहित

यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि हिंदी में एक ही शब्द एकाधिक कोटियों में भी प्रयुक्त होता है। यथा :—/ पत्थर् / प्रयोगानुसार संज्ञा, विशेषण एवं क्रिया-विशेषण कोटि में आता है। शब्द की कोटि का निर्धारण उसके वाक्यीय व्यवहार एवं रूपान्तरण तालिका द्वारा ही होता है।

१. संज्ञा—पुंल्लिग, स्त्रीलिंग

२. सर्वनाम

---

१. वे समस्त शब्द क्रिया-कोटि के हैं, जिनमें काल एवं / अथवा अर्थ तथा वचन, पुरुष एवं / अथवा लिंग के अनुसार विभक्तियाँ लगती हैं।

२. वाक्य में विशेषानुरूप रूपान्तरित होने वाले एवं विशेषणवत् प्रयुक्त होने वाले समस्त शब्द 'विशेषण' हैं। परम्परागत व्याकरणों में इनमें से कुछ को विशेषण से भिन्न कृदन्त, सार्वनामिक विशेषण, एवं परसर्गाभास विशेषण के नाम से अभिहित किया गया है। हमारी दृष्टि में ये विशेषण कोटि के ही विशिष्ट वर्ग हैं। (दे० वाक्यांश अध्ययन)

३. विशेषण—(१) रूपान्तर रहित (२) रूपान्तर सहित
४. क्रिया
५. क्रिया-विशेषण—(१) रूपान्तर रहित (२) रूपान्तर सहित

कोटियों का रूपग्रामिक अन्तर

सर्वनाम एक ऐसी विशिष्ट रूपतालिका है जो रूपान्तर रहित है अर्थात् सर्वनाम शब्दों में किसी व्याकरणिक संवर्ग के लिए कोई विभक्ति संयुक्त नहीं होती।

संज्ञा कोटि अन्य कोटियों से इस अर्थ में भिन्न है क्योंकि इस कोटि में आने वाले शब्दों का विकारी कारक बहुवचन का रूप अन्य कारक एवं वचन के लिए आने वाले शब्द रूपों से भिन्न होता है। इसमें विकारीकारक बहुवचन द्योतक विशिष्ट विभक्ति प्रत्यय रूपग्राम {–ओँ} संयुक्त होता है।

संज्ञा कोटि में भी पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग शब्दों में रूपतालिकात्मक अंतर है। पु० संज्ञा में विकारी कारक एकवचन रूपों में विभक्ति प्रत्यय लगता है किंतु स्त्री० संज्ञा में एकवचन के रूपों में किसी भी कारक में कोई विभक्ति प्रत्यय नहीं लगता, प्रातिपदिक ही प्रयुक्त होता है।

क्रिया-कोटि अन्य कोटियों से इस दृष्टि से भिन्न है कि इस कोटि में आने वाले शब्दों में काल एवं / अथवा अर्थ तथा वचन, पुरुष एवं / अथवा लिंग के अनुसार विभक्तियाँ लगती हैं।

रूपान्तर सहित विशेषणों एवं रूपान्तर सहित क्रिया-विशेषणों में भी रूपग्रामिक अन्तर है। रूपान्तर सहित पु० विशेषणों में विकारी कारक एकवचन, अविकारी कारक बहुवचन, विकारी कारक बहुवचन एवं सम्बोधन कारक बहुवचन में प्रातिपदिकों में {–ए} लगती है जबकि रूपान्तर सहित पु० क्रिया-विशेषणों में केवल बहुवचन रूप में (विकारी कारक एकवचन में नहीं) अधिकांश स्थितियों में[1] प्रातिपदिकों में {–ए} विभक्ति संयुक्त होती है।

कोटियों का वाक्यीय अन्तर

पुल्लिग संज्ञा, स्त्रीलिंग संज्ञा एवं सर्वनाम तीनों कोटियों के शब्दों में परस्पर समानता तथा अन्य कोटियों के शब्दों से भिन्नता इस दृष्टि से है कि ये संज्ञा वाक्यांश के केन्द्रक होते हैं। पुल्लिग संज्ञा एवं स्त्रीलिंग शब्दों में परस्पर समानता तथा सर्वनाम कोटि से भिन्नता इस दृष्टि से है कि इनका पूर्व स्थिति में विशेषण द्वारा विस्तार हो सकता है। सर्वनाम अपने ही व्याकरणिक संवर्ग के संज्ञा शब्द

---

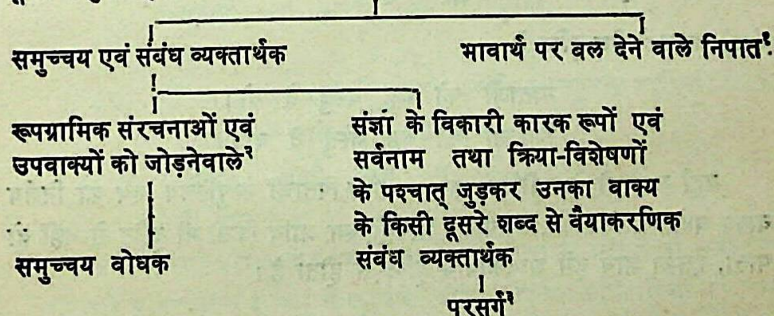
१. जब सकर्मक क्रिया में कर्म की विवक्षा नहीं होती तथा उसका प्रयोग अकर्मक क्रिया की भाँति होता है तो क्रिया-विशेषण रूपान्तरित नहीं होते हैं।

को स्थानापन्न कर सकते हैं किंतु इनका विशेषण द्वारा विस्तार नहीं होता है। पुल्लिग संज्ञा एवं स्त्रीलिंग संज्ञा में यह अन्तर है कि प्रत्येक प्रकार की वाक्य-रचना में इन्हें परस्पर स्थानापन्न नहीं किया जा सकता क्योंकि लिंग व्याकरणिक संवर्ग के अनुरूप वैभक्तिक होने वाले क्रिया रूप पुल्लिग संज्ञा एवं स्त्रीलिंग संज्ञा में भिन्न होते हैं। इस कारण /लड़का जाता है/ वाक्य में /लड़का/ को /लड़की/ द्वारा स्थानापन्न नहीं कर सकते।

रूपान्तर रहित विशेषण एवं रूपान्तर सहित विशेषण में तथा इसी प्रकार रूपान्तर रहित क्रिया-विशेषण एवं रूपान्तर सहित क्रिया-विशेषण में रूपग्रामिक दृष्टि से परस्पर अंतर है किंतु वाक्यीय दृष्टि से रूपान्तर रहित एवं रूपान्तर सहित विशेषण संज्ञा वाक्यांश अथवा नामिक संरचना में विशेष (संज्ञा) के तुरन्त पूर्व आकर उसका विस्तार करने में सक्षम होते हैं। किंतु रूपान्तर रहित एवं रूपान्तर सहित क्रिया-विशेपण क्रिया वाक्यांश में क्रिया अथवा क्रिया रूपों से निर्मित संरचना पूर्व एवं सर्वत्र विशेषण कोटि पूर्व आकर उनका विस्तार करने में सक्षम होते हैं।

क्रिया कोटि को रूपग्रामिक स्तर पर ही परिभाषित करना उपयुक्त है। इनमें लगने वाली विभक्तियाँ अन्य कोटियों के शब्दों में नहीं लगतीं। क्रिया वाक्यांश में क्रिया कोटि के शब्द विधेय केन्द्रक रूप में अथवा परस्पर मिलकर संयुक्त काल एवं संयुक्त क्रियाओं का निर्माण करते हैं।

(२) वाक्य में स्वतंत्रता पूर्वक प्रयुक्त होने में अक्षम तथा वाक्य में स्वतंत्रता-पूर्वक प्रयुक्त होने में सक्षम भाग में आने वाले शब्दों के पश्चाश्रित प्रयुक्त



---

१. देखिए ३.२.८

२. देखिए ३.२.६

३. देखिए ३.२.७

३.२.१ संज्ञा

३.२.१.० भूमिका

संज्ञा कोटि में मूल प्रातिपदिक अथवा व्युत्पन्न प्रातिपदिकों के पश्चात् वचन तथा कारक के अनुसार विभक्तियाँ जुड़ती हैं। हिन्दी में दो वचन—एकवचन एवं बहुवचन तथा तीन कारक—अविकारी कारक, अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि एकवचन में विकारी कारक एवं सम्बोधन कारक में व्यतिरेकी स्थितियाँ नहीं हैं। प्रत्येक प्रातिपदिक में सम्बोधन कारक बहुवचन के लिए {–ओं} विभक्ति संयुक्त होती है। अतएव नीचे केवल अविकारी कारक एवं विकारी कारक के एकवचन एवं बहुवचन रूपों के बारे में विचार प्रस्तुत किया जाएगा। भाषा में प्रत्येक शब्द रूपान्तरित भी नहीं होता है। कुछ शब्द ऐसे हैं जो बहुवचन में प्रयुक्त ही नहीं होते तथा इसके विपरीत कुछ शब्द एकवचन में प्रयुक्त नहीं होते हैं।

संज्ञा रूपों के 'लिंग' की दृष्टि से दो भेद हो जाते हैं:—

(१) पुल्लिग संज्ञा कोटि
(२) स्त्रीलिंग संज्ञा कोटि

(१) लिंग निर्धारण

हिन्दी में संज्ञा शब्दों के लिंग का निर्णय शब्दकोषीय अर्थ, वाक्य धरातल तथा लिंग द्योतक व्युत्पादक प्रत्ययों से होता है।

(क) शब्दकोषीय दृष्टि से

माताजी को यह वस्तु दे दो।
पिताजी को यह वस्तु दे दो।

यहाँ माताजी के स्त्रीलिंग रूप का तथा पिताजी के पुल्लिग रूप का निर्णय वाक्य धरातल, विभक्ति, व्युत्पादक प्रत्ययों, रूप आदि किसी भी दृष्टि से नहीं हो पाता, इसका ज्ञान हमें शब्दकोषीय दृष्टि से होता है।

(ख) वाक्य धरातल पर

(१) विशेषण द्वारा—
यह अच्छा नाला है।
यह अच्छी माला है।

यहाँ नाला एवं माला के लिंग का आधार /अच्छा/ एवं /अच्छी/ विशेषण रूप हैं।

(२) क्रिया रूपों के द्वारा—

साधू आ रहा है।

वधू आ रही है।

यहाँ /साधू/ एवं /वधू/ के लिंग का निर्णय क्रिया रूप के लिंग द्वारा द्योतित हो रहा है।

(ग) लिंग व्युत्पादक परप्रत्ययों द्वारा

यथा—

हाथ् – + – औड़ा (पु० व्युत्पादक प्रत्यय) > हथौड़ा

हथौड़ा – + – ई (स्त्री० व्युत्पादक प्रत्यय) > हथौड़ी

डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' ने अपने एक लेख[1] में स्त्रीलिंग एवं पुल्लिग व्युत्पादक परप्रत्ययों का विवेचन इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

(अ) मूल प्रातिपदिकों में जुड़कर स्त्रीलिंग शब्दों को व्युत्पन्न करने वाले व्युत्पादक प्रत्यय—

/–अक्, –अत्, –अन्, –अन्त, –आई,
–आन्, –आवट्, –आस्, –ई, –गत्,
–ता, –ती–, हट्/

(आ) पुल्लिग संज्ञा शब्दों को व्युत्पन्न करने वाले व्युत्पादक परप्रत्यय—

/–अइया, –आ, –आप्, –आपा, –आन्,
–त्व्/

(इ) पुल्लिग प्रातिपदिकों में जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न प्रातिपदिकों का निर्माण करने वाले व्युत्पादक परप्रत्यय—

/–आइन्, –आती, –इन्, –न्, –नी,
–ई/ इत्यादि।

प्रायः समस्त परम्परागत व्याकरणों में उन व्युत्पादक प्रत्ययों की सूची प्रस्तुत की गयी है जो पुल्लिग रूपों में जुड़कर स्त्रीलिंग व्युत्पन्न प्रातिपदिकों का निर्माण करते हैं।

---

१. डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन'—'हिन्दी भाषा में लिंग विधान,' गवेषणा, पृष्ठ ८७-९०, जनवरी १९६३, केन्द्रीय हिन्दी शिक्षण मंडल, आगरा।

शब्द के अर्थ के आधार पर अथवा शब्द के रूप के आधार पर हिन्दी में लिंग-निर्णय के सुनिश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते। शब्द स्तर पर लिंग निर्णय का एक आधार प्रकृतितः लिंग अर्थात् अर्थपरक होता है। वस्तुओं या वाचकों के प्रकृतितः लिंग के अनुसार शब्दों का लिंग भारतीय भाषाओं में 'लाई' में है[1]; किन्तु हिन्दी में सभी पुल्लिंग वस्तुओं का लिंग पुल्लिंग एवं सभी स्त्रीलिंग वस्तुओं का लिंग स्त्रीलिंग नहीं है। हिन्दी में लिंग पूर्णरूपेण वैयाकरणिक भी नहीं है क्योंकि "अन्तिम ध्वनि की दृष्टि से पुल्लिंग संज्ञाएँ भी दस प्रकार की होती हैं एवं स्त्रीलिंग भी।"[2] रूप की दृष्टि से / राजा / एवं / माता / दोनों आकारान्त हैं, किन्तु एक पुल्लिंग है, दूसरा स्त्रीलिंग। विभक्ति प्रत्यय भी लिंग निर्धारण नहीं करते, क्योंकि /राजाओं/ एवं /माताओं/ दोनों में 'विकारी कारक बहुवचन द्योतक विभक्ति' { –ओँ } संयुक्त है; किन्तु लिंग की दृष्टि से दोनों भिन्न हैं।

प्रश्न यह है कि शब्द स्तर पर हिन्दी के समस्त संज्ञा शब्दों के लिंग का निर्णय क्या किसी विधि से भी सम्भव नहीं है?

यह सत्य है कि शब्द रूप अथवा विभक्ति प्रत्ययों से समस्त संज्ञा शब्दों के लिंग का निर्णय नहीं हो पाता, किन्तु पुल्लिंग शब्दान्त रूपों एवं स्त्रीलिंग शब्दान्त रूपों की कारक एवं वचनानुसार वैभक्तिक तालिका समान नहीं होती है तथा यही वह विधि है जिसके आधार पर हम समस्त रूपान्तर होने वाले संज्ञा शब्दों के लिंग का निर्णय कर सकते हैं, अर्थात् समस्त संज्ञा शब्दों के केवल अविकारी कारक एकवचन रूप (जिसको विभक्ति रहित रूप में स्वीकार किया गया है) के आधार पर लिंग का निर्णय नहीं किया जा सकता, किन्तु किसी संज्ञा शब्द के अविकारी कारक एकवचन, अविकारी कारक बहुवचन, विकारी कारक एकवचन, विकारी कारक बहुवचन आदि रूपों को देखकर यह ज्ञात किया जा सकता है कि अमुक शब्द पुल्लिंग है या स्त्रीलिंग। इस दृष्टि से निम्नलिखित तथ्य द्रष्टव्य हैं:—

(१) व्यंजनान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त, औकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक यदि पुल्लिंग होते हैं तो उनमें द्विमुखी अन्तर होता है किन्तु यदि स्त्रीलिंग होते हैं तो उनमें त्रिमुखी अन्तर होता है, अर्थात् पुल्लिंग रूप केवल विकारी

---

१. Dr. Siddheswar Varma—"Gender in Languages of India," "Indian Linguistics". Turner Jubilee Volume Part I, p. 88 (1958).

२. रमेशचन्द्र मेहरोत्रा—हिन्दी संज्ञा के दस (या ग्यारह?) रूप—'भाषा' पृष्ठ ६७, जून १९६२, वर्ष एक, अंक चार, दिल्ली।

कारक बहुवचन के लिए रूपान्तरित होते हैं, अन्यथा अपरिवर्तित रहते हैं तथा स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में अविकारी कारक बहुवचन तथा विकारी कारक बहुवचन के लिए विभक्तियाँ जुड़ती हैं।

(२) आकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक यदि पुल्लिग होते हैं तो उनमें या तो द्विमुखी अन्तर होता हैं या चतुर्मुखी किन्तु यदि स्त्रीलिंग होते हैं तो उनमें त्रिमुखी अन्तर होता है, अर्थात् पुल्लिग रूपों में या तो केवल विकारी कारक बहुवचन के लिए विभक्ति लगती हैं या फिर अविकारी कारक बहुवचन, विकारी कारक एकवचन, तथा विकारी कारक बहुवचन—तीनों रूपों के लिए विभक्तियाँ लगती हैं तथा अविकारी कारक एकवचन एवं विकारी कारक एकवचन के रूपों में अन्तर होता है तथा स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में अविकारी कारक बहुवचन तथा विकारी कारक बहुवचन के लिए विभक्तियाँ जुड़ती हैं; इनमें एकवचन के रूपों में कारकानुसार अंतर नहीं होता है।

(३) एकारान्त, ऐकारान्त एवं ओकारान्त संज्ञा शब्दों के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं :—

(क) पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग एकारान्त एवं ओकारान्त प्रातिपदिकों में विकारी कारक बहुवचन विभक्ति {–ओँ} जुड़ती है। पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों का अन्तर प्रातिपदिकों एवं विभक्ति की यौगिक प्रक्रिया में निहित है। विभक्ति {–ओँ} के जुड़ने पर पुल्लिग संज्ञा प्रातिपदिकों के अंत्य स्वर /ए/ एवं /ओ/ का लोप हो जाता है, स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में एकारान्त में कोई परिवर्तन नहीं होता; ओकारान्त में अन्त्य ओ > उ में परिणत हो जाता है। ओँकारान्त शब्द स्त्रीलिंग में ही प्राप्त हैं; पुल्लिग में नहीं।

(ख) ऐकारान्त संज्ञा प्रातिपदिक अपवाद स्वरूप ही प्रयुक्त होते हैं। ऐकारान्त पुल्लिग प्रातिपदिक केवल विकारी कारक बहुवचन में रूपान्तरित होते हैं, ऐकारान्त स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में कोई रूपान्तर नहीं होता है।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि जिन संज्ञा प्रातिपदिकों में कोई रूपान्तर नहीं होता है, अर्थात् जिनमें किसी कारक या वचन के लिए किसी भी विभक्ति का योग नहीं होता है, विभक्ति रहित रूप ही सर्वथा प्रयुक्त होता है, उनके लिंग का निर्धारण इस विधि से सम्भव नहीं है।

३.२.१.१ संज्ञा विभक्ति

संज्ञा शब्दों को पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग उपकोटियों में बाँटकर उनमें प्रयुक्त विभक्तियों को इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है :—

३.२.१.१.१ पुंल्लिग संज्ञा कोटि

पुंल्लिग वर्ग १.

अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक एकवचन	विकारी कारक एकवचन	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	– ϕ	– ϕ	–ओं	–ओ

पुंल्लिग वर्ग १ में / लड़का, घोड़ा / इत्यादि आकारान्त प्रातिपदिकों को छोड़कर शेष सभी पुंल्लिग प्रातिपदिक इसी कोटि में आते हैं। इन्हें इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है:—

पुंल्लिग प्रातिपदिक	विकारी कारक एकवचन	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
बालक्	बालक्	बालक्	बालकों	बालको
बैल्	बैल्	बैल्	बैलों	
राजा	राजा	राजा	राजाओं	राजाओ
दादा	दादा	दादा	दादाओं	दादाओ
चाचा	चाचा	चाचा	चाचाओं	चाचाओ
कवि	कवि	कवि	कवियों	कवियो
धोबी	धोबी	धोबी	धोबियों	धोबियो
शिशु	शिशु	शिशु	शिशुओं	शिशुओ
डाकू	डाकू	डाकू	डाकुओं	डाकुओ
चौबे	चौबे	चौबे	चौबेओं ~ चौबों	चौबेओ ~ चौबो
छै	छै	छै	छैओं	
रेडियो	रेडियो	रेडियो	रेडियों	
नौ	नौ	नौ	नौओं	

संधि-विचार

(१) इकारान्त तथा ईकारान्त प्रातिपदिकों में जब {–ओ} एवं {–ओं} विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक एवं विभक्ति के मध्य 'य्' श्रुति का आगम हो जाता है।

(२) ईकारान्त तथा ऊकारान्त प्रातिपदिकों में जब {–ओँ} एवं {–ओ} विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिकों के अन्त्य दीर्घ स्वर /ई/ एवं /ऊ/ क्रमशः ह्रस्व स्वर /इ/ एवं /उ/ हो जाते हैं।

(३) एकारान्त प्रातिपदिकों के बाद {–ओँ} एवं {–ओ} विभक्तियों के जुड़ने पर प्रातिपदिक मुक्त-परिवर्तन रूप में अपने लघु रूप में आते हैं। यथा :–

/चौवेओँ ~ चौवोँ/
/चौवेओ ~ चौवो/

(४) ओकारान्त प्रातिपदिकों के बाद जब {–ओँ} एवं {–ओ} विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो प्रातिपदिक अपने लघु रूप में आता है अर्थात् प्रातिपदिक की अन्तिम स्वर ध्वनि का लोप हो जाता है।

इनका विश्लेषण इस प्रकार से भी सम्भव है कि ओकारान्त प्रातिपदिकों में विकारी कारक वहुवचन में /ँ/ एवं सम्वोधन कारक वहुवचन में /ϕ/ विभक्ति लगती है। सामान्य गठन के निर्वाह हेतु {–ओँ} एवं {–ओ} विभक्तियाँ स्वीकार की गयी हैं।

पुल्लिग वर्ग २.

अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक एकवचन	विकारी कारक एकवचन	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्वोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	– ए	– ए	– ओँ	– ओ

पुल्लिग वर्ग २ में पुल्लिग वर्ग १ में व्यवहृत होने वाले /राजा, दादा, चाचा, मामा, काका, देव्ता, खुदा, विधाता, भोक्ता, मुखिया, सोडा/ जैसे रूपों को छोड़कर अन्य आकारान्त प्रातिपदिक आते हैं। यथा :—

/लड़का, घोड़ा, टुक्ड़ा, भतीजा, रुप्या/

इन्हें इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है :—

लड़्का	लड़्के	लड़्के	लड़्कोँ	लड़्को
घोड़ा	घोड़े	घोड़े	घोड़ोँ	
टुक्ड़ा	टुक्ड़े	टुक्ड़े	टुक्ड़ोँ	
भतीजा	भतीजे	भतीजे	भतीजोँ	भतीजो
रुप्या	रुपृये	रुपृये	रुपयोँ	

संधि-विचार

(१) पुल्लिग वर्ग २ के समस्त प्रातिपदिकों में जब किसी भी विभक्ति का योग होता है तो यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक अपने लघु रूप में आता है अर्थात् प्रातिपदिक के अन्तिम स्वर ध्वनिग्राम /आ/ का लोप हो जाता है।

३.२.१.१.२ स्त्रीलिंग संज्ञा कोटि

स्त्रीलिंग संज्ञा शब्द विकारी कारक एकवचन में भी रूपान्तरित नहीं होते, अर्थात् स्त्रीलिंग प्रातिपदिकों में एकवचन के धरातल पर किसी भी कारक में कोई रूपान्तर नहीं होता है। प्रातिपदिक ही अविकारी कारक एकवचन, विकारी कारक एकवचन एवं सम्बोधन कारक एकवचन में प्रयुक्त होता है।

स्त्रीलिंग वर्ग १ : इसके भी तीन उपवर्ग हैं:—

स्त्रीलिंग वर्ग १.१

एकवचन (अवि०, वि० एवं सम्बोधन कारक)	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	– एँ	– ओं	– ओ

स्त्रीलिंग वर्ग १.१ में समस्त व्यंजनान्त, 'इयाकारान्त' शब्दों को छोड़कर शेष समस्त आकारान्त शब्द, उकारान्त, ऊकारान्त एवं औकारान्त स्त्रीलिंग प्रातिपदिक आते हैं। इन्हें इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है:—

रात्	रातें	रातों	
किताब्	किताबें	किताबों	
बहिन्	बहिनें	बहिनों	बहिनो
माता	माताएँ	माताओं	माताओ
घट्ना	घट्नाएँ	घट्नाओं	
रच्ना	रच्नाएँ	रच्नाओं	
वस्तु	वस्तूएँ	वस्तुओं	
बहू	बहुएँ	बहुओं	बहुओ
झाड़ू	झाड़ुएँ	झाड़ओं	
लौ	लौएँ	लौओं	

संधि-विचार

(१) ऊकारान्त प्रातिपदिकों को छोड़कर अन्य व्यंजन एवं स्वर अन्त्य प्रातिपदिकों में विभक्ति जुड़ने की प्रक्रिया में कोई ध्वन्यात्मक विकार नहीं आता है, ऊकारान्त प्रातिपदिकों में {–एँ}, {–ओँ} एवं {–ओ} विभक्तियों की यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिक का अन्त्य /ऊ/→/उ/ में बदल जाता है।

स्त्रीलिंग वर्ग १ : २

एकवचन (अवि०, वि० एवं सम्बो० कारक)	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	–आँ	–ओँ	–ओ

इस वर्ग में समस्त इकारान्त एवं ईकारान्त स्त्रीलिंग प्रातिपदिक आते हैं। इन्हें इस प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है:—

जाति	जातियाँ	जातियोँ	
शक्ति	शक्तियाँ	शक्तियोँ	
तिथि	तिथियाँ	तिथियोँ	
लड़्की	लड़्कियाँ	लड़्कियोँ	लड़्कियो
मछ्ली	मछ्लियाँ	मछ्लियोँ	
गर्मी	गर्मियाँ	गर्मियोँ	

संधि-विचार

(१) उपर्युक्त तालिका के समस्त उदाहरणों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि इकारान्त एवं ईकारान्त प्रातिपदिकों में जब {–आँ}, {–ओँ} एवं {ओ} विभक्तियों का योग होता है तो यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिकों एवं विभक्तियों के मध्य 'य्' श्रुति का आगम हो जाता है तथा ईकारान्त प्रातिपदिकों का दीर्घ स्वर /ई/ ह्रस्व स्वर /इ/ में बदल जाता है।

इस वर्ग का विश्लेषण इस प्रकार भी सम्भव है कि अविकारी कारक बहुवचन विभक्ति {योँ}, विकारी कारक बहुवचन विभक्ति {योँ} एवं सम्बोधन कारक बहुवचन विभक्ति {यो} है। पुल्लिग वर्ग १ की ही भाँति यहाँ भी 'य्' को श्रुति के रूप में स्वीकार किया गया है। इससे रचना सम्बन्धी इस संगति का निर्देश किया जा सकता है कि इकारान्त एवं ईकारान्त संज्ञा प्रातिपदिकों में—

चाहे वे पुंल्लिग हों या स्त्रीलिंग—जब विभक्तियों का योग होता है, तो यौगिक प्रक्रिया में 'य्' श्रुति का आगम हो जाता है।

स्त्रीलिंग वर्ग १ : ३

एकवचन (अवि०, वि० एवं सम्बो० कारक)	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	—आँ ~—एँ	—ओं	ओ

इस वर्ग में /इयाकारान्त/ प्रातिपदिक आते हैं:—

चिड़िया	चिड़ियाँ ~चिड़ियाएँ	चिड़ियों	
बुढ़िया	बुढ़ियाँ ~बुढ़ियाएँ	बुढ़ियों	बुढ़ियो ;
लठिया	लठियाँ ~लठियाएँ	लठियों	

संधि-विचार

(१) प्रातिपदिकों में जब अविकारी कारक बहुवचन विभक्ति का सहरूप-ग्राम {—आँ}, विकारी कारक बहुवचन द्योतक {—ओं} एवं सम्वोधन कारक बहुवचन द्योतक {—ओ} का योग होता है तो यौगिक प्रक्रिया में प्रातिपदिकों के अन्त्य स्वर /आ/ का लोप हो जाता है।

स्त्रीलिंग वर्ग २. इस वर्ग में /सरसों/ फोटो/ एवं /ट्रे/ जैसे शब्द आते हैं।

एकवचन (अवि०, वि० एवं सम्बोधन कारक)	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	—	—ओं	—ओ

संधि-विचार

{—ओं} एवं {—ओ} विभक्तियों की संहिति में ओकारान्त प्रातिपदिक का /ओ/>/उ/ में परिणत हो जाता है तथा ओंकारान्त प्रातिपदिक अपने लघु रूप में आता है अर्थात् अन्त्य /ओं—/ का लोप हो जाता है।

यथा :—

फोटो	—	+	—	ओं	>	फोटुओं
सरसों	—	+	—	ओं	>	सरसों

३.२.१.२ विभक्ति धरातल पर कारक : पुनर्विचार

उपर्युक्त विवेचन में कारक एवं वचन के अनुसार संज्ञा विभक्तियों का वर्णन किया गया है। यदि अविकारी कारक एवं विकारी कारक के संज्ञा रूपों तक हम अपनी दृष्टि केन्द्रित करके अध्ययन करें, तो अविकारी एवं विकारी कारक रूप परिपूरक वितरण की स्थिति में हैं। इसका कारण यह है कि अविकारी रूप परसर्गों के विना प्रयुक्त होते हैं किन्तु विकारी रूपों के साथ परसर्गों का प्रयोग होता है। इस प्रकार अविकारी एवं विकारी रूपों के प्रयोग की स्थितियाँ परिपूरक वितरण की स्थिति में हैं।

इस प्रकार के विश्लेषण एवं वर्गबंधन को अपनाने पर एकवचन के रूपों में कोई विभक्ति नहीं लगती है। ऐसी स्थिति में / लड़के को यह् वस्तु दे दो / में प्रयुक्त एकवचन रूप / लड़के / में { –ए } विभक्ति नहीं है, अपितु / लड़का ∞ लड़के / की स्थिति है, अर्थात् / लड़के / / लड़का / का संपरिवर्तक है जो परसर्गों के साथ प्रयुक्त होता है। इस प्रकार के विकल्प को ग्रहण करने पर संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण कोटियाँ केवल वचन वैयाकरणिक वर्ग के लिए रूपान्तरित होती हैं। ऐसी स्थिति में उनकी सामान्य गठनतालिका इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं :—

एकवचन	बहुवचन
प्रातिपदिक	–विभक्ति प्रत्यय

संज्ञा कोटि में प्रयुक्त विभक्तियों को इस प्रकार वर्णित किया जा सकता है :—

पुंल्लिग

{ पुंल्लिग बहुवचन विभक्ति रूपग्राम } के सहरूपग्रामों का विवरण इस प्रकार है :—

{ –ओं } –जब पुंल्लिग संज्ञा रूप परसर्गों के साथ प्रयुक्त होता है तो { –ओं } विभक्ति आती है।

{ ¹–ϕ } –जब पुंल्लिग वर्ग १ के संज्ञा प्रातिपदिक बहुवचन में बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

{ ¹–ए } –जब पुंल्लिग वर्ग २ के संज्ञा प्रातिपदिक बहुवचन में बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

इन विभक्तियों की यौगिक प्रक्रिया में संज्ञा प्रातिपदिकों में ध्वन्यात्मक परिवर्तन पुल्लिग वर्ग १ विकारी कारक बहुवचन एवं पुल्लिग वर्ग २ में अविकारी कारक बहुवचन एवं विकारी कारक बहुवचन द्योतक विभक्तियों की संहिति में हुए ध्वन्यात्मक परिवर्तनों के अनुरूप ही होते हैं।

स्त्रीलिंग

{स्त्रीलिंग बहुवचन विभक्ति रूपग्राम} के सहरूपग्रामों का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:—

{–ओं} —जब स्त्रीलिंग संज्ञा रूप परसर्गों के साथ प्रयुक्त होता है।

{–एँ} —जब स्त्रीलिंग वर्ग १.१ के संज्ञा प्रातिपदिक बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

{–आँ} —जब स्त्रीलिंग वर्ग १.२ के संज्ञा प्रातिपदिक बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

{–आँ ~–एँ} —जब स्त्रीलिंग वर्ग १.३ के संज्ञा प्रातिपदिक बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

{–ϕ} —जब स्त्रीलिंग वर्ग २ के संज्ञा प्रातिपदिक बिना परसर्गों के प्रयुक्त होते हैं।

इन विभक्तियों की यौगिक प्रक्रिया में संज्ञा प्रातिपदिकों में ध्वन्यात्मक परिवर्तन स्त्रीलिंग वर्ग १.१, स्त्रीलिंग वर्ग १.२, स्त्रीलिंग वर्ग १.३ में अविकारी कारक बहुवचन एवं विकारी कारक बहुवचन द्योतक विभक्तियों की संहिति में हुए ध्वन्यात्मक परिवर्तनों के अनुरूप ही होते हैं।

संज्ञा में विभक्ति के धरातल पर केवल वचनानुसार भेद मानने का यह विकल्प इस कारण संगत नहीं है क्योंकि सम्बोधन कारक बहुवचन विभक्ति प्रत्येक प्रकार के अन्त्य शब्द में प्रयुक्त होती है एवं उसके आगे परसर्गों का प्रयोग भी नहीं होता। इस कारण 'कारक' के आधार पर भेद माना गया है।

३.२.२ सर्वनाम

सर्वनामों का लिंग निर्णय वाक्य धरातल पर तथा कभी कभी केवल सन्दर्भ मात्र से होता है।

सर्वनामों का विवेचन उन्हें रूपतालिका में प्रस्तुत करने के पश्चात् कर सकते हैं:—

३.२.२.१ सर्वनाम-रूपतालिका

अर्थ एवं कार्य के आधार पर सर्वनाम रूपतालिका के वर्ग एवं उपवर्ग	एकवचन		बहुवचन	
	अविकारी	विकारी	अविकारी	विकारी
उत्तम पुरुष वाचक सर्वनाम	मैं	मैं– मुझ्–, मे–	हम्	हम्– हमा–
मध्यम पुरुष वाचक सर्वनाम	तू	तू– तुझ्–,ते–	तुम्	तुम् तुम्हा–
अन्य पुरुष वाचक निकटवर्ती द्योतक	यह्	इस्–	ये	इन्– इन्हों–
दूरवर्ती द्योतक	वह्	उस्–	वे	उन्– उन्हों–
प्रश्न वाचक सर्वनाम	कौन्	किस्–	कौन्	किन्– किन्हों–
अनिश्चय वाचक प्राणी द्योतक	कोई	किसी–	कोई	किन्हीं–
परिमाण द्योतक	कुछ् सब्	कुछ्– सब्–	कुछ् सब्	कुछ्– सब्–
सम्बन्ध एवं सहसम्बन्ध सम्बन्ध वाचक	जो	जिस्–	जो	जिन्– जिन्हों–
सहसम्बन्ध वाचक	वह्	उस्–	वे	उन्– उन्हों–
निजवाचक	आप्	आप्– अपने– अप्–	आप्	आप्– अपने– अप्–

३.२.२.२ विवेचन

उपर्युक्त तालिका के सर्वनाम रूपों का रूपग्रामिक विश्लेषण करते समय कई प्रश्न उपस्थित होते हैं—

(१) सर्वनामों के इन रूपों में कोई मूलरूपग्राम हैं या नहीं ?
(२) सर्वनाम के अविकारी कारक एकवचन के रूपों में विभक्ति प्रत्ययों को अलग किया जा सकता है अथवा नहीं ?
(३) सर्वनामों के अन्य रूप किन वैयाकरणिक संवर्गों के अनुरूप रूपान्तरित होते हैं ?
(४) यदि कारक के अनुसार सर्वनामों को रूपान्तरित न माना जाए तो क्या वचन के अनुसार उनमें विभक्ति जुड़ती है, अथवा वे रूपान्तर रहित होते हैं ?

सर्वप्रथम, उपर्युक्त प्रश्नों पर विचार किया जाएगा।

(१) सर्वनाम के इन रूपों में कोई मूलरूपग्राम है या नहीं :

सर्वनाम की उपर्युक्त तालिका के कुछ रूपों में मूलरूपग्राम को स्वीकार किया जा सकता है। यथा—मध्यम पुरुष वाचक सर्वनाम के रूपों में {त्–} को मध्यम पुरुष वाचक सर्वनाम मूलरूपग्राम माना जा सकता है :—

मध्यम पुरुष वाचक सर्वनाम

मूलपदग्राम	एकवचन		बहुवचन	
	अविकारी	विकारी	अविकारी	विकारी
त्–	–ऊ	–ऊ –उझ् –ए	–उम्	–उम् –उम्ह –उम्हा

किन्तु कुछ अन्य रूपों में मूलरूपग्राम को छाँटना इतना आसान नहीं है। यथा—उत्तम पुरुष वाचक सर्वनामों में एकवचन के रूपों—'मैं, मैं–, मुझ्–, आदि–'में मूलरूपग्राम {म्–'} को स्वीकार किया जा सकता है किन्तु बहुवचन /हम्/ रूप, विश्लेषण एवं विवेचन में समस्या उत्पन्न कर देता है। यदि हम उत्तम पुरुषवाचक सर्वनामों में मूलरूपग्राम {म्–} को स्वीकार करते हैं तो इसके अर्थ यह हैं कि /हम्–/ में /–म्/ अंश मूलरूपग्राम है। ऐसी स्थिति में प्रश्न यह है कि क्या शेष अंश /ह–/ को विभक्ति के रूप में स्वीकार किया जा सकता है? /ह्–/ अंश /–म्/ के पूर्व रूप में प्रयुक्त है। मूलरूप के पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय आते हैं, विभक्ति

प्रत्यय नहीं। एतदर्थं /ह्–/ को विभक्ति नहीं माना जा सकता। यद्यपि ३.१.३ प्रकरण में 'पर-व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल-व्युत्पादक विचार' के अन्तर्गत 'यह्, वह्, कौन्, क्या, जो' इत्यादि सर्वनामों के मूल रूपों को विश्लेषित किया गया है, तथापि अन्ततोगत्वा यही निष्कर्ष निकला है कि उनका इस रूप में विश्लेषण करना संगत नहीं है। उपयुक्त सर्वनाम रूपों को हमने 'पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक' प्रकरण में पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय तथा मूल आवद्ध रूप के योग से व्युत्पन्न माना है। इस प्रकार अन्य पुरुष, प्रश्नवाचक आदि सर्वनामों में भी कोई मूलरूपग्राम नहीं है। उनके अविकारी कारक एकवचन रूप 'आवद्ध रूप+आवद्ध रूप' पद्धति से व्युत्पन्न हैं।

इस प्रकार, सर्वनामों की सम्पूर्ण तालिका के आधार पर यह कह सकते हैं कि इन सर्वनाम रूपों में कोई मूलरूपग्राम नहीं है।

(२) सर्वनाम के अविकारी कारक एकवचन के रूपों को विभक्ति रहित मानें या विभक्ति सहित :

'मैं, तू, यह्, वह्, कौन्, कोई' इत्यादि सर्वनाम रूप विभक्ति रहित ही हैं। इसके निम्नलिखित कारण हैं :—

(क) इनमें कोई मूलरूपग्राम नहीं है तथा विभक्ति प्रत्यय किसी मूलरूपग्राम अथवा व्युत्पन्न रूपग्राम में ही संयुक्त होता है।

(ख) 'यह्, वह्, कौन्' के दो समीपी संघटक अवश्य हैं किन्तु परवर्ती समीपी संघटक व्युत्पादक आवद्ध रूप हैं, विभक्ति प्रत्यय नहीं।

(३) सर्वनाम 'कारक' वैयाकरणिक-संवर्ग के लिए रूपान्तरित होते हैं अथवा नहीं :

संज्ञा ३.२.१ प्रकरण में संज्ञा रूपों को कारक के अनुसार रूपान्तरित मानने का कारण यह है कि सम्वोधन वहुवचन विभक्ति प्रत्येक प्रकार के अन्त्य शब्दों में प्रयुक्त होती है एवं उसके आगे परसर्गों का प्रयोग भी नहीं होता, इस कारण अविकारी एवं विकारी रूप परिपूरक वितरण में वितरित नहीं हैं। सर्वनामों के सन्दर्भ में ऐसी कोई कठिनाई नहीं है। यहाँ अविकारी एवं विकारी रूपों के प्रयोग की स्थितियाँ परिपूरक वितरण की हैं। इस कारण सर्वनामों के कारकीय रूप परस्पर रूपग्रामिक संपरिवर्तक हैं। उदाहरणार्थ, उत्तम पुरुष वाचक एकवचन सर्वनाम /मैं/ है। {मैं} के {–मैं ∞मुझ् ∞मैं} इत्यादि संपरिवर्तक हैं।

(४) क्या सर्वनामों में बहुवचन द्योतक विभक्तियाँ संयुक्त होती हैं:

एकवचन सर्वनाम के रूपों में सर्वत्र बहुवचन विभक्तियों के संयोग से बहुवचन द्योतक सर्वनाम रूप निष्पन्न नहीं होते हैं।

/तू/ एवं /तुम्/ रूपों में बहुवचन द्योतक विभक्ति {—म्} मानी जा सकती है; किन्तु /मैं/ एवं /हम्/ जैसे रूपों में बहुवचन द्योतक विभक्ति का विश्लेषण नहीं किया जा सकता।

इस प्रकार, सर्वनाम रूपान्तर रहित होते हैं, उनमें किसी वैयाकरणिक संवर्ग के लिए कोई विभक्ति संयुक्त नहीं होती।

(५) एकवचन एवं बहुवचन रूपों का अन्तर किस धरातल पर है:

व्यवहारिक उपयोगिता, विश्लेषण एवं वर्णन की सुविधा की दृष्टि से इनका अन्तर शब्द स्तर पर मानना अधिक संगत है।

प्रश्न यह है कि अव्यय भी रूपान्तर रहित होते हैं। ऐसी स्थिति में सर्वनामों एवं अव्यय क्या एक ही कोटि का निर्माण करते हैं। वस्तुतः रूपग्रामिक दृष्टि से यद्यपि सर्वनाम एवं अव्यय दोनों रूपान्तर रहित हैं, किन्तु कार्यकारिता अथवा वाक्यीय दृष्टि से सर्वनाम की अव्ययों से भिन्न कोटि है। इनकी परिभाषा इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है कि सर्वनाम संज्ञा अथवा संज्ञा वाक्यांश को स्थानापन्न करते हैं।

३.२.२.३ सर्वनामों के सहरूपग्राम

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् सर्वनाम रूपग्रामों के सहरूपग्रामों को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

{उत्तम पुरुष एकवचन वाचक सर्वनाम}

{मैं}—परसर्ग रहित स्थिति में एवं /ने/ परसर्ग के साथ।

{मे—}—सम्बन्ध द्योतक {के} के {रे} एवं {का} के {रा∞रे} एवं {की} के {री} के साथ।

{मुझ्}—अन्य परसर्गों के साथ।

{उत्तम पुरुष बहुवचन वाचक सर्वनाम}

{हम्}—परसर्ग रहित स्थिति में एवं {के} {का} {की} के अतिरिक्त अन्य परसर्गों के साथ।

{हमा}—सम्बन्ध द्योतक {के} के {रे}, {का} के {रा∞रे} एवं {की} के {री} के साथ।

{ मध्यम पुरुष एकवचन वाचक सर्वनाम }

{तू} – परसर्ग रहित स्थिति में एवं / ने / परसर्ग के साथ।

{ते } – सम्बन्ध द्योतक {के} के { रे }, {का} के {रा∞रे} एवं {की} के { री } के साथ।

{तुझ् } – अन्य परसर्गों के साथ।

{ मध्यम पुरुष बहुवचन वाचक सर्वनाम }

{तुम् }—परसर्ग रहित स्थिति में एवं { के } { का } { की } के अतिरिक्त अन्य परसर्गों के साथ।

{तुम्हा }—सम्बन्ध द्योतक { के } के { रे }, { का } के { रा∞रे } एवं {की} के { री } के साथ।

{ निकटवर्ती द्योतक अन्य पुरुष एकवचन वाचक सर्वनाम }

{ यह् }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{इस् }—परसर्गों के साथ।

{निकटवर्ती द्योतक अन्य पुरुष बहुवचन वाचक सर्वनाम }

{ये }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{ इन्हों }—कर्ता द्योतक /ने/ परसर्ग के साथ।

{ इन् }—अन्य परसर्गों के साथ।

{ दूरवर्ती द्योतक अन्य पुरुष एकवचन वाचक सर्वनाम }

{ वह }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{ उस् }—परसर्गों के साथ।

{ दूरवर्ती द्योतक अन्य पुरुष बहुवचन वाचक सर्वनाम }

{ वे }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{उन्हों }—कर्ता द्योतक /ने/ परसर्ग के साथ।

{ उन् }—अन्य परसर्गों के साथ।

{ प्रश्न एकवचन वाचक सर्वनाम }

{ कौन् }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{ किस् }—परसर्गों के साथ।

{ प्रश्न बहुवचन वाचक सर्वनाम }

{ कौन् }—परसर्ग रहित स्थिति में।

{ किन्हों }—कर्ता द्योतक /ने/ परसर्ग के साथ।

{ किन् }—अन्य परसर्गों के साथ।

{प्राणी द्योतक अनिश्चय एकवचन वाचक सर्वनाम}

{कोई}—परसर्ग रहित स्थिति में।
{किसी}—परसर्गों के साथ।

{प्राणी द्योतक अनिश्चय बहुवचन वाचक सर्वनाम}

{कोई}—परसर्ग रहित स्थिति में।
{किन्ही}—परसर्गों के साथ।

{सम्बन्ध एकवचन वाचक सर्वनाम}

{जो}—परसर्ग रहित स्थिति में।
{जिस्}—परसर्गों के साथ।

{सम्वन्ध वहुवचन वाचक सर्वनाम}

{जो}—परसर्ग रहित स्थिति में।
{जिन्हों–}—कर्ता द्योतक परसर्ग /ने/ के साथ।
{जिन्–}—अन्य परसर्गों के साथ।

{सहसम्वन्ध एकवचन वाचक सर्वनाम}

—इसके रूप {दूरवर्ती द्योतक अन्य पुरुष एकवचन वाचक सर्वनाम} की ही भाँति हैं।

{सहसम्वन्ध वहुवचन वाचक सर्वनाम}

—इसके रूप {दूरवर्ती द्योतक अन्य पुरुष वहुवचन वाचक सर्वनाम} की ही भाँति हैं।

स्वयं वाचक सर्वनामों में वचन के कारण कोई अन्तर नहीं होता है। /आप्/ के संपरिवर्तक रूप इस प्रकार हैं—

{–आप्}—परसर्ग रहित स्थिति में।
{–अप्}—सम्वन्ध द्योतक /ने/ के साथ।
{आप् ~ अपने}—अन्य परसर्गों के साथ।

३.२.३ विशेषण

३.२.३.० भूमिका

विशेषण कोटि के सम्वन्ध में वाक्य स्तर पर विचार करना संगत है। 'इस दृष्टि से यह कोटि संज्ञा वाक्यांश अथवा नामिक संरचना में विशेष्य के तुरन्त पूर्व आती है'।

३.२.३.१ विशेषणों के वर्ग :

रूपग्रामिक स्तर पर विशेषणों के दो वर्ग हैं :—

रूपान्तर रहित
रूपान्तर सहित

३.२.३.१.१ रूपान्तर रहित

इस अवस्था में विशेषण प्रातिपदिक विभक्ति रहित अवस्था में ही प्रयुक्त होता है। ये प्रातिपदिक मूल अथवा व्युत्पन्न होते हैं। यथा :—

(१) गुणवाचक विशेषण :

मूल प्रातिपदिक

यथा :—

/लाल्, सफेद्, गोल्, सुन्दर, /इत्यादि

व्युत्पन्न प्रातिपदिक

वढ् – + – इया > वढिया
अच्छ्‌ा – + – ई² > अच्छी

(२) स्त्रीलिंग प्रणाली वाचक विशेषण

व्युत्पन्न प्रातिपदिक—
/ऐसी, वैसी, कैसी, जैसी/ इत्यादि

इनकी व्युत्पन्नता का अध्ययन ३.१.३ प्रकरण के अन्तर्गत किया जा चुका है।

(३) स्त्रीलिंग परिमाणवाचक विशेषण

व्युत्पन्न प्रातिपदिक—
/इत्‌नी, उत्‌नी, जित्‌नी, कित्‌नी/ इत्यादि।
इनकी व्युत्पन्नता का अध्ययन ३.१.३ प्रकरण के अन्तर्गत किया जा चुका है।

(४) संख्यावाचक विशेषण

निश्चित एवं अनिश्चित संख्याओं का बोध कराने के आधार पर संख्यावाची विशेषणों के दो भेद हो जाते हैं :—

निश्चित संख्या वाचक
अनिश्चित संख्या वाचक

निश्चित संख्यावाचक

गणनात्मक निश्चित संख्यावाचक विशेषण—

(क) अपूर्णांक अथवा भिन्नात्मक गणनात्मक :—इससे पूर्ण संख्या के किसी भाग का बोध होता है। यथा—

पाव् = १/४
आधा = १/२
तिहाई = १/३
चौथाई = १/४
पौन् = ३/४
सवा = १ १/४
डेढ् = १ १/२
ढाई = २ १/२
पौने दो = १ ३/४
साढे तीन् = ३ १/२*

(ख) पूर्णांक गणनात्मक, यथा :—

/एक्, दो, तीन्, चार्, पाँच्, छै, सात्, आठ्, नौ; दस्, सौ, हजार्, लाख्, किरोड़् ~करोड़ / अन्य संख्याओं की व्युत्पन्नता के सम्वन्ध में ३.१.१.१ एवं ३.१.२ प्रकरणों के अन्तर्गत विचार किया जा चुका है।

समूह द्योतक निश्चित संख्यावाचक विशेषण :

जोड़ा, जोड़ी = (दो का समूह)
गंडा = (चार का समूह)
दहाई = (दस का समूह)
दर्जन् = (बारह का समूह)
कोड़ी = (बीस का समूह)
वीसा, वीसी = (वीस का समूह)

---

*विशेष अध्ययन के लिए देखिए—कामताप्रसाद गुरु—'हिन्दी व्याकरण', पृष्ठ ११०-११२।

चालीसा=(चालीस का समूह)
सैक्ड़ा=(सौ का समूह)

स्त्रीलिंग क्रम द्योतक निश्चित संख्यावाचक विशेषण

इनका निर्माण पूर्णांक गणनात्मक संख्यावाचक विशेपणों में एक साथ दो विशेषण व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से होता है। इनमें पहला व्युत्पादक परप्रत्यय क्रम द्योतक परप्रत्यय तथा दूसरा परप्रत्यय {–ई²} होता है—

एक् – + – ल् – + – ई² > पहली

इसी प्रकार /दूसरी, तीस्री, चौथी, पाँच्वी, छटी, सात्वीँ, आठ्वीँ, नौवीँ, दस्वीँ/ इत्यादि स्त्रीलिंग क्रम द्योतक निश्चित संख्यावाचक विशेषण व्युत्पन्न होते हैं।

स्त्रीलिंग गुणात्मक निश्चित संख्यावाचक विशेषण

इनका निर्माण १ से १०० तक की पूर्णांक गणनात्मक संख्यावाचक विशेषणों में एक साथ दो विशेषण व्युत्पादक परप्रत्ययों के योग से होता है। इनमें पहला व्युत्पादक परप्रत्यय गुणात्मक द्योतक तथा दूसरा व्युत्पादक परप्रत्यय {–ई²} होता है। यथा :—

दो – + – गुन् – + – ई² > दुगुनी

इसी प्रकार /तिगुनी, चौगुनी, पँचूगुनी, छै गुनी/ इत्यादि स्त्रीलिंग गुणात्मक निश्चित संख्यावाचक विशेषण व्युत्पन्न होते हैं।

अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण

यथा :—

/एकाध्, दो-एक्, सैक्ड़ोँ, दसियोँ/ इत्यादि

३.२.३.१.२ रूपान्तर सहित

पुंल्लिग आकारान्त विशेषण (इयाकारान्त विशेषण प्रातिपदिकों को छोड़ कर) रूपान्तरित होते हैं। अविकारी कारक एकवचन पुंल्लिग संज्ञा रूपों के साथ आकारान्त पुंल्लिग विशेषण प्रातिपदिक बिना किसी विभक्ति परप्रत्यय के प्रयुक्त होते हैं। जब विशेष्य अविकारी कारक वहुवचन, विकारी कारक एकवचन, विकारी कारक बहुवचन अथवा सम्बोधन कारक वहुवचन में प्रयुक्त होते हैं, तो आकारान्त पुंल्लिग विशेषण प्रातिपदिकों में {–ए} विभक्ति पर प्रत्यय जुड़ता है

तथा आकारान्त विशेषण प्रातिपदिक अपने लघु रूप में आते हैं। इस प्रकार रूपान्तर सहित विशेषणों की रूपतालिका में द्विमुखी अन्तर पाया जाता है जिसमें {–ए} विभक्ति परप्रत्यय अपने अभाव से व्यतिरेकी रूप है। यथा :—

/काला बालक् आ रहा है/
/काले बालक् को यह् वस्तु दे दो/
/काले बालक् आ रहे हैं/
/काले बालकों को यह् वस्तु दे दो/
/काला बालक्! यहाँ आ/
/काले बालको! यहाँ आओ/
/काला लड़्का आ रहा है/
/काले लड़्के को यह् वस्तु दे दो/
/काले लड़्के आ रहे हैं/
/काले लड़्कों को यह् वस्तु दे दो/
/काला लड़्का! यहाँ आ/
/काले लड़्को! यहाँ आओ/

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि संज्ञा एवं रूपान्तर सहित विशेषण की रूपतालिकाओं में अन्तर है। पुल्लिंग विशेष्य (संज्ञा) की रूपतालिका निम्नलिखित प्रकार में से कोई एक होती है :—

पुल्लिंग वर्ग १.

अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक एकवचन	विकारी कारक एकवचन	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	–ϕ	–ϕ	–ओं	–ओ

पुल्लिंग वर्ग २.

अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक एकवचन	विकारी कारक एकवचन	अविकारी कारक बहुवचन	विकारी कारक बहुवचन	सम्बोधन कारक बहुवचन
प्रातिपदिक	–ए	–ए	–ओं	–ओ

किन्तु रूपान्तर सहित विशेषणों में सदैव द्विमुखी अन्तर पाया जाता है। संज्ञा पुल्लिग कोटि के कारक एवं वचन के भेद के आधार पर, विशेषण रूपतालिक के रूपान्तर की तालिका निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत की जा सकती है:—

अविकारी कारक एवं सम्बोधन कारक एकवचन	विकारी कारक एकवचन, अविकारी कारक वहुवचन, विकारी कारक वहुवचन, सम्वोधन कारक वहुवचन
प्रातिपदिक	—ए

रूपान्तर सहित वर्ग में निम्नलिखित प्रकार के विशेषण प्रातिपदिक आते हैं:—

(१) आकारान्त पुल्लिग गुणवाचक विशेषण प्रातिपदिक।
(२) आकारान्त पुल्लिग प्रणाली वाचक विशेषण प्रातिपदिक।
(३) आकारान्त पुल्लिग परिमाण वाचक विशेषण प्रातिपदिक।
(४) आकारान्त पुल्लिग संख्यावाचक विशेषण प्रातिपदिक।

(१) आकारान्त पुल्लिग गुणवाचक विशेषण प्रातिपदिक

/अच्छा, बुरा, सीधा, दुब्ला, पत्ला, मोटा, गीला, पीला, नीला, काला, लम्वा, चौड़ा, ऊँचा, नीचा, तिर्छा, पुराना, ताजा/इत्यादि।

(२) आकारान्त पुल्लिग प्रणाली वाचक विशेषण प्रातिपदिक

/ऐसा, वैसा, कैसा/इत्यादि।

(३) आकारान्त पुल्लिग परिमाणवाचक विशेषण प्रातिपदिक

/इत्ना, उत्ना, जित्ना, कित्ना /इत्यादि।

(४) आकारान्त पुल्लिग संख्यावाचक विशेषण प्रातिपदिक

(क) पुल्लिग क्रमद्योतक निश्चित संख्यावाचक विशेषण प्रातिपदिक: यथा :—

/पह्ला, दूस्रा, तीस्रा, चौथा, पाँच्वा/इत्यादि।

(ख) पुल्लिग गुणात्मक निश्चित संख्यावाचक विशेषण प्रातिपदिक: यथा:—

/दुगुना, तिगुना, चौगुना, पँच्गुना/इत्यादि।

उपर्युक्त समस्त पुल्लिग आकारान्त विशेषण प्रातिपदिक संज्ञा अविकारी एकवचन पुल्लिग एवं संज्ञा सम्बोधन कारक एकवचन पुल्लिग रूप के साथ प्रयुक्त

होते हैं। शेष अन्य कारक एवं वचन संज्ञा रूपों के साथ इन विशेषण प्रातिपदिकों में {–ए} विभक्ति संयुक्त होती है, यथा:—

अच्छा	–	+	–	ए	>	अच्छे
ऐसा	–	+	–	ए	>	ऐसे
इत्‌ना	–	+	–	ए	>	इत्‌ने
पह्‌ला	–	+	–	ए	>	पह्‌ले
दुगुना	–	+	–	ए	>	दुगुने

३.२.३.२ पुनर्विचार

इन रूपान्तर सहित विशेषणों को वाक्यीय स्तर पर प्रतिबंधित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। उस स्थिति में ये विभक्तिमय न होकर प्रातिपदिकों के साथ परिपूरक वितरण में वितरित होने के कारण संपरिवर्तक होंगे। ऐसी स्थिति में /अच्छे/ की व्याख्या /अच्छा – + – ए/ रूप में न होकर /अच्छा ∞ अच्छे/ रूप में मानी जायेगी। इनके परिपूरक वितरण को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है कि /अच्छा/ जैसे रूप जब अविकारी कारक बहुवचन, विकारी कारक एकवचन, विकारी कारक बहुवचन, सम्बोधन कारक बहुवचन में प्रयुक्त पुंल्लिग संज्ञा रूपों के साथ आते हैं तो वे /अच्छे/ जैसे रूपों में परिणत हो जाते हैं। इस विकल्प को स्वीकार करने पर समस्त विशेषण विभक्ति रहित हैं। जिन्हें रूपान्तर रहित वर्ग में प्रस्तुत किया गया है; उनके संपरिवर्तक रूप नहीं हैं, तथा जिन्हें रूपान्तर सहित वर्ग के अन्तर्गत रखा गया है, उनके संपरिवर्तक रूप प्राप्त हैं।

३.२.४ क्रिया

३.२.४.० भूमिका

क्रिया कोटि में क्रिया-धातुओं अथवा क्रिया व्युत्पन्न प्रातिपदिकों के पश्चात् काल एवं/अथवा अर्थ, वचन तथा पुरुष एवं/अथवा लिंग के अनुसार विभक्तियाँ जुड़ती हैं।

हिन्दी में वाच्य (कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य तथा भाववाच्य) एवं प्रयोग[1] (कर्तरि, कर्मणि तथा भावे प्रयोग) की प्रतीति वाक्य धरातल पर होती हैं।

---

१. वाच्य तथा प्रयोग

'हिन्दी व्याकरणों में 'वाच्य' तथा 'प्रयोग' के अर्थ के बारे में मतभेद है।
दे०—(क) कामताप्रसाद गुरु—'हिन्दी व्याकरण', पृष्ठ २५५-५७।
(ख) पं० किशोरीदास वाजपेयी—'हिन्दी शब्दानुशासन' पृष्ठ ४०९।

क्रिया-विभक्तियाँ

क्रिया रूपग्रामिक संरचना के गठन को इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं:—

मूल धातु + व्युत्पादक प्रत्यय + विभक्ति प्रत्यय

विभक्ति प्रत्यय मूल धातु अथवा व्युत्पन्न क्रिया प्रातिपदिकों में जुड़कर क्रिया रूपग्रामिक संरचना का निर्माण करते हैं।

हिन्दी में विभिन्न कालों एवं अर्थों की अभिव्यक्ति संयुक्त क्रियाओं के माध्यम से होती है। सम्प्रति, संयुक्त क्रियाओं पर विचार नहीं किया जा रहा है। यह अध्ययन क्रिया-वाक्यांश प्रकरण में प्रस्तुत किया जाएगा। यहाँ क्रिया-विभक्तियों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है। क्रिया-रूपग्रामिक संरचना से 'काल-अर्थ' की प्रतीति होती है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि कुछ विभक्तियाँ 'काल-अर्थ' द्योतक होती हैं किन्तु कुछ विभक्तियाँ एकाधिक कालों एवं अर्थों की अभिव्यंजना करती हैं तथा उस स्थिति में काल-अर्थ का निर्धारण विभक्तियों के अनुसार न होकर धातुओं अथवा वाक्य धरातल से होता है।

आगे क्रिया-विभक्तियों को ६ वर्गों में बाँटकर उनका अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा। इनमें क्रिया-विभक्ति वर्ग २, क्रिया विभक्ति वर्ग ३ एवं क्रिया विभक्ति वर्ग ६ की विभक्तियाँ क्रमशः भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक, भविष्य परोक्ष आज्ञार्थक एवं भविष्य निश्चयार्थक की प्रतीति कराती हैं। शेष वर्गों की विभक्तियों से कालों एवं/अथवा अर्थों की प्रतीति धातु प्रतिबंधित अथवा वाक्य स्तर से होती है। यथा :—

(क) क्रिया विभक्ति वर्ग १

– ऊँ	– ऐं – ओं – ऐं
– ऐ –ए – ϕ	– ओ – ϕ
– ऐ – ए – ϕ	– ऐं – ऐं – ओं

इन विभक्तियों से केवल पुरुष एवं वचन की अभिव्यक्ति हो रही है। 'काल अर्थ' धातु प्रतिबंधित है। यदि {ह्–} धातु के बाद उपर्युक्त विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो 'वर्तमान निश्चयार्थक काल' की प्रतीति होती है। यथा :—

ह् – + – ऊँ > हूँ
ह् – + – ऐं > हैं
ह् – + – ऐ > है
ह् – + – ओ > हो

{–हो} धातु के वाद जब उपर्युक्त विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो 'भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक काल' की प्रतीति होती है। यथा:—

हो – + – ऊँ > होऊँ
हो – + – ओं > हों
हो – + – φ > हो
हो – + – ओ ~ φ > हो ~ होओ
हो – + – φ > हो
हो – + – अं ~ एँ > हों ~ होएँ

संयुक्तकाल रचना में जब {हो–} के पश्चात् उपर्युक्त विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो सहायक क्रिया के रूप में 'सम्भवनार्थक काल' का द्योतन होता है।

{ह्–} एवं {हो–} धातु के अतिरिक्त अन्य धातुओं के पश्चात् भी उक्त विभक्तियां जुड़ती हैं। यथा:—

जा – + – ऊँ > जाऊँ
जा – + – एँ > जाएँ
जा – + – ए > जाए
जा – + – ओ > जाओ
जा – + – ए > जाए
जा – + – एँ > जाएँ

मध्यम पुरुष एकवचन को छोड़कर शेष पुरुषों एवं वचनों के रूप 'भविष्यत सम्भवनार्थ काल' एवं 'भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञा काल' की प्रतीति कराते हैं। यह प्रतीति विभक्ति एवं धातु के स्तर पर न होकर वाक्य स्तर पर होती है:—

जा – + – ऊँ > जाऊँ
शायद मैं जाऊँ = भविष्यत सम्भवनार्थ काल
क्या मैं जाऊँ = भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञा काल

(ख) इसी प्रकार क्रिया विभक्ति वर्ग ४ की विभक्तियों का प्रयोग द्रष्टव्य है:—

– आ – ई
– ए – ईं

उपर्युक्त विभक्तियाँ जब किसी धातु में जुड़ती हैं तो उससे 'भूत निश्चयार्थक काल' की प्रतीति होती है। यथा:—

जा – + – आ > गया
हो – + – आ > हुआ
{थ} – + – आ > था

इस प्रकार रूपग्रामिक स्तर पर उपर्युक्त विभक्तियाँ 'भूत निश्चयार्थक काल' की प्रतीति कराती हैं।

किन्तु वाक्यांश स्तर पर {ह्–} के {थ्–} के साथ उपर्युक्त विभक्तियों के जुड़ने पर 'भूत निश्चयार्थक सहायक क्रिया' की रचना होती है। यथा:—

{थ्} – + – आ > था
{थ्} – + – ई > थी
{थ्} – + – ए > थे

अन्य धातुओं के पश्चात उक्त विभक्तियों के योग से क्रिया वाक्यांश की मुख्य क्रिया का निर्माण होता है जो काल निरपेक्ष रचना होती है। उससे केवल पूर्णता का वोध होता है, काल का निर्धारण सहायक क्रिया द्वारा अथवा वाक्य रचना द्वारा होता है, यथा:—

खा – + – आ > खाया

'खाया' से रूपग्रामिक स्तर पर 'भूत निश्चयार्थक' की प्रतीति होती है; किन्तु वाक्य धरातल पर इससे किसी काल की प्रतीति नहीं होती है:—

खाया – + – है > खाया है
खाया – + – था > खाया था
खाया – + – होगा > खाया होगा

(ग) यही स्थिति क्रिया विभक्ति वर्ग ५ की विभक्तियों की है।

क्रिया-विभक्तियों के ६ वर्गों को लिंग अथवा/और पुरुष के अनुसार निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है:—

(क) पुरुष के अनुसार—वे वर्ग जो लिंग के अनुसार नहीं, अपितु पुरुष के कारण रूपान्तरित होते हैं:—

(अ) समस्त पुरुषों के अनुसार—क्रिया वर्ग १

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	– ऊँ	– ऐं – ओं – एँ
मध्यम पुरुष	– ऐ – ए – ϕ	– ओ – ϕ
अन्य पुरुष	– ऐ – ए – ϕ	– ऐं – एँ – ओं

(आ) केवल मध्यम पुरुष के अनुसार—क्रिया वर्ग २ एवं क्रिया वर्ग ३

मध्यम पुरुष एक वचन – ϕ – ओ – इए

म० पु० बहुवचन – ना~इएगा

(ख) लिंग के अनुसार—वे वर्ग जो पुरुष के अनुसार नहीं अपितु लिंग के कारण रूपान्तरित होते हैं। क्रिया वर्ग ४ एवं क्रिया वर्ग ५

	पुल्लिग	स्त्रीलिंग
एकवचन	– आ	– ई
बहुवचन	– ए	– ईं
एकवचन	– ता	– ती
बहुवचन	– ते	– तीं

(ग) पुरुष-लिंग के अनुसार—क्रिया वर्ग ६

इस वर्ग में धातु के पश्चात् तीन विभक्तियों का योग होता है। इनमें पहली विभक्ति पुरुष तथा वचन द्योतक, दूसरी विभक्ति काल-अर्थ द्योतक तथा तीसरी विभक्ति लिंग-वचन द्योतक होती हैं।

ऊँ – ग् – आ	ऊँ – ग् – ई	एँ – ग् – ए	एँ – ग् – ई
ए – ग् – आ	ए – ग् – ई	ओ – ग् – ए	ओ – ग् – ई
ए – ग् – आ	ए – ग् – ई	एँ – ग् – ए	एँ – ग् – ई

इन छै वर्गों की विभक्तियों को उदाहरण सहित इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:—

३.२.४.१ क्रिया वर्ग १

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	– ऊँ	– ऐं; – ओं, – एँ
मध्यम पुरुष	– ऐ; – ए; – ϕ	– ओ, – ओं
अन्य पुरुष	– ऐ, – ए, – ϕ	– ऐं; –एँ; –ओं

{क्रिया वर्ग १ उ० पु० ए० व०}

जा – + – ऊँ > जाऊँ

आ – + – ऊँ > आऊँ

ह् – + – ऊँ > हूँ

हो – + – ऊँ > होऊँ

ले – + – ऊँ > लूँ

{क्रिया वर्ग १ उ० पु० अ० पु० ब० व०}

{–ऐं} – /ह्–/ के बाद = ह् – + – ऐं > हैं

{–ओं} – /हो–/ के बाद (यौगिक प्रक्रिया में

ओ – + – ओ > ओ हो जाते हैं)

हो – + – ओं > हों

{–एँ} – अन्य धातुओं के साथ। यथा :—

आ – + – एँ > आएँ

जा – + – एँ > जाएँ

{क्रिया वर्ग १ म० पु० अ० पु० ए० व०}

{–ऐ} / ह्–/ के बाद

ह् – + – ऐ > है

{– ϕ} /हो–/ के बाद

हो – + – ϕ > हो

{–ए} – अन्य धातुओं के साथ। यथा :—

आ – + – ए > आए

खा – + – ए > खाए

गा – + – ए > गाए

{क्रिया वर्ग १ म० पु० ब० व०}

{–ओं} /हो–/ के बाद

हो – + – ओं > हों

{–ओ} – अन्य धातुओं के पश्चात्—

ह् – + – ओ > हो

आ – + – ओ > आओ

खा – + – ओ > खाओ

संधि-विचार

(१) आकारान्त धातुओं के पश्चात् जब {क्रिया वर्ग १ म० पु० अ० पु० ए० व०} की {–ए} तथा {क्रिया वर्ग १ उ० पु० अ० पु० ब० व०} की {–एँ} विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में विकल्प से 'य' श्रुति का आगम हो जाता है।

(२) ईकारान्त तथा ऊकारान्त धातुओं में जब क्रिया वर्ग १ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं, तो यौगिक प्रक्रिया में धातुओं के अन्त्य / ई / एवं / ऊ / विकल्प से क्रमशः / इ / एवं / उ / हो जाते हैं :

पी – + – ऊँ > पीऊँ ~ पिऊँ
पी – + – ओ > पीओ ~ पिओ
छू – + – ओ > छूओ ~ छुओ

(३) / ले / तथा / दे / धातुओं में जब क्रिया वर्ग १ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो धातुओं के स्वर / ए / का लोप हो जाता है।

३.२.४.२ क्रिया वर्ग २

	एकवचन	बहुवचन
मध्यम पुरुष	– ϕ	– ओ ~ – इए

इस वर्ग की विभक्तियों के जुड़ने से भविष्यत प्रत्यक्ष काल आज्ञार्थक की रचना होती है। यथा :—

जा – + – ϕ > जा
जा – + – ओ > जाओ
जा – + – इए > जाइए
आ – + – ϕ > आ
आ – + – ओ > आओ
आ – + – इए > आइए

टिप्पणी १. भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष एकवचन के रूपों की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि भविष्य प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष एकवचन की प्रतीति धातु में बिना किसी विभक्ति प्रत्यय के जुड़े हुए ही होती है।

{ क्रिया वर्ग २ भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन }

{–ओ} वाक्य में / तुम् / सर्वनाम के साथ
{–इए} वाक्य में / आप् / सर्वनाम के साथ

संधि-विचार

(१) {क्रिया वर्ग २ भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन} की {–ओ} के जुड़ने पर ईकारान्त एवं ऊकारान्त धातुओं के / ई / एवं / ऊ / स्वर क्रमशः / इ / एवं / उ / में बदल जाते हैं।

(२) {क्रिया वर्ग २ भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष वहुवचन} की {–इए} के जुड़ने पर /ले, दे, पी/ धातुओं के निम्नलिखित संपरिवर्तक प्रयुक्त होते हैं:—

ले → लीज्

दे → दीज्

पी → पीज्

/कर्/ के /कीज्~कर्/ रूप विकल्प से प्रयुक्त होते हैं।

३.२.४.३ क्रिया वर्ग ३

मध्यम पुरुष वहुवचन –ना –इएगा

इस वर्ग की विभक्तियों के जुड़ने पर भविष्यत परोक्ष काल आज्ञार्थक की रचना होती है। यथा:—

जा – + – ना > जाना

जा – + – इएगा > जाइएगा

{क्रिया वर्ग ३ मध्यम पुरुष बहुवचन}

{–ना} – जब वाक्य में /तुम् –/ सर्वनाम हो।

{–इएगा} – जब वाक्य में /आप् –/ सर्वनाम हो।

/इएगा/ में/ इए –/ {क्रिया वर्ग २ भविष्यत प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन} की {–इए} के समान है। शेष अंश भविष्यतकाल द्योतक है। किन्तु यहाँ /इएगा/ को /इए –/ एवं /– गा/ में विभाजित नहीं किया गया है। इसका कारण यह है कि क्रिया वर्ग २ की /– इए/ केवल भविष्यत आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन की ही द्योतक नहीं अपितु उसके साथ 'प्रत्यक्ष' काल भी संहित है। /इएगा/ को /इए –/ एवं /– गा/ में विभक्त किया जा सकता है। उस स्थिति में {क्रिया वर्ग २ भविष्य प्रत्यक्ष आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन} की संरचना के लिए/ इए –/ एवं /– ϕ/ दो विभक्तियाँ माननी होंगी:—

/इए –/ भविष्यत आज्ञार्थक मध्यम पुरुष बहुवचन

/– ϕ/ प्रत्यक्ष द्योतक

/– गा/ परोक्ष द्योतक

शून्य परप्रत्यय की योजना से बचने के लिए /– इएगा/ को इकाई रूप में ग्रहण किया गया है।

३.२.४.४. क्रिया वर्ग ४

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
एकवचन	– – आ	– ई
बहुवचन	– –ए	–ईं

इस वर्ग की विभक्तियाँ 'भूतकाल' का द्योतन कराती हैं। संयुक्त काल रचना में यदि { ह्– } धातु के { थ्– } के पश्चात् इस वर्ग की विभक्तियाँ संयुक्त होती हैं तो सामान्य भूतकाल द्योतक सहायक क्रिया का निर्माण करती हैं, तथा जब अन्य धातुओं के पश्चात् जुड़ती हैं तो इनसे पूर्णत्व का बोध होता है। जब संयुक्त काल रचना एवं अन्य प्रकार के क्रिया वाक्यांशों में { रह् } धातु के बाद इस वर्ग की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो उससे सातत्यबोध होता है।

{ क्रिया वर्ग ४ एक व० पु० }

{ थ्– } – + – आ > था
आ – + – आ > आया
जा – + – आ > गया
कर् – + – आ > किया
ले – + – आ > लिया
हो – + – आ > हुआ

{ क्रिया वर्ग ४ बहुवचन पु० }

{ थ } – + – ए > थे
आ – + – ए > आए
जा – + – ए > गए
हो – + – ए > हुए

{ क्रिया वर्ग ४ एकवचन स्त्रीलिंग }

{ थ्– } – + – ई > थी
आ – + – ई > आई
जा – + – ई > गई
हो – + – ई > हुई

{ क्रिया वर्ग ४ बहुवचन स्त्रीलिंग }

{थ्–} – + – ईं > थीं
आ – + – ईं > आईं
जा – + – ईं > गईं
हो – + – ईं > हुईं

विशेष

(१) {ह} – धातु के {-थ्} के बाद क्रियावर्ग ४ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं।

(२) {जा} – धातु के {-ग्} के बाद क्रिया वर्ग ४ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं।

(३) {हो} –धातु के {-हु} के बाद क्रिया वर्ग की विभक्तियाँ जुड़ती हैं।

संधि विचार

(१) {क्रिया वर्ग ४ एकवचन पुल्लिग} विभक्ति / –आ / एवं {क्रियावर्ग ४ वहुवचन पुल्लिग} विभक्ति / –ए / जुड़ने पर / कर् / एवं / जा / धातु के निम्नलिखित संपरिवर्तक हो जाते हैं:—

कर् → किय् + – आ > किया
जा → गय् – + – आ > गया

(२) आकारान्त, ईकारान्त, एकारान्त, एवं / हो– / को छोड़कर शेष ओकारान्त धातुओं में जब {क्रिया वर्ग ४ एकवचन पुल्लिग} विभक्ति / –आ / जुड़ती है तो यौगिक प्रक्रिया में / य् / ध्वनिग्राम का आगम हो जाता है:—

आ – + – आ > आया
पी – + – आ > पीया ~ पिया
ले – + – आ > लीया ~ लिया
दे – + – आ > दीया ~ दिया
खो – + – आ > खोया
छू – + – आ > छूआ ~ छुआ

(३) ईकारान्त तथा ऊकारान्त धातुओं में जब {क्रिया वर्ग ४ एकवचन पुल्लिग} एवं {क्रिया वर्ग ४ वहुवचन पुल्लिग} की विभक्तियाँ लगती हैं तो विकल्प से उनके ई / एवं / ऊ / स्वर क्रमशः / इ / एवं / उ / हो जाते हैं।

(४) / ले / एवं / दे / धातुओं में जब {क्रिया वर्ग ४ एकवचन पुल्लिग} एवं {क्रिया वर्ग ४ बहुवचन पुल्लिग} की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो धातुओं का /–ए / स्वर / इ / में परिवर्तित हो जाता है तथा जब {क्रिया वर्ग ४ एकवचन स्त्रीलिंग} एवं {क्रिया वर्ग ४ बहुवचन स्त्रीलिंग} विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में / –ए / का लोप हो जाता है। यथा:—

ले – + – आ > लिया
ले – + – ए > लिए
ले – + – ई > ली
ले – + – ईं > लीं

३.२.४.५ क्रिया वर्ग ५

		पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
एकवचन	–	–ता	–ती
वहुवचन	–	–ते	–तीँ

क्रिया वर्ग ५ की विभक्तियों को आगे विश्लेषित किया जा सकता है। धातु के पश्चात् / –त् / अंश क्रिया वर्ग ५ की वचन एवं लिंग द्योतक विभक्ति में समान रूप से है। इसके अर्थ यह है कि वचन एवं लिंग भेदक विभक्तियाँ / –आ / / –ए / / इ / एवं / ईँ / हैं।

वस्तुतः / –त्– / अंश अपूर्णता का द्योतक है तथा शेष विभक्तियाँ क्रिया वर्ग ४ के समान हैं। क्रिया वर्ग ४ की विभक्तियाँ { ह्– } धातु के {थ्} के साथ जुड़कर सामान्य भूतकाल सहायक क्रिया के रूप में वितरित होती हैं तथा यदि किसी अन्य धातु के पश्चात् जुड़ती है तो उससे कार्य की पूर्णता का आभास होता है। किन्तु क्रिया वर्ग ५ में / –आ / / –ए / / ई / / ईँ / विभक्तियाँ / –त्– / के पश्चात् जुड़कर अपूर्णता की रचना करती हैं तथा इस प्रकार / –आ / / –ए / / –ई / एवं / –ईँ / विभक्तियाँ क्रिया वर्ग ५ में केवल लिंग वचन मात्र की प्रतीति कराती हैं।

रूपग्रामिक स्तर पर क्रिया वर्ग ५ की विभक्तियाँ { ह्–} के किसी सहरूपग्राम के साथ नहीं जुड़ती हैं। अन्य धातुओं के साथ इनका योग होता है। यथा :—

{ क्रिया वर्ग एकवचन पुल्लिंग }

जा – + – ता > जाता
कर् – + – ता > कर्ता
ले – + – ता > लेता
हो – + – ता > होता

{ क्रिया वर्ग ५ वहुवचन पुल्लिंग }

आ – + – ते > आते
जा – + – ते > जाते
हो – + – ते > होते
कर् – + – ते > कर्ते

{क्रिया वर्ग ५ एकवचन स्त्रीलिंग}

आ – + – ती > आती
जा – + – ती > जाती
हो – + – ती > होती
कर् – + – ती > कर्ती

{क्रिया वर्ग ५ बहुवचन स्त्रीलिंग}

जा – + – तीँ > जातीँ
आ – + – तीँ > आतीँ
हो – + – तीँ > होतीँ
ले – + – तीँ > लेतीँ
कर् – + – तीँ > कर्तीँ

उपर्युक्त विभक्तियाँ किसी धातु के पश्चात् जुड़कर अपूर्ण संकेतार्थ की प्रतीति कराती हैं। संयुक्त काल रचना में जब {हो} के पश्चात् क्रिया वर्ग ५ विभक्ति जुड़ती है तो हो + – क्रिया वर्ग ५ विभक्ति > सहायक क्रिया के रूप में कार्य करती है तथा उससे भूतकाल संकेतार्थक काल का द्योतन होता है। (धातु) + धातु + विभक्ति + सहायक क्रिया के क्रम से निर्मित संयुक्त काल रचना में जब धातु के पश्चात् क्रिया वर्ग ५ वर्ग की विभक्ति जुड़ती है तो उससे अपूर्ण काल का बोध होता है।

३.२.४.६ क्रिया वर्ग ६

	पुंल्लिग		स्त्रीलिंग	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	–ऊँ–ग्–आ	–एँ–ग्–ए	ऊँ–ग्–ई	एँ–ग्–ई
मध्यम पुरुष	–ए–ग्–आ	ओ–ग्–ए	–ए–ग्–ई	–ओ–ग्–ई
अन्य पुरुष	–ए–ग्–आ	एँ–ग्–ए	–ए–ग्–ई	एँ–ग्–ई

क्रिया वर्ग ६ की विभक्तियाँ एक विशिष्ट क्रम से संहित हैं। अन्य वर्गों में एक ही विभक्ति वचन, पुरुष अथवा लिंग तथा स्वयं अथवा धातु एवं/अथवा

वाक्य प्रतिवंधित रूप में काल एवं / अथवा अर्थ की प्रतीति कराती है, किन्तु क्रिया वर्ग ६ में लिंग, वचन, पुरुष, काल, अर्थ की प्रतीति धातु के पश्चात् एक साथ तीन विभक्तियों के योग से होती है। इनमें पहली विभक्ति पुरुष एवं वचन द्योतक, दूसरी विभक्ति काल एवं अर्थ द्योतक तथा पुल्लिग में तीसरी विभक्ति लिंग एवं वचन द्योतक तथा स्त्रीलिंग में तीसरी विभक्ति केवल लिंग द्योतक होती है। इनकी अलग-अलग विवेचना इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है :—

{क्रिया वर्ग ६ उत्तम पुरुष एकवचन}

{–ऊँ–}

{क्रिया वर्ग ६ मध्यम पुरुष अन्य पुरुष एकवचन}

{–ϕ} /हो–/ धातु के वाद
{–ए–} – अन्य धातुओं के बाद

{क्रिया वर्ग ६ उत्तम पुरुष, अन्य पुरुष वहुवचन}

{–ँ} – /हो–/ धातु के बाद
{–एँ–} – अन्य धातुओं के वाद

{क्रिया वर्ग ६ मध्यम पुरुष वहुवचन}

{–ϕ} – हो–/ धातु के वाद
{–ओ–} – अन्य धातुओं के बाद

{क्रिया वर्ग ६ भविष्य निश्चयार्थक काल द्योतक}

{–ग्–}

{क्रिया वर्ग ६ पुल्लिग एकवचन}

{–आ}

{क्रिया वर्ग ६ पुल्लिग वहुवचन}

{–ए}

{क्रिया वर्ग ६ स्त्रीलिंग}

{–ई}

यथा :—

धातु	विभ० स्थिति १	वि० २	वि० ३
जा –	ऊँ –	ग् –	आ ~ ई>
			जाऊँगा ~ जाऊँगी
जा –	ए –	ग् –	आ ~ ई>
			जाएगा ~ जाएगी
जा –	एँ –	ग् –	ए ~ ई>
			जाएँगे ~ जाएँगी
जा –	ओ –	ग् –	ए ~ ई>
			जाओगे ~ जाओगी
हो –	ऊँ –	ग् –	आ ~ ई>
			हुँगा ~ हूँगी
हो –	ϕ –	ग् –	आ ~ ई>
			होगा ~ होगी
हो –	ँ –	ग् –	ए ~ ई>
			होंगे ~ होंगी
हो –	ϕ –	ग् –	ए ~ ई>
			होगे ~ होगी

विशेष :

संयुक्त काल संरचना में {हो} धातु के पश्चात् क्रिया वर्ग ६ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो हो+क्रिया वर्ग ६ विभक्ति के योग से निर्मित संरचना सहायक क्रिया के रूप में वितरित होती है तथा उससे संदिग्धार्थ की प्रतीति होती है।

संधि विचार

(१) /हो–/ धातु के पश्चात् {क्रिया वर्ग ६ उत्तम पुरुष एकवचन} की {–ऊँ–} विभक्ति जुड़ती है तो यौगिक प्रक्रिया में /हो–/ के स्वर /ओ/ का लोप हो जाता है तथा विभक्ति {ऊँ} विकल्प से /उँ/ में परिणत हो जाती है।

(२) आकारान्त धातुओं के पश्चात् जब {क्रिया वर्ग मध्यम पुरुष अन्य पुरुष एकवचन} की {ए} एवं {क्रिया वर्ग ६ उत्तम पुरुष अन्य पुरुष बहुवचन} की {एँ} जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में विकल्प से 'य्' श्रुति का आगम हो जाता है।

(३) ईकारान्त तथा ऊकारान्त धातुओं में जब क्रिया वर्ग ६ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो यौगिक प्रक्रिया में धातुओं के अन्त्य /ई/ एवं /ऊ/ विकल्प से क्रमशः /इ/ एवं /उ/ में परिणत हो जाते हैं।

(४) /ले/ तथा /दे/ धातुओं के बाद जब क्रिया वर्ग ६ की विभक्तियाँ जुड़ती हैं तो धातुओं के स्वर /ए/ का लोप हो जाता है।

३, २, ५ क्रिया विशेषण

३.२.५.० भूमिका

रूपान्तरित होने की दृष्टि से विशेषणों की भाँति क्रिया-विशेषणों का एक वर्ग रूपान्तर रहित होता है, तथा दूसरे वर्ग में रूपान्तर होता है। इस कोटि को रूपग्रामिक एवं वाक्यीय दृष्टि से इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है। "यह कोटि क्रिया वाक्यांश में क्रिया के तुरन्त पूर्व एवं संज्ञा वाक्यांश अथवा नामिक संरचना में विशेषण पूर्व आती है तथा इसमें आने वाले रूप या तो रूपान्तर रहित होते हैं अथवा कुछ पुल्लिग आकारान्त बहुवचन रूपों में {–ए} विभक्ति का योग होता है।"

३.२.५.-.१ क्रिया-विशेषणों के वर्ग

क्रिया-विशेषणों की विवेचना उन्हें विशेषणों की भाँति रूपान्तर रहित एवं रूपान्तर सहित वर्गों में बाँट कर इस प्रकार की जा सकती है :—

३.२.५.१.१ रूपान्तर रहित

इस वर्ग में विभक्ति रहित क्रिया-विशेषण प्रातिपदिक ही सर्वत्र प्रयुक्त होता है।

१. स्थान वाचक :

/यहाँ, वहाँ, जहाँ, तहाँ, कहाँ, आगे, पीछे, नीचे, ऊपर्, सामने, तले, बाहर्, भीतर्, पास्, समीप्/ इत्यादि।

२. दिशा वाचक :

/इधर्, उधर्, जिधर्, किधर्, दूर्/ इत्यादि

३. काल वाचक :

/आज्, कल्, परसों, अब्, जब्, कब्, तब्, फिर्, तुरन्त, सदा, आज्कल्, बहुधा, बार्बार्, प्रतिदिन्/

४. परिमाण वाचक :

/वहुत्, भारी, अत्यंत, कुछ्, लग्भग्, वस्, केवल्, काफी, अधिक्, कम्, वड़ी, थोड़ी, इत्नी, उत्नी, जित्नी, कित्नी /

५. रीति वाचक

/यों̃, क्यों̃, ज्यों̃, त्यों̃, अचानक्, धीरे, सह्सा, अवश्य, सही, सच्मुच्; कदाचित्/ इत्यादि।

६. निषेध वाचक

/न, नहीं̃, मत्/

३.२.५.१.२ रूपान्तर सहित

कुछ पुंल्लिग आकारान्त क्रिया-विशेषण प्रातिपदिकों में रूपान्तर होता है। यथा :—

/अच्छा, टेढा, तिर्छा, सीधा, कैसा, जैसा, ऐसा, इत्ना, उत्ना, जित्ना, कित्ना/ इत्यादि।

विशेषण के रूपान्तर वर्ग की धारा एवं क्रिया-विशेषणों के रूपान्तर वर्ग की धारा में अन्तर है। क्रिया-विशेषणों में केवल वहुवचन रूप में प्रातिपदिकों में {—ए} विभक्ति संयुक्त होती है तथा आकारान्त प्रातिपदिक अपने लघु रूप में आते हैं। क्रिया-विशेषणों की तालिका को इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

एकवचन	बहुवचन
प्रातिपदिक	{—ए}

उदाहरणार्थ :

धोवी कुर्ता अच्छा धोता है।
धोवी कुर्ते को अच्छा धोता है।
धोवी कप्ड़े अच्छे धोता है।
वह् अच्छा खम्मा टेढा गाड़् रहा है।
वह अच्छे खम्मे को टेढा गाड़् रहा है।

यहाँ एक बात उल्लेखनीय है। क्रिया-विशेषण पुंल्लिग आकारान्त प्रातिपदिकों में प्रत्येक स्थिति में रूपान्तर नहीं होता है। उदाहरणार्थ, उपर्युक्त वाक्यों में /अच्छा/ प्रातिपदिक में रूपान्तर हो रहा है; किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि /अच्छा/

क्रिया-विशेषण प्रातिपदिक में संज्ञा के बहुवचन होने पर सर्वत्र /–ए/ विभक्ति का योग हो। उदाहरणार्थ :—

लड़्का अच्छा गाता है।
लड़के अच्छा गाते हैं।

/धोबी कप्ड़े अच्छे धोता है/ वाक्य में क्रिया-विशेषण प्रातिपदिक संज्ञा बहुवचन /कप्ड़े/ के कारण रूपान्तरित हैं, किन्तु /लड़्के अच्छा गाते हैं/ में क्रिया-विशेषण में रूपान्तर नहीं हो रहा है, यद्यपि संज्ञा बहुवचन में है।

विशेष्य के बहुवचन होने के साथ-साथ अकर्मक क्रियाओं के कर्त्तरि प्रयोग तथा सकर्मक क्रियाओं के कर्त्तरि अथवा कर्मणि प्रयोग होने पर पुल्लिग आकारान्त क्रिया विशेषण रूपान्तरित होते हैं। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि जब सकर्मक क्रिया में कर्म की विवक्षा नहीं होती तथा उसका प्रयोग अकर्मक क्रिया की भाँति होता है तो क्रिया-विशेषण रूपान्तरित नहीं होते हैं।[1]

३.२.५.२ पुर्नविचार

इन रूपान्तरित या विभक्ति युक्त क्रिया-विशेषणों को प्रातिपदिकों के साथ वाक्य विन्यासीय स्तर पर प्रतिबंधित किया जा सकता है। विशेषण /अच्छा ∞ अच्छे/ की भाँति /टेढा ∞ टेढ़े/ की स्थिति भी है। इनका विवेचन इस प्रकार किया जा सकता है कि /अच्छा, टेढा, तिर्छा, सीधा, कैसा, जैसा, ऐसा, इत्ना, उत्ना, जित्ना,

---

१. मिलाइए :

(क) "..जब सकर्मक क्रिया में कर्म की विवक्षा नहीं रहती तब उसका प्रयोग अकर्मक क्रिया के समान होता है, और प्रकृत क्रिया-विशेषण कर्ता के साथ अन्वित न होकर सदैव पुल्लिग एकवचन (अविकृत) रूप में रहता है जैसे, 'मैं' इतना पुकारती हूँ।', 'लड़की अच्छा गाती है।', 'वे तिरछा लिखते हैं।', 'इसी डर से वह थोड़ा बोलते हैं।'

—कामताप्रसाद गुरु—'हिन्दी व्याकरण', पृष्ठ ३२६

(ख) "सकर्मक क्रियाओं के प्रयोग कभी कर्म के साथ होते हैं, कभी कर्म को साथ लिए बिना भी। 'लड़की अच्छी पढ़ती है', लड़के अच्छा गाते हैं' आदि में सकर्मक क्रियाओं के अकर्मक प्रयोग हैं।...यदि क्रिया का फल— विशिष्ट क्रिया का फल—कर्म पर पड़ता हो, तो क्रिया-विशेषण कर्म के अनुसार ही रूप ग्रहण करेगा—लिंग वचनादि कर्म के ही अनुसार चलेंगे...।"

—पं० किशोरीदास वाजपेयी—'हिन्दी शब्दानुशासन', पृ० ३२१

कित्ना/ जैसे आकारान्त क्रिया-विशेषण जब बहुवचन संज्ञा (कर्ता) रूपों के साथ आते हैं तथा जब अकर्मक क्रियाओं का कर्त्तरि एवं सकर्मक क्रियाओं का कर्त्तरि या कर्मणि रूप में प्रयोग होता है तो ये क्रमशः /अच्छे, टेढे, तिर्छे, सीधे, कैसे, जैसे, ऐसे; इत्ने, उत्ने; जित्ने, कित्ने/ जैसे रूपों में परिणत हो जाते हैं।

/अच्छा ∞ अच्छे/ जैसे रूपों का वितरण सर्वत्र परिपूरकीय स्थिति का ही नहीं हैं, कुछ स्थितियों में ये मुक्त रूप से वितरित होते हैं। यह स्थिति सकर्मक क्रियाओं के भावे प्रयोग के समय की है।[1]

३.२.६ समुच्चय बोधक

३.२.६.० भूमिका :

यह कोटि क्रिया की विशेषता नहीं बतलाती, दो रूपग्रामिक संरचनाओं, वाक्यांशों अथवा उप-वाक्यों को जोड़ती है तथा इस कोटि में आने वाले शब्द रूपान्तरित नहीं होते हैं।[2] वाक्य विन्यासीय धरातल पर इन पर विशेष रूप से विचार किया जा सकता है क्योंकि वाक्यीय कार्यानुसार समुच्चय-बोधकों के दो वर्ग हैं :—

(१) समानाधिकरण

(२) व्यधिकरण[3]

यहाँ रूपग्रामिक दृष्टि से इनकी विवेचना की जाएगी। रूप की दृष्टि से समुच्चय-बोधकों को दो भागों में बाँटा जा सकता हैं :—

(१) क्रमिक रूप /और्, तथा, एवं, लेकिन्, अपितु, परन्तु, किन्तु/

(२) अक्रमिक यौगिक रूप : यथा—

जो – तो

चाहे – चाहे

---

१. "सकर्मक भावे प्रयोग में पूर्वोक्त क्रिया-विशेषण विकल्प से विकृत अथवा अविकृत रूप में आते हैं. . . ।"

—कामताप्रसाद गुरु—'हिन्दी व्याकरण', पृष्ठ ३२६ ।

२. विशेष अध्ययन के लिए देखिए—कामताप्रसाद गुरु-'हिन्दी व्याकरण', पृष्ठ १६६-१६८।

३. दे० (क) वही, पृष्ठ १८२।

(ख) ए बेसिक ग्रामर आफ माडर्न हिन्दी, पृष्ठ ११६।

३.२.६.१ क्रमिक रूप

(१) रूपग्रामिक संरचनाओं अथवा स्वतंत्र वाक्यों को जोड़ने वाले :
/और्, तो, तथा, एवं, व, वरन्/ इत्यादि=संयोजक
/या, अथ्वा, वा, कि/ इत्यादि=विभाजक

(२) स्वतंत्र वाक्यों को जोड़ने वाले :
/लेकिन्, मगर्, पर्, परन्तु, किन्तु, नाकि, अन्यथा, अपितु, बल्कि, वर्ना, बस्/ इत्यादि=विरोधार्थक
/इस्लिए, अत्एव्, सो, अतः/ इत्यादि=स्पष्टीकरणार्थक

(३) आश्रित वाक्यों को जोड़ने वाले :
/अर्थात्, जो, कि, यानी, मानों जैसे/
इत्यादि=विषय वाचकार्थक

/क्योंकि, चूंकि, इसलिए/ इत्यादि=कारण वाचक
/ताकि, इस्लिए, जिस्से, जिस्में/ इत्यादि=आश्रयार्थक

३.२.६.२ अक्रमिक यौगिक रूप

इस वर्ग के समुच्चय बोधक केवल वाक्यों को ही जोड़ते हैं। इनके रूप की दृष्टि से दो भेद हैं :—

(१) पुनर्घटित क्रम :

यथा :— चाहे — चाहे
क्या — क्या

(२) खंडित क्रम :

जव् — तव्
ज्योंहीं — त्योंहीं
चूंकि — इस्लिए

३.२.६.२.१ पुनर्घटित क्रम :

पुनर्घटित क्रम समुच्चय बोधक विभाजक बोधक होते हैं :—

या — या
चाहे — चाहे
क्या — क्या
न — न

३.२.६.२.२ खंडित क्रम :

(अ) चूंकि — इस्लिए
इस्लिए — कि

इस प्रकार के समुच्चय बोधक कारक वाचक होते हैं।

(आ) अगर् — तो
यदि — तो
कहीं — तो

इस प्रकार के समुच्चय बोधक संकेतार्थक हैं तथा भविष्यत एवं अपूर्ण संकेतार्थ प्रकार की क्रिया रूपग्रामिक संरचना से युक्त वाक्यों में इनका प्रयोग अधिक होता है। अक्रमिक यौगिक रूप के पूर्ववर्ती समीपी संघटक से आरम्भ होने वाले वाक्य की क्रिया सम्भवनार्थक होती है तो प्रायः पश्चात् समीपी संघटक से आरम्भ होने वाले वाक्य की क्रिया भविष्यत परोक्ष काल द्योतक होती है।

(इ) जब् — तब्
जब् — उस् समय्

इस प्रकार के समुच्चय बोधक समय वाचक हैं।

(ई) जहाँ — वहाँ
जहाँ से — वहाँ से

इस प्रकार के समुच्चय बोधक स्थानवाचक हैं।

(उ) ज्यों ही — त्यों ही
जैसे ही — वैसे ही
ज्यों ज्यों — त्यों त्यों

इस प्रकार के समुच्चय बोधक रीतिवाचक हैं। ये जिन वाक्यों को जोड़ते हैं, उनकी क्रिया-संरचना के काल एवं अर्थ समान होते हैं।

(ऊ) यद्यपि — तथापि
चाहे — परन्तु

इस प्रकार के समुच्चय बोधक विरोधवाचक हैं।

३.२.७ परसर्ग

३.२.७.० भूमिका

परसर्ग कोटि के सम्बन्ध में वाक्यीय दृष्टि से विचार किया जा सकता है। ये आबद्ध रूप हैं; इस कारण इनका मुक्त रूप में कभी प्रयोग नहीं होता है। ये संज्ञा

के विकारी कारक रूपों एवं सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् उनमें जुड़कर उनका वाक्य के किसी दूसरे शब्द से सम्बन्ध व्यक्त करते हैं।

हिन्दी में /ने, को, से/ इत्यादि चिह्नों को, जो संज्ञा आदि के पश्चात् जुड़कर उनका सम्बन्ध वाक्य के किसी दूसरे शब्द के साथ व्यक्त करते हैं, परसर्ग के नाम से अभिहित किया जाता है। संस्कृत में संज्ञा शब्द का वाक्य के किसी दूसरे शब्द से सम्बन्ध द्योतित करने वाले रूप की सिद्धि 'विभक्तियों' द्वारा होती थी। इन सम्बन्ध द्योतक विभक्तियों को संस्कृत व्याकरणों में 'कारक' कहा गया है। हिन्दी में विभक्ति के धरातल पर किसी भी संज्ञा शब्द के प्रत्येक वचन में अधिकतम तीन रूप मिलते हैं। उनका उन रूपों से वाक्य के अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध द्योतित नहीं होता है। हिन्दी में यह कार्य विभक्तिमय रूप के पश्चात् जुड़ने वाले /ने, को, से/ आदि परसर्ग करते हैं।

कुछ विद्वानों ने /ने, से, को/ इत्यादि को परसर्ग के नाम से अभिहित करने की आलोचना की है। उदाहरणार्थ, पं० किशोरीदास वाजपेयी ने 'परसर्ग की नई बला' शीर्षक से आलोचना करते हुए लिखा है :—

"परसर्ग नया शब्द गढ़ा गया है, चलाया जा रहा है। को, ने, रे, के, से, मैं आदि संज्ञा विभक्तियों को ये लोग 'परसर्ग' कहते हैं। पूछो, यह नया नाम क्यों? 'विभक्ति' नाम क्यों बुरा? तो, कहते हैं कि ये 'को' 'ने' आदि प्रकृति से हटा कर लिखे जाते हैं, सटाकर नहीं, इसलिए 'विभक्ति' नहीं और इसी लिए 'परसर्ग' हैं। परन्तु 'तेरे गौएँ हैं', 'अपने एक लड़की है' आदि में तो 'रे' 'ने' विभक्तियाँ सटकर हैं। इन्हें क्या कहोगे? और, बहुत से लोग तो 'को' आदि को भी सटा कर ही लिखते हैं। बहुत से ऐसे हैं, जो हटाकर लिखते हैं; परं सर्वनामों में सटाकर ही लिखते हैं—'राम को फल' 'इसको मधु'। यहाँ एक 'को' परसर्ग है और दूसरा 'विभक्ति' क्या लाभ? यह क्यों नहीं कह देते कि हिन्दी में विभक्तियाँ प्रकृति से हटाकर लिखी जाती हैं, कोई कोई सटाकर भी लिखते हैं। संस्कृत में विभक्तियाँ सटाकर ही लिखी जाती हैं तो लिखी जाएँ। हिन्दी तो एक स्वतंत्र भाषा है। कोई विभक्ति सटाकर भी लिखी जाती है, हटाकर भी लिखी जाती हैं। 'परसर्ग' नाम रखने का कोई कारण तो नहीं नजर आया।"[1]

हिन्दी के स्वतंत्र भाषा होने के कारण ही /ने, के, से/ आदि सम्बन्ध द्योतक रूपों को 'कारक' के नाम से न पुकार कर 'परसर्ग' के नाम से पुकारते हैं। इसीलिए

---

१. पं० किशोरीदास वाजपेयी : 'हिन्दी शब्दानुशासन', पृष्ठ २६२।

संस्कृत के अनुरूप हिन्दी में भी आठ कारक मानने वालों की आलोचना करते हुए गार्डन एच्० फैयर वैंक ने लिखा है—

"...एक रूप जो कि हिंदी की वाक्य-रचना में संस्कृत के विशिष्ट कारक के रूप में प्रयुक्त होता है, हिन्दी का वही विशिष्ट कारक कहा जाता है। यह सिद्धान्त हिन्दी में अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है। पहले एक ही रूप दो भिन्न कारकों के सन्दर्भ में आता है, जैसे 'लड़के को' सम्प्रदान और कर्म दोनों कहा जाता है। दूसरे दो भिन्न रूपों को एक ही कारक कहा जाता है, यथा—'लड़का' और 'लड़के' दोनों कर्ता कहे जाते हैं। तीसरे 'घर में' और 'घर तक' दो रूपों में ये दोनों रचना में एकरूप हैं, प्रथम को 'कारक' कहा जाता है तथा द्वितीय को 'उपसर्गात्मक प्रत्यानुगामी संज्ञा' कहा जाता है।[1]

वस्तुतः /को, ने/ आदि केवल इसी कारण परसर्ग नहीं हैं क्योंकि 'ये प्रकृति से हटाकर लिखे जाते हैं, सटाकर नहीं', न ऐसा ही है कि /को, ने/ आदि परसर्ग हैं, एवं /अपने, तेरे/ में प्रयुक्त /ने, रे/ आदि विभक्तियाँ हैं। 'राम् को फल्' में जो कार्य 'को' कर रहा है, 'इसको फल्' में भी वही कार्य 'इसको' का 'को' कर रहा है। इसी प्रकार 'राम् के एक् लड़का' में 'के' जो कार्य कर रहा है, वही कार्य 'तेरे एक् लड़का' में 'रे' कर रहा है। 'राम् को' एवं 'राम् के' में संज्ञा एवं 'को' 'के' के मध्य अल्प-विवृत्ति /+/ है अर्थात् /को/ 'प्रकृति से हटकर' हैं, तथा 'इसको' एवं 'तेरे' में सर्वनाम रूपों एवं 'को' तथा 'रे' के मध्य अल्प विवृत्ति /+/ नहीं है अर्थात् वे 'प्रकृति से सट-कर' हैं। इतना होने पर भी /को/ एवं /को, रे/ अलग-अलग कोटियों का निर्माण नहीं करते हैं, ये एक ही कोटि के निर्माता हैं। इस कारण /ने, को, से/ केवल इस कारण परसर्ग नहीं हैं क्योंकि 'ये प्रकृति से हटकर लिखे जाते हैं'।

/ने, को, से, रे/ सभी रूप इस कारण परसर्ग हैं, क्योंकि ये विभक्तियाँ नहीं हैं। जिन रूपों में ये जुड़ते हैं, वे विभक्तिमय होते हैं, अर्थात् इनके जुड़ने के पूर्व ही रूपा-न्तरित हो चुके रहते हैं। विभक्तियाँ किसी कोटि के रूपों का निर्माण करती हैं, किन्तु परसर्ग विभिन्न कोटियों के रूपों के पश्चात् प्रयुक्त होते हैं। यदि हम /ने, से, को/ युक्त रूप को अकेला कारक रूप समझते हैं एवं इन्हें संज्ञा कारक विभक्ति युक्त रूप मानते हैं तो इसका अर्थ यह होगा कि /ने, से, को/ जिन रूपों में भी संहित होंगे, वे समस्त रूप 'संज्ञा कोटि' के ही होंगे क्योंकि रूपग्रामिक दृष्टि से समान विभक्ति से युक्त रूप एक कोटि का निर्माण करते हैं। इस दृष्टि से /इसका, यहाँ का, वहाँ का/

---

१. 'हिन्दी में कारक': 'हिन्दी अनुशीलन' (धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक) पृष्ठ ७८।

आदि रूप सम्बन्ध कारक संज्ञा रूप तथा /इस्, यहाँ, वहाँ/ आदि संज्ञा रूप होंगे। इसके अतिरिक्त किसी विशिष्ट रूपतालिका में प्रयुक्त किसी कोटि के रूप से उसकी द्योतक विभक्ति को अलग करके, उसे वाक्य में उसी रूपतालिका में प्रयुक्त नहीं कर सकते हैं किन्तु जिन रूपों के आगे परसर्ग जुड़ते हैं वे उन रूपों से पृथक् किए जा सकते हैं।

उपर्युक्त कारणों से /ने, से, को, रे/ आदि 'परसर्गकोटि' का निर्माण करते हैं। इनका कार्य यह होता है कि ये अपने पूर्ववर्ती शब्द का वाक्य में किसी अन्य शब्द से किसी प्रकार का सम्बन्ध व्यक्त करते हैं।

ये अपने पूर्ववर्ती शब्द का वाक्य में किस कोटि के शब्द से सम्बन्ध व्यक्त करते हैं इस आधार पर परसर्गों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है :—

(क) वे परसर्ग जो अपने पूर्ववर्ती शब्द का क्रिया के साथ सम्बन्ध व्यक्त करते हैं :—

{ने} {के} {को} {क्} इत्यादि

(ख) वे परसर्ग जो अपने पूर्ववर्ती शब्द का क्रिया अथवा अन्य किसी रूप-तालिका के शब्द से अपना सम्बन्ध व्यक्त करते हैं :—

{पर्} {भर्} {में} {से}

(ग) वे परसर्ग जो अपने पूर्ववर्ती शब्द का पश्चात् शब्द (संज्ञा) से सम्बन्ध व्यक्त करते हैं :—

{का∞के, रा∞रे, ना∞ने}

{की नी री} इत्यादि।

हिन्दी में परसर्ग अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि एक परसर्ग केवल कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण इत्यादि में से केवल किसी एक कारक का सम्बन्ध व्यक्त करें। इस दृष्टि से केवल {ने} परसर्ग ऐसा है जो अपने पूर्ववर्ती शब्द का क्रिया से केवल कर्तृपरक सम्बन्ध व्यक्त करता है। किन्तु कर्तृपरक सम्बन्ध केवल {ने} ही व्यक्त नहीं करता, {को}, {से}, {रा, रे, ना, ने; का, के} परसर्ग भी व्यक्त करते हैं। एक ही परसर्ग अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है। उदाहरणार्थ—

१. देखिए—पं० किशोरीदास बाजपेयी—'हिन्दी शब्दानुशासन', पृष्ठ १२६-१२७।

{से} कर्ता, कर्म, करण, अपादान इत्यादि अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है।[1] इस प्रकार परसर्गों का विवेचन कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण इत्यादि सम्बन्ध प्रकारों में बाँटकर नहीं किया जा सकता। एक परसर्ग कितने प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है, इसका विवेचन भी यहाँ प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है, क्योंकि यह वाक्य विन्यासीय अध्ययन का विषय है। यहाँ केवल परसर्गों का रूपग्रामिक अध्ययन प्रस्तुत करना अभीष्ट है। इनको दो मुख्य वर्गों में विभाजित किया जा सकता है:—

(१) रूपान्तर रहित

(२) रूपान्तर सहित

३.२.७.१ रूपान्तर रहित परसर्ग

सर्वप्रथम रूपान्तर रहित परसर्गों का विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है:—

{–ने} —यह संज्ञा के विकारी रूपों एवं {मैं–} {हम्–} {तू–} {तुम्–} {इस्–} {इन्हों–} {उस्–} {उन्हों} {किस्–} {किन्हों} {किसी} {किन्ही} {जिस्} {जिन्हों} सर्वनाम रूपों के बाद आता है।

संज्ञा के विकारी रूपों के पश्चात् अल्पविवृत्ति सहित /+/ स्थिति में तथा सर्वनामों के पश्चात् प्रायः अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में इसका उच्चारण होता है।

यह अपने पूर्ववर्ती रूप का क्रिया से कर्ता का सम्बन्ध व्यक्त करता है। इस सम्बन्ध को व्यक्त करने के लिए इस परसर्ग का प्रयोग प्रतिबंधित रूप में ही होता है:—

(अ) जब वाक्य में भूतकाल की क्रिया सकर्मक होती है (ला, भूल्, समझ्, बक्, बोल्, लड़्, डर्, मिल्, जान् इत्यादि क्रिया रूपों के अतिरिक्त) तो संज्ञा तथा सर्वनामों के पश्चात् इसका प्रयोग होता है।

(आ) भूतकाल में अकर्मक क्रियाएँ प्रेरणा रूप में जब सकर्मक की भांति प्रयुक्त होती हैं तो उस स्थिति में /ने/ का प्रयोग होता है।

(इ) /छींक्, खाँस्, नहा/ इत्यादि कुछ अकर्मक क्रियाएं जब भूतकाल में प्रयुक्त होती हैं तो उनमें /ने/ का प्रयोग होता है।

{को} – यह संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् प्रयुक्त होता है तथा जिस रूप में यह जुड़ता है, उसका वाक्य की क्रिया

---

१. दे०–पं० किशोरीदास बाजपेयी––'हिन्दी शब्दानुशासन', पृष्ठ १२६-१२७।

से कर्तृ, कर्म, अधिकरण इत्यादि अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है।[१] इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{–ए} / मुझ्–, तुझ्–, इस्–, उस्–, जिस्–, किस्– / के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में। यथा :—

मुझ् – + – ए > मुझे

{एँ} / हम्– / के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में :—

हम् – + – एँ > हमें

{–हें} / तुम्–, इन्–, उन्–, जिन्–, किन्– / के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में। यथा :—

तुम् – + – हें > तुम्हें

{को} संज्ञा के विकारी रूपों; सर्वनामों तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् अल्पविवृत्ति सहित स्थिति में :—

राम् – + – को > राम् को
मुझ् – + – को > मुझ् को
हम् – + – को > हम् को
तुम् – + – को > तुम् को

{–को} सहरूपग्राम {को} के अन्य सहरूपग्रामों अर्थात् {–ए}, {–एँ} एवं {हें} के साथ मुक्त वितरण में वितरित है।

{के} – यह संज्ञा तथा सर्वनाम के पश्चात् प्रयुक्त होता है तथा यह पूर्व पद का वाक्य की क्रिया से सम्बन्ध द्योतित करता है। इसके निम्नलिखित सहरूपग्राम हैं :—

{–रे} / मे–, हमा–, ते–, तुम्हा– / के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में। यथा :—

मे – + – रे > मेरे

---

१. विशेष अध्ययन के लिए द्रष्टव्य—
(क) पं० किशोरीदास वाजपेयी : 'हिन्दी शब्दानुशासन', पृ० १२५-२६।
(ख) ए बेसिक ग्रामर आफ मार्डन हिन्दी, पृष्ठ ३०–३१।
(ग) डा० मुरारीलाल उत्प्रैति : – 'हिन्दी में प्रत्यय विचार', पृ० ३०७–३०८।

{–ने}१ /अप्–/ के पश्चात् अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में :—
अप् – + – ने > अप्ने

{–के} संज्ञा के विकारी रूपों तथा /इस्–, इन्–, उस्–, उन्–, किन्–, किन्ही–, जिस्–, जिन्–/ के पश्चात् अल्पविवृत्ति सहित स्थिति में। यथा :—

राम्	–	+	–	के	>	राम् के
इस्	–	+	–	के	>	इस् के
लड़्का	–	+	–	के	>	लड़्का के
लड़्के	–	+	–	के	>	लड़्के के
लड़्कों	–	+	–	के	>	लड़्कों के
लड़्की	–	+	–	के	>	लड़्की के
लड़्कियों	–	+	–	के	>	लड़्कियों के

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सम्बन्ध सूचक {के} अपने अर्थ, कार्य, वितरण एवं रूपग्रामिक संरचना में सम्बन्ध सूचक {का} एवं {की} से भिन्न है। अर्थात {के} के {के} {रे} {ने} तथा {का} के {का∞के} {रा∞रे} {ना∞ने} एवं {की} के {की} {री} {नी} में अन्तर है।

{का} एवं {की} के सहरूपग्रामों का विवेचन मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना के 'पर व्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक प्रकरण' के अन्तर्गत किया जा चुका है।

{के} का {का} एवं {की} से अन्तर

(१) {के} का प्रयोग पुल्लिंग या स्त्रीलिंग, एकवचन या बहुवचन, अविकारी या विकारी, प्रत्येक प्रकार के विशेष्यों के साथ होता है अर्थात् किसी भी लिंग, वचन, कारक की दृष्टि से रूपान्तरित विशेष्य के पूर्व {के} का प्रयोग होता है किन्तु {का} केवल पुल्लिंग विशेष्यों तथा {की} स्त्रीलिंग विशेष्यों के पूर्व ही प्रयुक्त होता है। उदाहरणार्थ :—

---

१. {के} का {ने} सहरूपग्राम सम्बन्ध द्योतक है तथा इसका प्रयोग अल्पविवृत्ति रहित स्थिति में केवल /अप्/ के पश्चात् होता है। यह {ने} से भिन्न है। {ने} कर्त्ता का चिह्न है तथा इसका प्रयोग /अप्–/ के अतिरिक्त अन्य संज्ञा के विकारी रूपों तथा सर्वनामों के पश्चात् होता है।

{के}	{का}	{की}
राम् के लड़्का हुआ है	राम् का लड़का जा रहा है	—
राम् के लड़की हुई है	—	राम् की लड़्की जा रही है
राम् के लड़कियाँ आयी हैं	—	राम् की लड़कियाँ आयी हैं
मेरे एक् लड़्का है	मेरा एक् लड़्का है	—
मेरे एक् लड़की है	—	मेरी एक् लड़्की है
मेरे दो लड़्कियाँ हैं	—	मेरी दो लड़्कियाँ हैं
तुम्हारे लड़कियाँ हैं	—	तुम्हारी लड़्कियाँ जा रही हैं
अप्ने एक् लड़का है	अप्ना लड़्का जा रहा है	—
अप्ने एक् लड़्की है	—	अप्नी लड़्की जा रही है
अप्नें चार् लड़कियाँ हैं	—	अप्नी लड़कियाँ जा रही हैं

(२) पुल्लिग कोटि के विशेष्य यदि बहुवचन में होते हैं तो {का} का संपरिवर्तक अर्थात् /के/ आता है, किन्तु {के} में कोई रूपान्तर नहीं होता है। उदाहरणार्थ :—

राम् के एक् लड़का हुआ है। यह राम् का लड़्का है।
राम् के लड़के हुए हैं। ये राम् के लड़के हैं।

(३) {के} के द्वारा अस्तित्व या उत्पत्ति का अर्थ द्योतित होता है किन्तु यदि भेद्य के सम्बन्ध में कुछ विशेष विधान करना हो तो {का} एवं {की} का प्रयोग होता है। अर्थात् {का} एवं {की} के द्वारा 'भेद्य' और 'भेदक' सम्बन्ध प्रकट होता है।

(४) {के} जिसके साथ जुड़ता है उसका क्रिया के साथ सम्बन्ध प्रकट करता है किन्तु {का} एवं {की} परवर्ती संज्ञा (विशेष्य) से विशेषता का सम्बन्ध व्यक्त करते हैं तथा वाक्यांश स्तर पर विशेषण वाक्यांश की रचना करते हैं। इस कारण {का} एवं {की}, परसर्गों की एक विशिष्ट कोटि के अन्तर्गत अन्तर्भूत होते हैं। इसी कारण इन्हें विशेषण का रूप माना जा सकता है। इनकी इसी विशेषता के कारण, व्लादीमीर मिल्तनेर ने इनकी एक अलग कोटि वनायी है।[1]

---

१. V. Miltner : 'The Complex Syntatical Analysis of Hindi' 'Indian Linguistics, Vol. 23, 1962, p. 83, Daccan College, Poona.

डा० फैयरबैंक्स ने 'हिन्दी में कारक' शीर्षक लेख में लिखा है कि—'मूल 'क' में उसकी पूरी रचना में विशेषण अर्थ घटित करने के लिए, विशेषण प्रति-चिह्नित रूप जोड़कर 'का' 'की' 'के' बनाये जाते हैं।"[1] 'ए बेसिक ग्रामर आफ माडर्न हिन्दी' में भी इन्हें विशेषण प्रकृति का कहा गया है।[2]

डा० अम्बाप्रसाद सुमन ने 'का' 'की' 'के' को 'परसर्गाभास विशेषणीय प्रत्यय' नाम दिया है।[3]

{–से} —यह संज्ञा सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् अल्प विवृत्ति सहित स्थिति में प्रयुक्त होता है तथा जिस पद में यह जुड़ता है, उसका वाक्य की क्रिया अथवा अन्य किसी शब्द से कर्ता, कर्म, करण, अपादान इत्यादि अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है।[4]

राम् – + – से > राम् से
मुझ् – + – से > मुझ् से
कब् – + – से > कब् से

{–में} —इसका संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् अल्प-विवृत्ति सहित स्थिति में प्रयोग होता है तथा जिस पद में यह जुड़ता है, उसका वाक्य की क्रिया अथवा अन्य किसी शब्द से अधिकरण तथा अन्य अनेक सम्बन्ध व्यक्त करता है :—

गाँव – + – में > गाँव् में
मुझ् – + – में > मुझ् में

---

१. गार्डन एच० फैयरबैंक—'हिन्दी में कारक'—हिन्दी अनुशीलन, पृष्ठ ८१, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक।

२. ए बेसिक ग्रामर आफ माडर्न हिन्दी, १०३, पृष्ठ ३५।

३. देखिए, डा० अम्बाप्रसाद सुमन—"हिन्दी भाषा के 'का', 'की', 'के'" 'हिन्दुस्तानी', पृष्ठ २९-४३, भाग २४, अंक ३, जुलाई-सितम्बर १९६२।

४. विशेष अध्ययन के लिए द्रष्टव्य—

(क) पं० किशोरीदास बाजपेयी—हिन्दी शब्दानुशासन, पृ० १२६-२७।

(ख) ए बेसिक ग्रामर आफ माडर्न हिन्दी, पृष्ठ ३२-३३।

(ग) डा० मुरारीलाल उप्रैति: 'हिन्दी में प्रत्यय विचार', पृ० ३१७-२०

{–पर्} –यह संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् अल्प विवृत्ति सहित स्थिति में प्रयुक्त होता है तथा जिस पद में यह जुड़ता है, उसका वाक्य की क्रिया अथवा अन्य किसी शब्द से अधिकरण तथा अन्य अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करता है। {–में} तथा {–पर्} दोनों ही अधिकरण तथा अन्य अनेक प्रकार के सम्बन्ध व्यक्त करते हैं। दोनों में यह अन्तर है कि {में} से किसी वस्तु के 'भीतर' एवं {–पर्} से किसी वस्तु के 'ऊपर' का अर्थ द्योतित होता है। यथा:—

'सन्दूक् में' का अर्थ 'सन्दूक् के अन्दर' तथा 'सन्दूक् पर' का अर्थ 'सन्दूक् के ऊपर' है।

{–पर्} के कुछ उदाहरण इस प्रकार प्रस्तुत किए जा सकते हैं:—

मेज् – + – पर् > मेज् पर्
मुझ् – + – पर् > मुझ् पर्

{–तक्} –यह संज्ञा, सर्वनाम तथा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् अल्प-विवृत्ति सहित स्थिति में प्रयुक्त होता है तथा यह वाक्य की क्रिया से पूर्व पद का सम्बन्ध द्योतित करता है:—

गाँव् – + – तक् > गाँव् तक्
मुझ् – + – तक् > मुझ् तक्
वहाँ – + – तक् > वहाँ तक्

{–भर्} –यह संज्ञा रूपों के पश्चात् अल्पविवृत्ति सहित स्थिति में प्रयुक्त होता है।

गज् – + – भर् > गज् भर्
रात् – + – भर् > रात् भर्

यह पूर्व संज्ञा का परवर्ती संज्ञा से अथवा वाक्य की क्रिया से सम्बन्ध व्यक्त करता है।

{क्/ई} –यह संज्ञा के विकारी रूपों अथवा सर्वनामों के पश्चात् उसी स्थिति में जुड़ता है, जब पश्चात संज्ञारूप स्त्रीलिंग होता है। यह पूर्व संज्ञा अथवा सर्वनाम का परवर्ती संज्ञा से सम्बन्ध व्यक्त करता है।

{की} के तीन रूपग्रामिक संपरिवर्तक हैं जिनका वितरण 'मूल व्युत्पन्न प्रातिपदिक संरचना' के परव्युत्पादक प्रत्यय वाला क्रमक समीपी संघटक युक्त मूल व्युत्पादक' प्रकरण के अन्तर्गत दिया जा चुका है। उदाहरणार्थ :—

मे	–	+	–	री	>	मेरी
ते	–	+	–	री	>	तेरी
हमा	–	+	–	री	>	हमारी
तुम्हा	–	+	–	री	>	तुम्हारी
अप्	–	+	–	नी	>	अप्नी
इस्	–	+	–	की	>	इस्की
राम्	–	+	–	की	>	राम् की

{वाल्—ई}—यह संज्ञा, सर्वनाम एवं क्रिया-विशेषणों के पश्चात् उसी स्थिति में जुड़ता है जब पश्चात् संज्ञा शब्द स्त्रीलिंग होता है। यह जिस संज्ञा; सर्वनाम अथवा क्रिया-विशेषणों के पश्चात् जुड़ता है उनका परवर्ती संज्ञा से सम्बन्ध व्यक्त करता है।

कभी कभी वाक्य में परवर्ती संज्ञा रूप का पूर्ण अध्याहार रहता है। उसी स्थिति में, इसमें अध्यहृत परवर्ती संज्ञा पद की विभक्तियाँ लगती हैं। इस स्थिति को परसर्ग की स्थिति नहीं मानी जा सकती। यथा :—/ नाचने वालियों को बुला लाओ / इसके परसर्ग के कुछ उदाहरण इस प्रकार प्रस्तुत किए जा सकते हैं :—

सन्दूक्	–	+	–	वाली	>	सन्दूक् वाली
वहाँ	–	+	–	वाली	>	वहाँ वाली
आज्	–	+	–	वाली	>	आज् वाली

{सी} —यह संज्ञा, सर्वनाम एवं क्रिया-विशेषणों के पश्चात् उसी स्थिति में जुड़ता है जब पश्चात् संज्ञा रूप (विशेष्य) स्त्रीलिंग होता है।

फूलों	–	+	–	सी	>	फूलों सी
मुझ्	–	+	–	सी	>	मुझ् सी
यहाँ	–	+	–	सी	>	यहाँ की सी[1]

१. क्रिया-विशेषणों के पश्चात् {सी} परसर्ग की यौगिक प्रक्रिया में क्रिया-विशेषणों एवं परसर्ग {सी} के मध्य {की} परसर्ग अवश्य आता है।

३.२.७.२ रूपान्तर सहित

इसमें {का} {वाला} {सा} आकारान्त परसर्ग आते हैं। {का} संज्ञा के विकारी रूपों अथवा सर्वनामों के पश्चात् तथा {वाला} एवं {सा} संज्ञा, सर्वनाम एवं क्रिया-विशेषणों के पश्चात् जुड़कर उनका परवर्ती संज्ञा पद के साथ अनेक प्रकार के सम्वन्ध व्यक्त करते हैं। {का}, {वाला}, {सा} के बाद वाला संज्ञा रूप (विशेष्य) पुंल्लिग एकवचन अविकारी कारक ही होता है। ये परवर्ती संज्ञा की पूर्ववर्ती पद के साथ जुड़कर विशेषता वतलाते हैं।

जब वाक्य में परवर्ती संज्ञा पद का पूर्ण अध्याहार हो जाता है तो {वाला} परसर्ग में अध्यहृत परवर्ती संज्ञा रूप की विभक्तियाँ लगती हैं।

जव विशेष्य अविकारी कारक एकवचन पुंल्लिग रूप में होता है तो आकारान्त {का} {वाला} {सा} परसर्ग विना किसी विभक्ति प्रत्यय के प्रयुक्त होते हैं। जव विशेष्य पुंल्लिग वहुवचन में होते हैं तो इन परसर्गों में {–ए} विभक्ति पर-प्रत्यय जुड़ता है तथा आकारान्त परसर्ग अपने लघुरूप में आते हैं। इस प्रकार इन रूपान्तर सहित परसर्गों की धारा रूपान्तर सहित विशेषणों की भाँति ही चलती है। यथा :—

विभक्ति रहित

का	मे	–	+	–	{रा}	>	मेरा
	ते	–	+	–	{रा}	>	तेरा
	अप्	–	+	–	{ना}	>	अप्ना
	इस्	–	+	–	{का}	>	इस्का
	उस्	–	+	–	{का}	>	उस्का
	राम्	–	+	–	{का}	>	राम् का
वाला	सन्दूक्	–	+	–	वाला	>	सन्दूक् वाला
	कहाँ	–	+	–	वाला	>	कहाँ वाला
	आज्	–	+	–	वाला	>	आज् वाला
सा	फूलों	–	+	–	सा	>	फूलों सा
	मुझ्	–	+	–	सा	>	मुझ् सा
	इधर्	–	+	–	सा	>	इधर् का सा[1]

---

१. क्रिया-विशेषणों के पश्चात् {सा} तभी आता है जब क्रिया-विशेषणों के बाद {का} आ चुका होता है।

विभक्ति सहित

उदाहरण :—

मेरा	–	+	–	ए	>	मेरे
तेरा	–	+	–	ए	>	तेरे
अप्ना	–	+	–	ए	>	अप्ने
उस्का	–	+	–	ए	>	उस्के
राम् का	–	+	–	ए	>	राम् के
सन्दूक् वाला	–	+	–	ए	>	सन्दूक् वाले
फूलों सा	–	+	–	ए	>	फूलों से

विशेषणों की ही भाँति इन विभक्ति युक्त परसर्गों को विभक्ति रहित परसर्गों के साथ वाक्यविन्यासीय स्तर पर प्रतिवंधित किया जा सकता है। जव विशेष्य पुंल्लिग अविकारी वहुवचन, पुंल्लिग विकारी एकवचन, पुंल्लिग वि० वहुवचन में होता है तो / मेरा / जैसे रूप / मेरे / में परिणत हो जाते हैं।

३.२.८ निपात

निपात वे आवद्ध अंश हैं जिनके योग से शव्दों या वाक्यों के मूल अर्थ में वल; अथवा वैशिष्ट्य का भाव आता है। साधारणतः इनका योग प्रत्येक कोटि की रूपग्रामिक संरचनाओं के पश्चात् होता है। निपात विभक्तिमय प्रातिपदिक के बाद ही प्रयुक्त होते हैं, इस कारण ये व्युत्पादक प्रत्यय नहीं हैं। वाक्य संरचना में निपात अतिरिक्त अंश एवं अर्थ के रूप में प्रयुक्त होते हैं। यदि इन निपातों को वाक्य से अलग भी कर दिया जाए तो संरचना में परिवर्तन नहीं आता है। निपातों को उदाहरणार्थ इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :—

(क) समेतार्थक निपात

{भी} पत्थर् भी वोल् उठ्ते हैं।
उस्के भी लिए

{तक्} यहाँ तक्
बाग् तक
देखा तक्

{न} इसका प्रयोग प्रतिबंधित रूप में अनिश्चय वाचक सर्वनामों तथा क्रिया-विशेषणों की पुनरुक्तियों से निर्मित समास रचना में होता है। यथा:—

कुछ्-न-कुछ्
कहीं न कहीं

(ख) केवलार्थक

{ही} पानी ही सही
मैं ही

यह्	−	+	−	ही	>	यही
अब्	−	+	−	ही	>	अभी
ज्यों	−	+	−	ही	>	ज्योंही

कहीं कहीं वाक्यों में {ही} का प्रयोग निपात के रूप में नहीं होता है यथा:—

/दिन् होते ही खेत् पर पहुँच् गया/

{मात्र} भाषा मात्र
एक् मात्र

{भर्} राज्य भर्
इत्ना भर्

(ग) बलार्थक

{तो} परीक्षा तो देनी है
मैं तो जाऊँगा
खिलाओ तो
तो भी वह् आएगा

(घ) आदरार्थक

{जी} रमेश जी
बाबू जी
गुरुजी

(ङ) विशिष्टार्थक

{को} वह बनारस् को गया है

संकेत चिह्न

जिन संकेतों को विशिष्ट प्रकरणों में प्रयुक्त किया गया है, वहाँ उनके अथ दे दिए गए हैं। नीचे सम्पूर्ण शोध-प्रबंध में प्रयुक्त संकेत चिह्नों के अर्थ दिए जा रहे हैं :—

C = कोई भी व्यंजन

V = कोई भी स्वर

$\bar{V}$ = दीर्घ स्वर

V̑ = अनाक्षरिक स्वर। ० किसी स्वर के नीचे ‿ चिह्न का अर्थ है कि वह स्वर अनाक्षरिक है।

् = किसी व्यंजन के नीचे इसका अर्थ 'हलन्त' है। क्=हलन्त 'क'

ँ = अनुनासिकता चिह्न

[ ] = ध्वन्यात्मक प्रतिलेखन का द्योतक, सहस्वन कोष्ठक

/ / = ध्वनिग्रामिक प्रतिलेखन का द्योतक; ध्वनिग्रामिक कोष्ठक

[ ] = सहरूपग्राम द्योतक; सहरूपग्रामिक कोष्ठक

{ } = रूपग्रामिक प्रतिलेखन द्योतक; रूपग्रामिक कोष्ठक

{/ /} = रूपग्राम अथवा रूपग्राम के सहरूपग्रामों को ध्वनिग्रामिक प्रतिलेखन में लिखने का चिह्न

> = १. वनना/होना (ध्वनिस्तर पर)
= २. व्युत्पन्न रूप (शब्द स्तर पर)

/ओ/>/उ/ = 'ओ' स्वर 'उ' स्वर में वदल जाता है।

>दुर्गुन (दुर्गुण)
>दुर्गुन=दुर्गुण
>दुर्गुन=(दुर्गुण)
} = व्युत्पन्न रूप चिह्न के पश्चात् वाला शब्द ध्वनिग्रामिक प्रतिलेखन में तथा उसके पश्चात् कोष्ठक ( ) में अथवा=पश्चात् अथवा=पश्चात् कोष्ठक में शब्द परम्परागत प्रतिलेखन में

— =विभाजक संकेत। किसी तत्त्व के पूर्व लगने से उस तत्त्व का किसी अन्य तत्त्व के पश्चात् जुड़ने का तथा किसी तत्त्व के पश्चात् लगने से उस तत्त्व का किसी अन्य तत्त्व के पूर्व जुड़ने का द्योतक।

—आ=आ परप्रत्यय। आ— =आ पूर्व प्रत्यय

~ = मुक्त वितरण की स्थिति का द्योतक

∞ = रूपग्राम के संपरिवर्तक का द्योतक

ϕ = शून्य

+ = धन चिह्न

= = अर्थात् द्योतक

→ = अर्थात् द्योतक

( ) = १. यदि कोष्ठक में एक या एकाधिक वर्ण हों तो इसका अर्थ है—ऐच्छिक वरण अर्थात् (क) का अर्थ 'क' की उपस्थिति ऐच्छिक है।

२. यदि इसके पूर्व शब्द लिखा हो तथा उसी शब्द को तत्पश्चात् कोष्ठक में लिखा जावे तो इसका अर्थ है—शब्द के परम्परागत प्रतिलेखन का द्योतक

३. यदि कोष्ठक में वाक्य हो तो इसका अर्थ है—सामान्य कोष्ठक

$\left\{ \begin{matrix} \text{क} \\ \text{ख} \end{matrix} \right\}$ अथवा {क, ख} = संरचना में क, ख का एकान्तर प्रतिस्थापन

( ) एवं { } दोनों की व्याख्या

1. $\left[A \left\{ \begin{matrix} B \\ C \end{matrix} \right\} (D) \right] =$

१. A B

२. A C

३. A B D

४. A C D

2. $\left\{ \text{सं०} + \left\{ \begin{matrix} \text{सं०} \\ \text{वि०} \end{matrix} (\text{वि}) \right\} (\text{क्रि}) \right\} =$

१. संज्ञा + संज्ञा

२. संज्ञा + विशेषण

३. संज्ञा + संज्ञा + विशेषण

४. संज्ञा + संज्ञा + क्रिया

५. संज्ञा + संज्ञा + विशेषण + क्रिया

६. संज्ञा + विशेषण + क्रिया

संक्षिप्त संकेत

अ०	= अव्यय	पू० प्र०	= पूर्वप्रत्यय
अ० को०	= अव्यय कोटि	पूर्व प्र०	= ,,
अ० पु०	= अन्य पुरुष	प्र०	= प्रत्यय
अक०	= अकर्मक	प्रा०	= प्रातिपदिक
उदा०	= उदाहरण	प्रे०	= प्रेरणार्थक
उ० पु०	= उत्तम पुरुष	व० व०	= वहुवचन
ए० व०	= एकवचन	वहु व०	= वहुवचन
एक व०	= ,,	भूत० कृ०	= भूतकालिक कृदन्त
कर्तृ०	= कर्तृवाचक	भूत० कृद०	= ,,
कृ०	= कृदन्त	म० पु०	= मध्यम पुरुष
कृद०	= ,,	वर्त० कृ०	= वर्तमानकालिक कृदन्त
को०	= कोटि	वर्त० कृद०	= ,,
क्र० सं०	= क्रम संख्या	वि०	= विशेषण
क्रि०	= क्रिया	विशे०	= ,,
क्रि० सं०	= क्रियार्थक संज्ञा	विभ०	= विभक्ति
क्रि० वि०	= क्रिया-विशेषण	व्यं०	= व्यंजन
क्रि० विशे०	= ,,	व्यु० परप्रत्यय	= व्युत्पादक परप्रत्यय
क्रि० वि० प्रा०	= क्रिया-विशेषण प्रातिपदिक	व्यु० प्र०	= व्युत्पादक प्रत्यय
		व्यु० प्रत्यय	= ,,
दे०	= देखिये	व्यु० पू० प्र०	= व्युत्पादक पूर्व प्रत्यय
धा०	— धातु	व्यु० पूर्व० प्र०	= ,,
निषेध०	= निषेधवाचक	व्यु० प्रा०	= व्युत्पन्न प्रातिपदिक
पर०	= परसर्ग	व्यु० प्रातिपदिक	= ,,
पर प्र०	= परप्रत्यय	व्यु० वि०	= व्युत्पादक विभक्ति
पु०	= पुल्लिग	व्यु० विभ०	= ,,
पू०	= पूर्व	स०	= सहायक
पूर्व०	= पूर्वकालिक	सक०	= सकर्मक

सं०	= संज्ञा	सर्व०	= सर्वनाम
सं०	= दे० क्रम सं० (क्रम संख्या)	स० क्रि०	= सहायक क्रिया
		सा०	= सामासिक
संख्या०	= संख्यावाचक	सार्व०	= सार्वनामिक
समुच्चय०	= समुच्चयवोधक	स्व०	= स्वर
समु० बो०	= समुच्चयवोधक	हि०	= हिन्दी

SELECTED BIBLIOGRAPHY

Bloch, B. & Trager G. L. : *Outline of Linguistic Analysis, New Haven* (1942).

Bloomfield, Leonard : *Language*, Motilal Banarsi Das Delhi, (1963).

Ebeling, Carl, L. : *Linguistic Units*, Mouton and Co., The Hague (1960).

Gleason, H. A. : *An introduction to Descriptive Linguistics* (Revised Edition), New York (1962).

Hockett, C. F. : *A Course in Modern Linguistics*, New York (1958).

Martinet, A. : 'Review of Nida Morphology', *Word VI*; (1950).

Miltner, V. : 'The Complex Syntactical Analysis of Hindi, *Indian Linguistics*, Vol. 23, Poona, (1962).

Nida, E. A. : *Morphology : The Descriptive Analysis of Words* (Second Edition), Ann Arbor (1949).

Potter, Simeon : *Modern Linguistics*, London (1960).

Saporta, Sol : 'On the Use of Zero in Morphemics,' '*Proceedings of the Ninth International Congress of Linguistics*. (Edited by Horace G. Lunt) Mouton and Co., The Hague (1964).

Sharma, A. : *A Basic Grammar of Modern Hindi*, Govt. of India, Delhi (1958).

Trager, G. L. & Henry Lee Smith Jr :*Outline of English Structure*, Studies in Linguistics, Occasional Paper 3, Norman, Oklahoma (1951).

Varma, Siddheshwar : 'Gender in Languages of India', *Indian Linguistics*, Turner Jubilee Volume, Part I, Poona (1958).

Voegelin, C. F. : 'Distinctive Features and Meaning Equivalence', *Language* XXIV (1948).

SELECTED BIBLIOGRAPHY

Bloch, B. & Trager G. L. : Outline of Linguistic Analysis, New Haven (1942).

Bloomfield, Leonard : Language, Motilal Banarsi Das, Delhi, (1963).

Ebeling, Carl. L. : Linguistic Units, Mouton and Co. The Hague (1960).

Gleason, H. A. : An Introduction to Descriptive Linguistics (Revised Edition), New York (1962).

Hockett, C. F. : A Course in Modern Linguistics, New York (1958).

Marchand, H. : 'Review of Nida Morphology', Word 6.2 (1950).

[illegible], V. : 'The Complex Syntactical Analysis of Hindi', Indian Linguistics, Vol. 23, Poona, (1962).

Nida, E. A. : Morphology : The Descriptive Analysis of Words (Second Edition), Ann Arbor (1949).

Potter, Simeon : Modern Linguistics, London (1957).

Saporta, Sol : 'On the Use of Zero in Morphemics', Proceedings of the Ninth International Congress of Linguists. Edited by Horace G. Lunt, Mouton and Co., The Hague (1964).

Sharma, A. : A Basic Grammar of Modern Hindi, Govt. of India, Delhi (1958).

Trager, G. L. & Henry Lee Smith, Jr. : Outline of English Structure, Studies in Linguistics, Occasional Papers 3, Norman, Oklahoma (1951).

Verma, Shivendra [illegible] : '[illegible]', Indian Linguistics, Turner Jubilee Volume, Part I, Poona (1958).

Voegelin, C. F. : 'Distinctive Features and Meaning Equivalence', Language XXIV (1948).

शब्दानुक्रमणिका

(केवल विषयगत शब्दों की अनुक्रमणिका प्रस्तुत की गयी है। शब्दों के एकवचन एवं बहुवचन रूपों को एक साथ दिया गया है।)

विशिष्ट पारिभाषिक शब्द

हिन्दी-अंग्रेजी

अ

अकर्मक	Intransitive
अक्रमक	Discontenuous
अक्षर	Syllable
अघोष	Unvoiced/Voiceless
अधिकरण	Locative
अनिश्चय	Indefinite
अन्तःकेन्द्रमुखी	Endocentric
अन्तःकेन्द्रमुखी-संरचना	Endocentric construction
अन्य पुरुष	Third Person
अपादान	Ablative/Ablation
अर्थ	1. Meaning/Sense 2. Mood
अर्थ-भेदक	Sementic differential
अर्द्ध स्वर	Semi-vowel
अल्पप्राण	Unaspirated/ Nonaspirate
अल्पविवृत्ति	Plus-Juncture
अविकारी कारक	Direct case
अव्यय	Indeclinable/ invariable/inflexible

आ

आज्ञार्थक	Imperative Mood
आघात	Accent
आदरार्थक	Honorific
आन्तरिक संधि	Internal Sandhi
आवद्ध	Bound
आवद्ध रूप	Bound Form

आवर्तक	Recurrent
इ	
इकाई	Unit
उ	
उच्चार	Utterance
उत्तम पुरुष	First Person
उपवाक्य	Clause
उपसर्ग	Prefix
ए	
एकवचन	Singular number
एकाक्षर	Monosyllable
क	
कंठ्य	Velar
करण कारक	Instrumental case
कर्तरि	Substantive
कर्ता	Agent/Subject/Nominative
कर्तृ	Agent
कर्तृवाच्य	Active Voice
कर्म	Object
कर्मकारक	Accusative
कर्मणि प्रयोग / कर्म वाच्य	Passive Voice
काकल्य	Laryngeal/Laryngal
कारक	Case
काल	Tense
कृदन्त	Participial
केन्द्रक	Nucleus
कोटि (व्याकरणिक)	Parts of speech
क्रमद्योतक	Ordinal
क्रिया	Verb
क्रिया विशेषण	Adverb

	ग	
गठन		Structure
गठनात्मक		Structural
गणनात्मक		Cardinal
गुच्छ		Cluster
गुणवाचक		Attribute
गुणात्मक		Multiplicative
	त	
तालिका		Table
	द	
दीर्घ		Long
दूरवर्ती		Remote
द्वयक्षर		Dissyllable/Disyllable
	ध	
धातु		Root/Verbal Root/Verb base/ Root base
ध्वनि		Sound
ध्वनिग्राम		Phoneme
ध्वनिग्रामिक		Phonemic
ध्वन्यात्मक		Phonetic
	न	
नामिक		Nominal
निकटवर्ती		Proximate
निजवाचक		Reflexive
निपात		Particle
निश्चय		Definite
	प	
पदग्राम		Morpheme
पदग्रामिक		Morphemic
परह्रस्वर		Coda
परप्रत्यय		Suffix
परसर्ग		Post Position

परिनिष्ठित	Standard
परिमाणवाचक	Quantifier
पश्च	Back
पुल्लिग	Masculine Gender
पूर्व प्रत्यय	Prefix
पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय	Pre derivative affix
प्रतिलंघित	Restricted
प्रत्यय	Affix
प्रश्न वाचक	Interrogative
प्रातिपदिक	Stem
प्ररणार्थक	Causative

ब

बलाघात	Stress
बहिःकेन्द्रमुखी	Exocentric
बहु अर्थक	Polysemantic
बहुवचन	Plural number
बाह्य संधि	External Sandhi

भ

भविष्य	Future
भाववाच्य	Impersonal Voice
भाषा विश्लेषण	Linguistic Analysis
भाषाशास्त्र	Linguistics
भाषाशास्त्री	Linguist
भूतकाल	Past Tense
भूतकालिक कृदन्त	Past Participle
भेदक	Distinctive

म

मध्यम पुरुष	Second Person
मध्य व्युत्पादक प्रत्यय	Derivative infix
मुक्त परिवर्तन	Free Variation
मुक्त रूप	Free-Form
मुक्त वितरण	Free-Variation

मूल	Primary
मूल रूप	Base Form
र	
रचना	Construction
रीति	Manner
रूप	Morph/Form
रूपग्राम	Morpheme
रूपग्राम शास्त्र	Morphemics
रूपग्रामिक	Morphological
रूपग्रामिक विश्लेषण	Morphological Segmentation
रूपग्रामिक शब्द	Morphological Word
रूपतालिका	Paradigm
रूपात्मक	Formal
रूपान्तर	Decline
रूपान्तरण	Declension
रूपान्तरणीय	Declinable
ल	
लघु रूप	Reduced Form.
लिंग	Gender
लोप	Disappearance/Loss/Omission
व	
वचन	Number
वर्ग	Class
वर्गबंधन	Grouping
वर्तमान काल	Present Tense
वाक्य	Sentence
वाक्यांश	Phrase
वाच्य	Voice
विकल्प	Alternant/option
विकारी कारक	Oblique Case
वितरण	Distribution
वितरित	Distributive

विधेय	Predicate
विपर्यय	Metathesis
विभक्ति	Inflexion/Inflection
विभक्तिमय	Inflectional
विशेषण	Adjective/Attribute
विशेष्य	Substantive
विस्मयादिबोधक	Interjection/Exclamation
वैभक्तिक	Inflected
वैयाकरणिक	Grammatical
वैयाकरणिक संवर्ग	Grammatical Category
व्यंजन	Consonant
व्यतिरेकी	Contrastive
व्यधिकरण	Subordinating
व्यवच्छेदक	Distinctive
व्याकरण	Grammar
व्याकरणिक	Grammatical
व्युत्पन्न	Derived
व्युत्पन्न प्रातिपदिक	Derived Stem
व्युत्पादक	Derivative

श

शब्द	Word
शब्दकोष	Lexicon/dictionary
शब्द रूप	Lexical Form
शब्द समूह	Vocabulary
शब्दावली	Glossary
शीर्ष	Peak
शून्य	Zero
श्रुति	Glide

स

संकालिक	Synchronic
संख्यावाचक	Numeral
संगति	Harmony

संज्ञा	Noun/Substantive
संघटक	Component
संघर्षी	Fricative/Spirant
संपरिवर्तक	Alternant
संयुक्त काल	Compound Tense
संयुक्त क्रिया	Compound Verb
संयोजक	Conjunctive/Connector
संरचना	Structure/Construction
संरचनात्मक	Structural
संवर्ग	Category
संवृत्त	Close
सकर्मक	Transitive
सघोष	Voiced
संधि	Sandhi
समनाम	Homonym
समानाधिकरण	Co-ordinating
समास	Compound
समीपी-संघटक	Immediate Constituent
समुच्चयबोधक	Conjunction
सम्प्रदान	Dative
सम्बन्ध कारक	Genitive Case/Relational Case
सम्बोधन	Vocative
सम्भावनार्थक	Subjunctive
सर्वनाम	Pronoun
सहपद ग्राम सहरूप ग्राम	Allomorph
सहसम्बन्ध	correlation
सहायक क्रिया	auxiliary Verb
साँचा	Pattern
सातत्यबोधक	Continuative
सार्वनामिक	Pronominal
स्तर	Layer

स्त्रीलिंग	Feminine Gender
स्थानापन्न	Substitute
स्पर्श	Stop/Plosive
स्वर	Vowel

ह

ह्रस्व	Short
ह्रस्व स्वर	Short Vowel

अंग्रेजी-हिन्दी

A

Ablation	अपादान
Ablative	अपादान कारक
Accent	आघात
Accusative	कर्म कारक
Active Voice	कर्तृवाच्य
Adjective	विशेषण
Adverb	क्रिया विशेषण
Affix	प्रत्यय
Agent	कर्ता/कर्तृ
Allomorph	सहरूपग्राम/सहपदग्राम
Alternant	विकल्प/संपरिवर्तक
Attribute	गुणवाचक/विशेषण
Auxiliary Verb	सहायक क्रिया

B

Back	पश्च
Base Form	मूलरूप
Bound	आबद्ध
Bound Form	आबद्ध रूप

C

Cardinal	गणनात्मक
Case	कारक
—, Ablative	अपादान कारक
—, accusative	कर्मकारक
—, active	कर्तृकारक
—, agential	कर्तृकारक

Case, dative	सम्प्रदान कारक
—, direct	अविकारी कारक
—, instrumental	करण कारक
—, genitive	सम्बन्ध कारक
—, locative	अधिकरण कारक
—, nominative	कर्ता कारक
—, oblique	विकारी कारक
Category	संवर्ग
Causative	प्रेरणार्थक
Class	वर्ग
Clause	उपवाक्य
Close	संवृत
Cluster	गुच्छ
Coda	परगह्वर
Compound	समास/संयुक्त
—, tense	संयुक्त काल
—, verb	संयुक्त क्रिया
Component	संघटक
Conjunction	समुच्चयबोधक
—, coordinating	समानाधिकरण समुच्चयबोधक
—, subordinating	व्यधिकरण समुच्चयबोधक
Conjunctive	संयोजक
Connector	संयोजक
Consonant	व्यंजन
Construction	रचना/संरचना
Continuative	सातत्यबोधक
Contrastive	व्यतिरेकी
Co-ordinating	समानाधिकरण
Correlation	सहसम्बंध
	D
Dative	सम्प्रदान
Declension	रूपान्तरण

Decline	रूपान्तर
Definite	निश्चय
Derivational	व्युत्पादक
Derivative	व्युत्पादक
—, infix	मध्य व्युत्पादक प्रत्यय
Derived	व्युत्पन्न
—, stem	व्युत्पन्न प्रातिपदिक
dictionary	शब्दकोश
direct case	अविकारी कारक
Disappearance	लोप
Discontinuous	अक्रमक
Dissyllable/Disyllable	द्वचक्षर
Distinctive	व्यवच्छेदक/भेदक
Distribution	वितरण

E

Endocentric	अन्तःकेन्द्रमुखी
—, construction	अन्तःकेन्द्रमुखी संरचना
Exclamation	विस्मयादिबोधक
Exocentric	वहिःकेन्द्रमुखी
—, construction	वहिःकेन्द्रमुखी संरचना
External Sandhi	बाह्य संधि

F

Feminine Gender	स्त्रीलिंग
First Person	उत्तम पुरुष
Form	रूप
Formal	रूपात्मक
Free Form	मुक्त रूप
Free variation	मुक्त परिवर्तन/मुक्त वितरण
Fricative (spirant)	संघर्षी
Future	भविष्य

G

Gender	लिंग
—, feminine	स्त्रीलिंग
—, masculine	पुल्लिंग
genitive case	सम्बंध कारक
glide	श्रुति
glossary	शब्दावली
grammar	व्याकरण
grammatical	व्याकरणिक/वैयाकरणिक
— analysis	व्याकरणिक विश्लेषण
— category	वैयाकरणिक संवर्ग
grouping	वर्गबंधन

H

Harmony	संगति
Homonym	समनाम
Honorific	आदरार्थक

I

Immediate constituent	समीपी संघटक
Imperative Mood	आज्ञार्थक
Impersonal voice	भाववाच्य
Indeclinable/Invariable	अव्यय
Indefinite	अनिश्चय
Inflected	वैभक्तिक
Inflection/Inflexion	विभक्ति
Inflectional	विभक्तिमय
Inflexible	अव्यय
Instrumental case	करण कारक
Interjection	विस्मयादिबोधक
Internal sandhi	आन्तरिक संधि
Interrogative	प्रश्नवाचक
Intranstive	अकर्मक

L

Laryngal/Laryngeal	काकल्य
Layer	स्तर
Lexical form	शब्द रूप
Lexicon	शब्दकोष
Linguist	भाषा शास्त्री
Linguistic analysis	भाषा विश्लेषण
Linguistics	भाषाशास्त्र/भाषा विज्ञान
Locative	अधिकरण
Long	दीर्घ
Loss	लोप

M

Manner	रीति
Masculine Gender	पुल्लिग
Meaning/Mood	अर्थ
Metathesis	विपर्यय
Monosyllable	एकाक्षर
Morph	रूप/पद
Morpheme	रूपग्राम/पदग्राम
Morphemic	रूपग्रामिक/पदग्रामिक
Morphemics	रूपग्रामशास्त्र
Morphological	रूपग्रामिक
— segmentation	रूपग्रामिक विश्लेषण
— word	रूपग्रामिक शब्द
Multiplicative	गुणात्मक

N

Nominal	नामिक
Nominative	कर्ता
Non-aspirate	अल्पप्राण
Noun	संज्ञा
Nucleus	केन्द्रक
Number	वचन

Numeral	संख्यावाचक
O	
Object	कर्म
Oblique case	विकारी कारक
Omission	लोप
Option	विकल्प
Ordinal	क्रमद्योतक
P	
Paradigm	रूपतालिका
Participial	कृदन्त
Par ticle	निपात
Parts of Speech	कोटि/शब्द-कोटि
Passive Voice	कर्मवाच्य/कर्मणि प्रयोग
Past	भूत
— participle	भूतकालिक कृदन्त
— tense	भूतकाल
Pattern	सांचा
Peak	शीर्ष
Ph oneme	ध्वनिग्राम
Ph onemic	ध्वनिग्रामिक
Ph onetic	ध्वन्यात्मक
Phrase	वाक्यांश
Plosive	स्पर्श
Plural Number	बहुवचन
Plus Juncture	अल्पविवृत्ति
Polysemantic	बहु अर्थक
Post position	परसर्ग
pre-derivative-affix	पूर्व व्युत्पादक प्रत्यय
Predicate	विधेय
Prefix	पूर्व प्रत्यय/उपसर्ग
Present	वर्तमान
— tense	वर्तमान काल

Primary	मूल
Pronominal	सार्वनामिक
Pronoun	सर्वनाम
Proximate	निकटवर्ती
Q	
Qualitative	गुणात्मक
Quantifier	परिमाण वाचक
R	
Recurrent	आवर्तक
Reduced Form	लघुरूप
Reflexive	निजवाचक
Relational case	सम्बंध कारक
Remote	दूरवर्ती
Restricted	प्रतिबंधित
Root/Root base	धातु
S	
Sandhi	संधि
Second Person	मध्यम पुरुष
Semantic differential	अर्थ भेदक
Semivowel	अर्द्ध स्वर
Sense	अर्थ
Sentence	वाक्य
Short	ह्रस्व
— Vowel	ह्रस्व स्वर
Singular Number	एकवचन
Sound	ध्वनि
Spirant (fricative)	संघर्षी
Standard	परिनिष्ठित
Stem	प्रातिपदिक
Stop (plosive)	स्पर्श
Stress	बलाघात
Structural	गठनात्मक/संरचनात्मक

Structure	गठन/संरचना
Subject	कर्त्ता
Subjunctive	संभावनार्थक काल
Subordinating	व्यधिकरण
Substantive	विशेष्य/संज्ञा/कर्तरि
Substitute	स्थानापन्न
Suffix	परप्रत्यय
Syllable	अक्षर
Synchronic	संकालिक

T

Table	तालिका
Tense	काल
Third Person	अन्य पुरुष
Transitive	सकर्मक

U

Unaspirated	अल्पप्राण
Unit	इकाई
Unvoiced	अघोष
Utterance	उच्चार

V

Velar	कंठ्य
Verb	क्रिया
Verb base/Verbal root	धातु
Vocative	सम्बोधन
Voice	वाच्य
Voiced	सघोष
Voiceless	अघोष
Vowel	स्वर

W

Word	शब्द

Z

Zero	शून्य

सहायक सामग्री

(क) ग्रन्थ एवं निबन्ध

(डॉ०) अम्बाप्रसाद सुमन : 'हिन्दी भाषा के 'का', 'की', 'के' और वर्तमान प्रादेशिक भाषाओं में उनके समानान्तर रूप', हिन्दुस्तानी, भाग २४; अंक ३, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद (१९६२)

'हिन्दी भाषा में लिंग विधान', गवेषणा, केन्द्रीय हिन्दी शिक्षण मंडल; आगरा, (जनवरी, १९६३)

अलेक्सेई बरखूदारोव : 'समसामयिक साहित्यिक हिन्दी में शब्द रचना' हिन्दी अनुशीलन : धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३, अंक १-२, भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग (१९६०)

(डॉ०) उदयनारायण तिवारी : 'भाषा-शास्त्र की रूपरेखा' प्रथम संस्करण, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद (संवत् २०२० वि०)

'हिन्दी भाषा का उद्‌गम और विकास' द्वितीय संस्करण, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद (संवत् २०१२ वि०)

कामताप्रसाद गुरु : 'हिन्दी व्याकरण' सातवाँ संस्करण, नागरी प्रचारिणी सभा; वाराणसी, (संवत् २०१९)

(पं०) किशोरीदास वाजपेयी : 'हिन्दी शब्दानुशासन' प्रथमावृत्ति, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (संवत् २०१४ वि०)

गार्डन एच० फेयरबैंक : 'हिन्दी में कारक' (अनूदित), हिन्दी अनुशीलन: धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३, अंक १-२, भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग (१९६०)

टी० वाई० एलिज़ावेन्कोवा : 'हिन्दी भाषा की प्रेरणार्थक क्रियाओं में असुषमत्व' (अनूदित), हिन्दी अनुशीलन : धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३, अंक १-२, भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग।

(डॉ०) बाबूराम सक्सेना : 'हिन्दी में लिंग-भेद के द्वारा सूक्ष्म अर्थ भेद का द्योतन' हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३, अंक १-२; भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग।

(डॉ०) महावीर सरन जैन : 'आधुनिक भाषाशास्त्र के सन्दर्भ में प्रत्यय', हिन्दुस्तानी, भाग २५, अंक १-४, इलाहाबाद (जनवरी-दिसम्बर, १९६४)

'हिन्दी के आकारान्त संज्ञा शब्द' : पदग्रामिक विश्लेषण एवं वर्गबन्धन' नागरी प्रचारिणी पत्रिका, मालवीय शती विशेषांक, वर्ष ६६, अंक २-३-४, वाराणसी (सम्वत् २०१८ वि०)

(डॉ०) मुरारीलाल उप्रेति : 'हिन्दी में प्रत्यय विचार', प्रथम संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (१९६४)

(डॉ०) रमेशचन्द्र जैन : 'हिन्दी समास रचना का अध्ययन', विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (१९६४)

रमेशचन्द्र महरोत्रा : 'हिन्दी भाषा के दस या ग्यारह (?) रूप', भाषा, वर्ष १, अंक ४, दिल्ली। (जून, १९६२)

(डॉ०) सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, दिल्ली (सन् १९५७)

कालिकाप्रसाद : वृहत् हिन्दी कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी (सम्वत् २०१० वि०)।

(डॉ०) हरदेव बाहरी : वृहद् अंग्रेजी-हिन्दी कोश; ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी (१९६१)।

रामचन्द्र वर्मा : मानक हिन्दी कोष, भाग १, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद (१९६३)

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	२	–औड़	–औड़्–
	१२	हथौड़–	हथौड़्–
	२३	हाथ–	हाथ्–
	२६	ओर	और
३	९	लड्की	लड़्की
६	७	आवर्त्तक	आवर्तक
७	१	लड़क्–	लड़्क्–
९	२	अ र्थं	अर्थ
	२८	वहुवचन	वहुवचन
	२९	में,	में
१०	५	विमाक्त	विमक्ति
	१२	हैं	है
	१३	ब्युत्पादक	ब्युत्पादक
१८	१०	]	}
	१६	–औ	औ–
	१७	–अव्	अव्–
		–औ–	औ–
१९	४	–दुर्	दुर्–
		–दुस्	दुस्–
२०	१५	–सत्/–सद्	सत्–/सद्–
२१	२४	अध्यारूढ्	अध्यारूढ़
२५	१४	I ०	प्र०
३१	फुटनोट	संज्ञ	संज्ञा
३२	४	सङ्–	सड़्–
३४	२१	ेबी–	धोबी
	२५	सा किलिंग	साइकिलिंग

पृष्ठ	पंक्ति		अशुद्ध	शुद्ध
३५	२९		माल्–	मल्–
३६	११		से	से निर्मित
३८	१२		{–काजर्}/कज्रोटा	{काजर्–}/कज्रौटा
	२९		–ओनी	–औनी
	३२		{नीव्}	{निव्–}
३९	१३		पाँच–	पाँच्–
	१४		सात–/आट्	सात्–/आठ्–
	१६		पाँच–/सात–/आठ	पाँच्–/सात्–/आठ्–
४०	२४		शाह–	शाह्–
४१	२५		अमानत्दार	अमानत्दार्
४२	१०		विशेषण प्रा०	संज्ञा प्रा०
	१६		{–अप्पन्}	{–अप्पन्}
४३	१६		रँग्–	रंग–
४४	३१	(प्रथम शब्द जोड़ें)	—	धातु
४६	२७	(प्रथम शब्द)	विशेषण	अव्यय
४८	१३		इतिहास–	इतिहास्–
	१४		भूगोल–	भूगोल्–
	१७		प्रकाश–	प्रकाश्–
	२४		मल्–	मैल्–
	२८		संज्ञा प्रा०	विशेषण प्रा०
४९	१९		–संज्ञा	–विशेषण एवं संज्ञा
	२१		संघिस ट	संघिस्ट
५०	१२		से	से निर्मित
५०	१७		व्युत्पन्न	व्युत्पादक
५१	१		,,	,,
	२२		बिजौरा–/बिजौरीव–	घिनौना–/घिनौनी–
५२	१६		अनुकर्नीय	अनुकर्नीय्
५३	४		{नक्कू}	{नक्क}
	२३		→सत्त}	→{सत्त}
	२४		अठ्ठ	अट्ठ
	२६		दस्/	दस्,

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५३	३०	–स्तर्	एतर्
५५	१८	गपौंड़ी	गपौड़ी
५७	१२	–ता	–त्य
	१३	अमुक्– / –ता / > अमुक्ता	अमर्– / –त्य / > अमर्त्य
५८	१०	वाँस। वाँसमती	वास्। बासमती
	१२	अक्ल्–	अक्ल–
	२५	–लृ	–लू
५९	२३	दु	दू
६०	२७	~रुप्या	~रुप
६१	१९	तेल्–	खेल्–
६३	फुटनोट १ (इ)	माडॅन	मॉडर्न
६६	१४	सोच्–	सूझ्–
	१६	दुखा–	देख्–
	२०	कह्– / पूंछ–	खो– / रँग–
	२५	खो– / जान्– / चाह्– पा– / सक्– / सोच्–	खाँस्– / छा– / चहक्– / मा– / सकुच्– / शर्मा
	२८	खो– / शर्मा–	खोज्– / सोच्–
६७	११	मूल	मूल सकर्मक
	२३	अकर्मक	अकर्मक अथवा सकर्मक
	२७	{शून्य}	{–φ}
६९	१२	छिन / छीन्	छिद् / छेद्
	१५	टँक्	टंक
	२३	फिँक्	फिक्
	२७	मिँच्	मिच्
	३०	मिँच्	मिच्
७०	२२	ओट्	औट्
७१	१	शब्दकाषीय	शब्दकोषीय
	१७	प्रतिबंधित	प्रतिबंधित है।
७२	९	गेर्	गिर
७२	१९	चित् / चिता	चुक् / चुका

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	२४	छुट् / छुटा	छू / छुआ
	२६	जन्	जान्
७७	२७	पिघलवा	पिघल्वा
७८	८	वुजा–	खुजा–
	१३	निहल्वा	नहल्वा
७९	१७	जग– / दौड़्–	जँच्–/दुह्–
८०	१८	गेर्–	गिर्–
	१९	चिन्–	चुक्–
८१	२८	ध्वन्यामक	ध्वन्यात्मक
८२	२१	अंश्	अंश
८३	२२	बनता है	बनते हैं
	२४	होती है	होते हैं
८४	६।२०	बनता है	बनते हैं
	७।२१	होती है	होते हैं
८५	फुटनोट-१	कुछ	संधि
८६	फुटनोट(ब) १	सनास	समास
	नीचे से चौथी	योगिक	यौगिक
	नीचे से तीसरी	का	की
९०	नीचे से चौथी	गिशेषण	विशेषण
९१	५	सर्वना	सर्वनाम
	१९	भागा-मूगी	भागा-भागी
९३	१७	कोटि	कोटि
९४	४	मरमक्का	मरमुक्का
९५	४	१००।	१००–
	१०।१२(अन्तिम वर्ण)	ह	ह्
	१६	सत्तरह्	सत्रह्–
	१७	अटठारह्	अठारह्
	२४	~तेत्तिस्	~तेतिस्
	२५	चौतीस्	चौँतीस्
	२९	विशेषणकर्त्ता	विश्लेषणकर्ता
९६	२४	बिला–	बिना–

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९७	६	सर्वनान	सर्वनाम
९८	नीचे से ग्यारहवीं	घर–	घर्–
१०३	२७	–प्रातिपदिक	–प्रातिपदिक–
१०४	३	य्–	य–
	६	वह	वह्
	७	व्–	व–
	८	यह	यह्
	२२	–ह	–ह्
१०७	१८	विश्लेषण कर्त्ता	विश्लेषणकर्ता
१०८	१८ (फुटनोट १ (आ)	कानता	कामता
१११	२४	न–	न्–
११३	९	चल	चल्
११८	५	, अविकारी	, विकारी
११९	२१	त्व्	त्व
१२०	६	वैयाकरणिक	व्याकरणिक
१२३	अन्तिम पंक्ति	रुपयों	रुप्यों
१२५	नीचे से तीसरी	है	हैं।
१२६	१०	वुढ़ियो	~बूढ़ियों
१३०	२१	' मैं , मैं–,	' मैं–,
	२६	ह्–	ह–
१३१	१	ह्–	ह–
१३२	७	वैयाकरणिक	व्याकरणिक
	१०	व्यवहारिक	व्यावहारिक
	२२	मै	मैं–
१३५	११	सुन्दर,	सुन्दर्
	१४	अच्छ्ा	अच्छा
१३७	८	दूसरी	दूस्री
१३९	२३	पांच्वा	पाँच्वाँ
१४१	३	+	±
१४३	३	{थ}	{थ्}

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४४	१८	छै	छह
१४८	१९	थ	थ्–
१५१	१७	विभक्ति जुड़ती है	विभक्तियाँ जुड़ती हैं (स्त्रीलिंग वहुवचन के अतिरिक्त)
	२२	ऊँ् / एँ्–	–ऊँ / –एँ
१५३	११	ऊँ्	ऊँ
	१२	हुँगा	हूँगा
१५४	६	३, २, ५	३. २. ५
१६०	१५	मैं	में
	१८	इसी लिए	इसीलिए
१६५	९	लड़के	लड़्के
	१०	लड़कों	लड़्कों
	११।१२	लड़की / लड़कियों	लड़की / लड़्कियों
	नीचे से दूसरी (फुटनोट)	ने}	{ने}
१६६	—	लड़का / लड़की	लड़्का / लड़्की
१७३	२	अथ	अर्थ
२०६	१	जन	जैन